परमपूज्य परमगुरु वैकुण्ठवासी दादाजीक स्नेहसिक्त कृपासँ आध्यात्म-
रामायण प्रभृति संस्कृत ग्रन्थक किछु ज्ञान भेल तथा मिथिला-
भाषाक यत्किञ्चित् शिक्षा भेटल, तकरे प्रसादेँ
'विभीषण शरणापन्न' तीन वर्षमे लिखल ओ से
आब प्रकाशित भए रहल अछि। हमर
हार्दिक अभिलाषा जे हम जे किछु
लिखल अछि, से मैथिल समाज
देखथि, पढ़थि, बूझथि।

एही अभिलाषाक सङ्ग ई पोथी हम श्री १०८ तारक ब्रह्म राज-
पतिक युगल चरणारविन्दमे
भक्तिपूर्वक समर्पण करैत छी।

राजलक्ष्मी

विषय-सूची

दुइ शब्द

हमरा वहुत दिनसँ इच्छा छल जे हम भगवानक शरणापन्न भक्तलोकनिक चरित्रकेँ लिखी जे मिथिलाक नारी लोकनिक हेतु उपयोगी होइन्हि, ओ लोकनि जकरा पढ़ि परमात्मा मर्यादा-पुरुषोत्तम श्री राम ओ हुनक भक्तगणक अपरिमित महिमाकेँ वास्तविक रूपेँ बूझि सकथि । साधारणतः मैथिल ललना महात्मा विभीषहुणकेँ 'घरक भेदिया लंका दाह' क रूपमे सए ह जनैत छथि । वस्तुतः विभीषण श्री रामक वड़ पैघ भक्त छलाह । राक्षस-कुल मे जन्म लैतहुँ तथा दुरात्मा रावणक भाइ होइतहुँ ओ श्री रामक नाम-महिमाक भजन-कीर्त्तनमे निरन्तर लीन रहैत छलाह । भगवान्-विरोधी-वातावरणमे महान भक्तक रूपमे ओ ओहिना अवतीर्ण भेलाह जेना पाँकमे कमल फुलाइत अछि । तेँ हम महात्मा विभीषणकेँ शरणापन्न भक्तगणमे सर्वश्रेष्ठ मानि प्रथम स्थान देल अछि ओ एहि पोथीक नाम 'विभीषण शरणापन्न' राखल अछि ।

एना तँ संस्कृत मे 'वाल्मीकि रामायण', 'आध्यात्म रामायण' प्रभृति अनेक राम-चरित-विषयक ग्रन्थ उपलब्ध अछि, हिन्दीमे तुलसी-दासक 'रामचरित मानस' बड़ प्रचलित अछि, मैथिली मे चन्दा झा ओ लाल दास सेहो रामायण लिखने छथि । परन्तु ई सब ग्रन्थ वड़ विस्तृत अछि ओ कवितामे अछि, तेँ सर्वसाधारणक हेतु विशेष उपयोगी नहि भए रहल अछि । एक तँ सब स्त्रीमे ओतेक योग्यता नहि रहैत छैन्हि जे ओहि ग्रन्थ सबकेँ पढ़ि ओकर मर्मकेँ नीक जकाँ बूझि सकथि, दोसर, घर-गृहस्थीक कार्यसँ हुनकालोकनिकेँ ओतेक अवकाश नहि भेटैत छैन्हि जे ओकरा शुरूसँ अन्त धरि धैर्यपूर्वक पढ़ि सकथि । आशा अछि जे सोझ ओ सरल मिथिला

भाषाक गद्यमे लिखल हमर ई पुस्तक हुनकालोकनिक हेतु उपयोगी सिद्ध होएतीन्हि तथा अवकाशमे एकरा पढ़ि ओलोकनि भगवान् ओ हुनक भक्तलोकनिक विषय मे यत्किञ्चित वास्तविक ज्ञान प्राप्त कए भक्तिक महत्त्वके बूझि सकतीह, सङ्गहि पुण्य, सेहो प्राप्त करतीह कारण, भगवान्क चरित्रक पारायणसँ बड़ धर्म होइत छैक।

एहि पुस्तकमे पाँच गोट मात्र शरणापन्न भक्तलोकनिक कथा के कहुना हम लिखल अछि जे एकसँ एक मनोरंजक, उपदेशप्रद एवं भक्तिभावके बढबएवला अछि तथा स्त्री-पुरुष सबहिक हेतु सुपाठ्य अछि। हम एकरा संस्कृत, हिन्दी ओ मिथिला-भाषाक अनेक ग्रन्थक सहायता सँ लिखलहुँ अछि।

हम स्वयं कोनो विदुषी नहि छी, साधारण अशिक्षित अबला छी। परन्तु परमगुरु वैकुण्ठवासी दादाजीक कृपासँ संस्कृत ओ मिथिला-भाषाक यत्किञ्चित ज्ञान भेल, तकर उपयोग हम अपन भक्ति-भावोद्रेकके व्यक्त करबाक हेतु कए रहल छी। तकरहि फल-स्वरूप एहि ग्रन्थ के लिखि सकलहुँ अछि। तेँ आदरणीय पण्डितलोकनि के एहि पुस्तकमे अनायासे अनेक त्रुटि भेटि जएतन्हि, परंच टुटल-फुटल, शुद्ध-अशुद्ध भाषामे लिखल एहि पुस्तक मध्य भगवान् श्रीरामक प्रति हमर अनन्य भक्ति-भावनाक आभास सेहो भेटतन्हि, जकरहि अभिव्यक्तिक हेतु स्वान्तः सुखाय हम एहि ग्रन्थक रचना तीन वर्षमे कएल। तेँ पण्डितलोकनिसँ हमर करबद्ध प्रार्थना जे एकरा एक भक्तक निश्छल भावोद्गार बूझि एकर त्रुटिसबहिक हेतु हमरा क्षमा करथि ओ हम जाहि उद्देश्यसँ एकरा लिखल अछि, तकरा बूझथि तथा हमर एहि क्षुद्र प्रयासके स्वीकार कए हमरा प्रोत्साहित करथि।

महालया
१९७२

श्री राजलक्ष्मी

विभीषण शरणापन्न

१

समुद्रक सन्निकट एक बड़ भव्य नगरी छल। परम रमणीय एहि नगरीमे माणिक ओ स्फटिकसँ बनल रङ्ग-विरङ्गक राज-प्रासाद सब बनल छल। लंकापुरी नामेँ प्रख्यात एहि नगरी पर राज्य कए रहल छलाह पुलस्त्यक पौत्र, विक्रमाक पुत्र दशानन रावण; दशो दिग्पाल, सूर्य, चन्द्रमा, यम, इन्द्र तथा नवग्रहादि जनिक रक्षकगण भए अपन-अपन कार्यमे सतत तत्पर रहैत छलाह। स्वर्गक अप्सरागण जतए सदिखन अपन-अपन दिव्य नृत्यसँ एहि नगरीकेँ रमणीय बनओने रहैत छलि। जन-मनोरञ्जनार्थ सौन्दर्य-साधनक निमित्त अंग-अंगमे आभूषण, जेना कानमे झूमक लागल रत्न-जड़ित कर्णफूल, सोना, करधनी आदि पहिरने ओलोकनि अतिशय मनोरम लगैत छलीह। नृत्यक काल चपल गतिक कारणेँ ओहि आभूषण सबसँ मधुर शब्द ध्वनित करैत, हँसलासँ विद्युतक शङ्का उपस्थित करैत इन्द्रक परी ककर ध्यान ने अपना दिसि आकृष्ट करैत छलीह! एहि रूपेँ तिलोत्तमा, उर्वशी, मेनका प्रभृतिसँ सुशोभित रावणक राजसभा मनोरञ्जनक पैघ केन्द्र-स्थल बनि गेल छल। नागकन्या सुलोचनाक पति इन्द्रजित यथा स्थान मूँगाक बनल सिंहासन पर बैसल छलाह, आओरो मचिया सभ लागल छलैक जाहि पर लंकेश रावणक बेटा

सब बैसल छलथिन्ह। आठो मन्त्री स्वर्ण-निर्मित पीठिका पर यथायोग्य स्थान पर विराजमान छलाह। एहिसँ अतिरिक्त दुइ गोट आओर सिंहासन छल—एकटा श्वेत मोती ओ पोखराजसँ खचित सुवर्णक छल, दोसर छल किछु छोट-छोट माणिक्य जड़ल सुवर्णक। एहन सुशोभित दशाननक दरबारमे वन्दीजन मदमत्त भेल सुरा-सुन्दरीक वर्णन करैत लंकेशक जयघोष कए रहल छल; गन्धर्व, किन्नर, पन्नग आदि त्रसित भेल गुणगान कए रहल छलाह। दशमुख रावण, जनिका बीसटा आँखि, दसटा जीभ, बीसटा कान, दसटा नाक तथा बीस गोट हाथ छलैन्हि, रत्नादिसँ बनल मुकुट, चकुठा, मठ्ठा तथा रत्न-पन्नासँ बनल हार पहिरने रत्नादिसँ बनल सिंहासन पर विराजमान छलाह। नाना प्रकारक वाद्य बाजि रहल छल, गुलाब, अगरवत्ती आदिक सुगन्धिसँ सम्पूर्ण वातावरण महमह कए रहल छल। विभिन्न प्रकारक सुवर्ण पात्रक सुराही मे उत्तम-उत्तम वारुणी लेने अप्सरागण लंकेशक ठोढ़मे सटओने आनन्द-विभोर भेल अपनाकेँ धन्य बुझैत छलि।

दरबार लगले छल, तहिखन एक गोट दूत उपस्थित भए महाप्रतापी लंकेशसँ निवेदन कएल—"प्रभो! समुद्रक ओहि पार दशरथक दूहू तपस्वी-पुत्र श्रीराम ओ लक्ष्मण पहुँचि गेल छथि; सुग्रीव, अङ्गद, जाम्बवान, हनुमान, नल-नील आदि प्रधान-प्रधान योद्धा अगणित वानर-भालुक विशाल सेनाक

संग ओतए अपनेकें तृणवत बुझैत ललकारि रहल छथि।"
से सुनितहिँ रावण अत्यन्त उत्तेजित भए उठलाह, हुनक बीसो बाँहि फड़कि उठलैन्हि, बीसो आँखिसँ क्रोधाग्नि बरसए लगलैन्हि, क्रोधान्ध भेल ओ बाजि उठलाह—"जकरा माए ओ बाप चौदह वर्षक हेतु वनवास दए देलकैक, जकर स्त्रीकें लंकाक अशोकवाटिकामे बान्हि भूड़ राक्षसीक बीच रखने छी, ओहि दूनू तपस्वीक एतेकटा साहस ? जगाए दहुन्ह गए कुम्भकरणकें, जे ब्रह्मासँ छओ मास सुतबाक ओ छओ मास जगबाक वरदान पओने छथि। मुदा हुनका उठबाक समय एखन नहि भेलैन्हि अछि, तें हुनका मदिरा पिआए दहुन्ह, देह पर पहलवानकें चढ़ाए दहुन्ह, कान लग दुन्दुभी बजबहुन्ह, जाहिसँ उठि बैसथि। उठितहिँ हुनका कहुन्ह जे चतुरङ्ग सेना सजाबथि। हमही तीनू लोक पर एकच्छत्र शासन करैत छी, भगवान् विष्णु तँ लक्ष्मीक सङ्ग क्षीर-सागरमे सूतल छथि। हमर प्रतापें तीनू लोक तपैत अछि; इन्द्र, वरुण, सूर्य ओ चन्द्र हमरा डरें थर-थर कपैत छथि, तखन हमरा दूटा मनुष्य तथा बानर-भालुक समूह की कए सकैत अछि ? ई तँ हमर खाद्य थिक ! दोसर हम छी अवध्य ! हमरालोकनि तीनू भाइ तपस्या करैत रही, दस हजार वर्ष बीति गेल तँ चतुर्मुख ब्राह्मण प्रसन्न भए वरदान देबाक हेतु प्रकट भेलाह। हम अमरताक वरदान माँगल, मुदा हमरा अहङ्कारी बुझि ओ से बर नहि देलैन्हि, तखन हम कहलिऐन्हि–'हम अपन वैमात्रेय

भाइ कुबेर विष्णु-इन्द्र तथा यक्ष-किन्नर एवं स्वर्ग, ओ पातालक लोकसँ अवध्य रही।' ब्रह्मा 'एवमस्तु' कहि वर-दान दए देलैन्हि। विभीषणमे हरि-भक्तिक लक्षण देखि अमरत्वक एवं कुम्भकरणकेँ छओ मास सुतबाक ओ छओ मास जगबाक वरदान देने गेलथिन्ह।"

एहि प्रकारेँ मूढ़ मदान्ध दशानन अपन अभिमानक प्रलाप करैत गेलाह, मुदा ओ अहंकारी विधिक विधानसँ अपरिचित छल। ओ तं छल शारदाक महिमा, जनिक आज्ञाक बिना तृण मात्रो स्थानान्तरित नहि भए सकैत अछि, तनिकासँ वैर मोल लए ओ मूर्ख कोना अमरत्वकेँ प्राप्त करितए?

आज्ञा पाबि लंकेशक अनुचर कुम्भकरणकेँ जगएबाक निमित्त विदा भेल। उठबाक समय नहि पूरल छलैन्हि, तेँ ओ नीनमे भेर छलाह। रावणक अनुचरकेँ हुनका जगए-बामे बड़ आयास करए पड़लैन्हि, घैलाक घैला दारू, मीनक मीन मांस एवं ढेरक ढेर वस्त्र ओ आभूषणक प्रबन्धक पश्चात् कुम्भकरण कहुना उठलाह। ओ नीक वस्त्र पहिरि ओ उत्तम उत्तम अलङ्कारसँ अलंकृत भए रावणक दरबारमे उपस्थित भेलाह। रावण संकेतसँ बैसबाक हेतु कहलथिन्ह, ओ रत्न-जड़ित सुवर्ण-सिंहासन पर बैसि गेलाह। तत्पश्चात् माथमे चानन लगओने, श्वेत वस्त्र पहिरने, सुगन्धित फूलक माला ओ उत्तम मोतीक हार गरामे पहिरने नित्य नियमानुसार

जे कीर्तन करैत छलाह, से विभीषण रावणक राज-सभामे उपस्थित भेलाह। रावण हिनकहु संकेत कए बैसबाक हेतु कइल तँ ओ सुवर्णादि-निर्मित छोट सिंहासन पर बैसि गेलाह।

रावण किछु चिन्तित छलाह, किन्तु अपन चिन्ताकें नुकबैत ओ कुम्भकरणकें रामक सङ्ग शत्रुताक वृतान्त कहए लगलथिन्ह—"वीर कुम्भकरण! अहाँकें असमय उठएबाक कारण हम कहैत छी। शूर्पणखा त्रिशिराषड़ दूषणाक सङ्ग पञ्चवटीक रक्षा करैत छलीह, तकरा तपस्वी रामक कहला पर लक्ष्मण नाक-कान काटि लंकाकें विदा कए देलैन्हि। एतबहि नहि, भरल सभामे हमरा तेजहीन कहि भर्त्सना कएलैन्हि। तखन हम मामा मारीच लग गेलहुँ, हुनकासँ सहायताक याचना कएल, तखन ओ कहलनि—'राजाकें जखन अपन कार्य रहैत छैन्हि तँ एहिना मधुर वचन कहैत छथि!' ई उलहन दए ओ रामक वीरताक गुणगान करए लगलाह—'विश्वामित्रक यज्ञक रक्षा राम-लक्ष्मण करैत छलथिन्ह, तखन यज्ञकें भग्न करबाक हेतु रुधिर-मांसक हम वर्षा करए लगलहुँ। ताहिपर राम-लक्ष्मण तेहन ने अक्षयबाण हमरा पर चलओलैन्हि जे हम सए कोश दूर जा खसलहुँ। तहिआ हम निश्चय कए लेल जे हम हुनक भीरिकें नहि जाएब। अहूँकें कहैत छी जे यदि अहाँ राक्षसक कल्याण चाहैत छी, तँ एहन कार्य नहि करू जाहिसँ समस्त

लोककेँ ओ राक्षससँ शून्य कए देथि।' हुनकर सहायता करबाक इच्छा नहि देखि हम हुनका डेराए-धमकाए कार्य-साधन कएल। मारीच स्वर्ण-मृग बनि रामकेँ पञ्चवटीसँ बहुतो दूर लए गेलथिन्ह, मारीच द्वारा बाजल 'हा लक्ष्मण हा सीते' सूनि लक्ष्मणकेँ सीता रामक अन्वेषणार्थ पठाए देल-थिन्ह, मुदा हुनक चारू कात ओ लक्ष्मण-रेखा खीचि गेलाह। तखन हम साधुक भेष धारण कए सीतासँ भीख माँगए गेलहुँ। ओ रेखा एतेक प्रज्वलित भए रहल छलैक जे ओकरा टपिकेँ जाएब असम्भव भए गेल। तखन कहुना परतारि भीख देबाक व्याजेँ सीताकेँ लक्ष्मण-रेखाक बहार आबए कह-लिऐन्हि ओ हुनका हरण कए अशोक - वाटिकामे रखने छिऐन्हि। हम हुनका सहलहिमे रखितिऐन्हि, मुदा अहाँकेँ बुझल अछि जे नारायणकेँ पति रूपमे प्राप्त करबाक हेतु तपस्या करैत ब्रह्मर्षि-कन्या वेदवतीक तपोभंग हम कए देने छलिऐन्हि, तखनहि ओ शाप दए देने छलीह जे जखने हम कोनहु स्त्री पर बलात्कार करब तखने हमर मस्तक सहस्र खण्ड भए भस्म भए जाएत। एही हेतुएँ विदेह-नन्दिनी सीताकेँ हम अशोक-वाटिकामे रखने छिऐन्हि। अहाँ निद्रामे मग्न छलहुँ, तेँ अहाँक परोक्षमे ई घटना सब घटल। आब राम-लक्ष्मण लंका पर आक्रमण करबाक हेतु आबि रहल छथि। आब तेहन प्रबन्ध करू जे ओ दूनू तपस्वीकेँ जीति सकी।"

कुम्भकरण रावणक द्वारा सबटा विषय ज्ञात कए बज-

लाह—"महाराज! अपने छल-पूर्वक पर-स्त्रीक हरण कए घोर पापक भागी भेलहुँ अछि। ई पाप-कर्म करबाक पूर्वहि हमरालोकनिसँ परामर्श उचित छल। जगदम्बा-स्वरूपा जानकीक हरण कए अपने बड़ अनुचित कार्य कएलहुँ अछि। तथापि हम युद्ध करब ओ अपनेक शत्रुसबहिक संहार करब। हम पर्वतक समान विशाल एवं तीख दाँतसँ युक्त एहन शरीर धारण करब ओ महान परिघ हाथ मे लए समर-भूमिमे लड़ैत जखन गर्जन करब, तखन देवराज इन्द्र सेहो भयभीत भए जएताह। जखन राम एक बाणसँ मारि दोसर बाण चलबए लगताह, ताही बीचमे हम हुनक शोणित पीबि लेबैन्हि। हम लक्ष्मण-सहित दशरथनन्दन रामकेँ वध कए अपनेक हेतु विजय सुलभ करएबाक यथासाध्य प्रयत्न करब। तेँ अपने आनन्दपूर्वक विहार करू, उत्तम उत्तम वारुणीक पान करू। जखन हम रामकेँ यमलोक पठाए देबैन्हि, तखन सीता सहजहिँ अपनेक अधीन भए जएतीह।"

विभीषण एखन धरि चुप छलाह। कुम्भकरणक गर्वोक्ति सूनि हुनका नहि रहल गेलैन्हि। ओ विनीत शब्देँ रावणकेँ सार्थक हितकारी वचन कहए लगलाह—"राजन्! जहिआसँ मातृस्वरूपा सीताक हरण कएल अछि, तहिएसँ लंका क्रमिक श्रीहत भए रहल अछि। सीता नामधारी विशाल महान सर्प अपनेक गरामे के बान्हि देलक अछि? हिनक हृदय-भाग ओहि सर्पक शरीर थिकैक, चिन्ता विष

थिकैक, सुन्दर मुसको ओहि सर्पक तीख दाँत थिकैक ओ प्रत्येक हाथक पाँचटा आँगुरी एहि सर्पक पाँचटा शिर थिकैक। दाँत ओ नह जनिक आयुध थिकैन्हि, एहन पर्वत-शिखरक समान विशाल वानर जाबत धरि आक्रमण करैत अछि, ताहिसँ पूर्वहि अपना मिथिलेशकुमारी सीताकेँ दशरथनन्दन रामकेँ घुराए दिऔन्ह; श्री रामचन्द्रक चलाओल वायु जकाँ वेगशाली ओ वज्र-तुल्य वाणसँ जावत राक्षस शिरोमणि-लोकनिक मस्तक कटि-कटि खसैत अछि, ताहिसँ पूर्वहि अपने श्रीरामक सेवामे सीताकेँ समर्पित कए दिऔन्ह। राजन्! कुम्भकरण, इन्द्रजित, महापार्श्व, महोदर, निकुम्भ, कुम्भ ओ अतिकाय समराङ्गनमे श्रीरामसँ जीति नहि सकताह। यदि सूर्य ओ वायु अपनेक रक्षा करथि, इन्द्र अथवा यम अपन अङ्कमे अपनेकेँ नुका लेथि, अपने आकाश-अथवा पातालमे भागि जाइ, तथापि अपने रामक हाथसँ जीवित नहि बाँचि सकैत छी।''

विभीषणक उपदेश सूनि प्रहस्त बाजल—''हम देवतासँ अथवा दानवसँ नहि डेराइत छी, हमरासब युद्धमे यक्ष-गन्धर्व, पैघ पैघ नाग, पक्षी ओ सर्पसँ भयभीत नहि होइत छी, फेर समराङ्गणमे रामसँ हमरालोकनिकेँ किएक भय होएत?''

विभीषण राजा रावणक वास्तविक हितचिन्तक छलाह। अतः प्रहस्तक अहितकर वचन सूनि ओ कहए लगलाह—

"प्रहस्त! महाराज रावण, कुम्भकरण प्रभृति रामक विषयमे जे बजलाह अछि, से सत्य नहि थिक; जेना बिना जहाजक केओ महासागर पार नहि कए सकैत अछि, तहिना हमरासँ, अहाँसँ अथवा समस्त राक्षससँ श्रीरामक वध-सम्भव नहि अछि। प्रहस्त! एखन धरि श्रीरामक चलाओल तीक्ष्ण बाण अहाँक शरीरकेँ विदीर्ण नहि कएलक अछि, तेँ अहाँ एतेक बढ़ि-चढ़िकेँ बजैत छी। महाराज रावण सातो व्यसनक वशीभूत छथि, सोचि-विचारि कार्य नहि करैत छथि, स्वभावहुमे कठोर छथि तथा अहाँक समान मित्रसँ मन्त्रणा कए राक्षसक सत्यानाश करए चाहैत छथि। वास्तविक मन्त्री ओएह थिक जे अपन ओ शत्रु-पक्षक बल-पराक्रमकेँ बुझि तथा दूहू पक्षक स्थिति, हानि ओ वृद्धिकेँ अपन बुद्धिसँ विचारि स्वामीकेँ उचित ओ हितकर परामर्श दैत अछि।" प्रहस्तकेँ ई कहि ओ नारद द्वारा वर्णित रामावतारक उद्देश्यक व्याख्या कएल, तत्पश्चात् विभीषण रावणकेँ कहलथिन्ह—"राजन्! नारायण स्वयं राम छथि, तेँ जगज्जननी सीताकेँ घुराए दिऐन्हि।"

विभीषण वृहस्पतिक समान बुद्धिमान छलाह। हुनक उचित वचन राक्षस यूथपतिक प्रधान महाकाय इन्द्रजितकेँ बड़ अप्रिय लगलैन्हि, ओ बजलाह—"छोटका काकाजी! अहाँ बड़ भयभीत भेल जकाँ निरर्थक बात कहि रहल छी? एहि कुलमे जे जन्म नहि लेने होएत, सेहो एहन बात नहि

चाजत ने करत ?" फेर ओ रावणसँ कहलैन्हि—"पिताजी! हमरालोकनिक एहि राक्षसकुलमे एकमात्र छोटके काकाजी बल, वीर्य, शौर्य ओ तेजसँ रहित छथि। ओ दूहू मानव-राजकुमारकेँ हमरालोकनिक एकटा छोटको राक्षस मारि सकैत अछि, फेर काकाजी हमरा लोकनिकेँ किएक डेराए रहल छथि? हम तीनू लोकक स्वामी देवराज इन्द्रकेँ स्वर्गसँ पकड़ि पृथिवी पर लए अनलिऐन्हि, पातालपुरीकेँ जीति नागकन्या सुलोचनासँ विवाह कए लेल। जे देवता लोकनिक दर्प दलन कए सकैत अछि, बड़का दैत्योकेँ शोकमग्न कए सकैत अछि, जे उत्तम बल-पराक्रमसँ सम्पन्न अछि, से हमरा सन वीर मनुष्य जातिक दुइ साधारण राजकुमारकेँ किएक नहि परास्त कए सकैत अछि ?"

इन्द्रतुल्य तेजस्वी पराक्रमी दुर्जय वीर इन्द्रजितक ई गप्प सूनि शस्त्रधारीलोकनिमे श्रेष्ठ विभीषण हुनका अर्थ-गम्भीर वचन कहल—"तात! एखन अहाँ बालक छी, अहाँक बुद्धि परिपक्व नहि अछि, अहाँक मनमे कर्तव्याकर्तव्यक यथार्थ निश्चय नहि भेल अछि। अतः अहूँ अपनहि विनाशक हेतु निरर्थक बात क'ह गेलहुँ। इन्द्रजित! अहाँ रावणक पुत्र भइओकेँ उपरहिसँ हुनक मित्र छिऐन्हि। एही कारणेँ अहाँ श्रीरघुनाथजीक द्वारा राक्षस-राजक विनाशक बात सूनि मोह-वश हुनक 'हँ' सँ 'हँ' मिलबैत छी। इन्द्रजित! अहाँ अविवेकी छी, विनयक अहाँ मे छूति नहि अछि, अहाँक स्वभाव बड़ उग्र

ओ बुद्धि बड़ थोड़ अछि। अहाँ अत्यन्त दुर्बुद्धि, दुरात्मा ओ मूर्ख छी। तेँ बच्चा जकाँ असार गप्प बजैत छी। भगवान् रामक द्वारा युद्धमे शत्रु पर छोड़ल गेल तेजस्वी बाण साक्षात् ब्रह्मदण्डक समान प्रकाशित होइत अछि, कालक समान बुझि पड़ैत अछि तथा यमदण्डक समान भयंकर होइत अछि; भला, एकरा के सहि सकैत अछि ?'' इन्द्रजितकेँ एहि प्रकारेँ फटकारि ओ रावणसँ कहलैन्हि—"राजन् ! हमरासब धन, रत्न, सुन्दर आभूषण, दिव्य वस्त्र, विचित्र मणि ओ देवी सीताकेँ रामक सेवामे समर्पित कए शोक-रहित भए एहि नगरमे निवास कए सकैत छी !''

रावणक माथ पर काल अपन माया-जाल पसारि देने छल, तेँ ओ विभीषणक अर्थसँ युक्त हितकर गप्प सूनि कठोर वाणीमे बजलाह—"विभीषण ! आइ जे हमर समग्र संसारमे सम्मान अछि, आइ जे हम ऐश्वर्यवान, कुलीन ओ शत्रुसबक शिर पर स्थित छी, से अहाँकेँ अभीष्ट नहि अछि। तीनू लोकमे सजातीय बन्धुक जे स्वभाव होइत छैक, से हम जनैत छी। अपन जातिक लोक अपनहि जातिक लोककेँ आपत्तिमे देखि हर्ष मनबैत अछि। शत्रु ओ विषधर सर्पक सङ्ग रहए पड़ए तँ रहि ली, मुदा जे मित्र कहाइओकेँ शत्रुक सेवा करए, तकरा सङ्ग कथमपि नहि रहबाक थिक। कुलकलङ्क निशाचर ! अहाँकेँ धिक्कार अछि जे अहाँ वारंवार शत्रुक पक्ष लए हमरा सबकेँ डेराए-धमकाए रामक शरणागत होएबाक हेतु गुरु

जकाँ उपदेश दए रहल छी। यदि अहाँकेँ छोड़ि केओ आन ई कथा कहने रहितए तँ एखनहि ओकर प्राण लए लेने रहितिऐक।" ई कहि रावण अपन वज्रक समान लातसँ विभीषणकेँ आघात कएल।

न्यायानुकूल कथा कहलहुँ पर जखन रावण विभीषणकेँ एहन कठोर कथा कहि लात मारल तँ ओ हाथमे गदा लए अन्य चारि निशाचर मन्त्रीक सङ्ग तखनहि कूदि आकाशमे चल गेलाह ओ ओतहिसँ कुपित भेल राक्षसराज रावणकेँ कहलैन्हि—"राजन्! अपनेक बुद्धि भ्रष्ट भए गेल अछि, अपने धर्मक मार्ग पर नहि छी। अपने जेठ भाइ छी, पिताक समान आदरणीय छी, तेँ जे कहए चाही से कहि लिअ, मुदा अपनेक एनेक कठोर वचन नहि सहि सकब। दशानन! जे अजितेन्द्रिय पुरुष कालक वशीभूत भए जाइत छथि से हितक कामनासँ कहल गेल नीतियुक्त वचनहुकेँ ग्रहण नहि करैत छथि। राजन्! प्रियगर मीठ-मीठ बात कहनिहार व्यक्ति सुगमतासँ भेटि सकैत अछि, मुदा सुनबामे अप्रिय ओ परिणाममे हितकर गप्प कहनिहार ओ सुननिहार संसारमे दुर्लभ छथि। अपने संसारक समस्त जीवक संहारक काल-पाशमे बद्ध भए चुकल छी ओ ओहि घरक समान नष्ट भए रहल छी, जाहिमे आगि लागि गेल हो। एहन दशामे अपनेकेँ देखि, हमरा नहि रहल गेल, तेँ हितकर सम्मति देलहुँ। कालक वशीभूत भेला पर पैघ-पैघ शूर-वीर, बलवान ओ अस्त्रवेत्ता

बालुक भीत जकाँ नष्ट भए जाइत छथि। श्रीरामक सुवर्ण-भूषित अग्निक समान तेजस्वी ओ तीक्ष्ण बाणसँ अहाँक मृत्यु नहि देखए चाहैत छलहुँ, तेँ बुझएबाक चेष्टा कएने छलहुँ। राक्षसराज! हम अपनेक हितैषी छी, अंतः जे किछु हम कहलहुँ, से यदि नीक नहि लागल तँ क्षमा करू। आब अपन ओ समग्र राक्षसक सङ्ग लङ्काक रक्षा करू। अपनेक कल्याण हो। आब हम चललहुँ, तँ हमर बिना अपने सुखी भए जाउ।" ई कहि विभीषण रामक शरणमे विदा भए गेलाह।

रावणकेँ उचित ओ कठोर वचन कहि विभीषण ओत दुइए क्षणमे पहुँचि गेलाह जतए लक्ष्मण-सहित राम ससैन्य विराजमान छलाह। ओ सुमेरु पर्वतक समान दीर्घ ओ विशाल छलाह,. अन्तरिक्षमे बिजली जकाँ चमकि रहल छलाह। हुनका सङ्ग जे चारि गोट अनुचर छलैन्हि, सेहो बड़ पराक्रम प्रकट करए बला। ओ सब कवच पहिरि अस्त्र-शस्त्र धारण कएने उत्तम-उत्तम आभूषणसँ विभूषित छल। वीर विभीषण मेघ ओ पर्वतक समान बुझि पड़ैत छलाह तथा इन्द्रक समान तेजस्वी, उत्तम आयुध-धारी एवं दिव्य आभूषणसँ अलंकृत छलाह।

एहन विभीषणकेँ चारि गोट राक्षसक सङ्ग अबैत देखि बुद्धिमान वीर वानरराज सुग्रीव बानरसबहिक सङ्ग विचार कए हनुमान आदिसँ कहलैन्हि—"देखू, चारि गोट निशाचरक

सङ्ग ई राक्षस हमरा सबकें मारबाक हेतु आबि रहल अछि।" ई सुनि श्रेष्ठ वानर समुदाय साल वृक्ष ओ पर्वतक शिला उठा कए बाजल—"राजन्! हमरा सबकें एहि दुरात्माक वध करबाक आज्ञा दिअ, जाहिसँ ई सब निष्प्राण भए पृथिवी पर खसए।" एहि प्रकारें तर्क-वितर्क भए रहल छल, ताबत विभीषण समुद्र-तटपर आबि आकाशमे ठाढ़ भए गेलाह तथा सुग्रीवकें उच्च स्वरमे कहलैन्हि—"दुराचारी राक्षसनृपक हम छोट भाइ थिकहुँ, हमर नाम विभीषण थिक। रावण जटायुकें मारि सीताक अपहरण कए लेलैन्हि तथा दीन ओ असहायसीताकें राक्षसीलोकनिक पहरामे रोकि रखने छथि। हम हुनका युक्ति-संगत वचन कहि वारंवार बुझाओल जे सीताकें आदरपूर्वक श्री रामचन्द्रक सेवामे घुरा देल जाइन्ह, मुदा कालसँ प्रेरित भेल हमर जेठ भाइ हमर बात नहि मानलैन्हि। एतबहि नहि, ओ हमरा कठोर कथा कहि कहि घोर अपमानित सेहो कएलैन्हि। अतः हम स्त्री ओ पुत्रकें छोड़ि श्री रघुनाथजीक शरणमे आएल छी। हे कपि-राज! समस्त लोकक आश्रय-स्थल श्री रामकें हमर आग-मनक सूचना दिऔन्ह आ कहिऔन्ह जे शरणार्थी विभीषण सेवामे उपस्थित छथि।"

विभीषणक वचन सूनि लगले सुग्रीव भगवान राम लग जाए लक्ष्मणक उपस्थितिमे आवेशपूर्वक बजलाह—"हमरा-लोकनिक कोनो शत्रु, जे राक्षसहोएबाक कारणें पहिने रावणक

सेनामे सम्मिलित छल, आब अकस्मात् हमरालोकनिक सेनामे प्रवेश करबाक निमित्त आएल अछि, जे अवसर पाबि हमरा सबहुकेँ मारि देत। शत्रुनिकन्दन रघुनन्दन! कार्या-कार्य पर विचारमे, सेनाक व्यूह-रचनामे, नीति-युक्त उपायक प्रयोगमे एवं गुप्तचरक नियुक्तिमे सतत सावधान रहबाक चाही, एहिसँ अपनेक कल्याण होएत। राक्षस मायावी होइत अछि, तेँ एकरा पर कथमपि विश्वास कर्त्तव्य नहि थिक। सम्भवतः ई रावणक गुप्तचर हो ओ हमरालोकनिमे विभेद उत्पन्न करबाक हेतु आएल हो। ई अपनाकेँ रावणक भाइ विभीषण कहैत अछि ओ अपनेक शरणमे आएल अछि। हमरा जनितेँ ई रावणक पठाओल हमरालोकनिक भेद लेबए आएल अछि, तेँ एकरा चारू राक्षसक सङ्ग वन्दी बनाए वध कए देबाक चाही।"

सुग्रीवक वचन सूनि महाबली श्रीराम अपन लग बैसल हनुमान आदि वानरसँ बजलाह—"कपिगण! वानरराज सुग्रीव रावणक छोट भाइ विभीषणक प्रसङ्ग बड़ युक्ति-सङ्गत विचार कहल अछि, से अहूँ सब सुनवे कएल अछि। तेँ अहूँ लोकनि एहि प्रसंग अपन-अपन विचार दिअ।" ई सूनि श्री-रामक हितेच्छुक वानर सब उत्साहित भए अपन-अपन मत प्रकट करए लागल। सबसँ पहिने बुद्धिमान अङ्गद विभीषणक परीक्षा लेबाक विचार व्यक्त करैत बाजल—"भगवान्! विभी-षण शत्रुक ओहि ठामसँ आएल अछि तेँ एकरा पर शङ्का कर-

बाक चाही, सहसा विश्वासपात्र बना लेब उचित नहि।" चतुर जाम्बवान शास्त्रीय बुद्धिसँ विचार कए गुणयुक्त ओ दोष-रहित वचन कहलैन्हि—"विभीषण हमरालोकनिक परम शत्रु पापी रावण लगसँ आबि रहल अछि, एखन ने तँ ई स्थाने ओकर आगमनक छलैक आ' ने समये छलैक। तेँ एकरासँ सशङ्क रहबाक थिक।" एहिना अनेक वानर अनेक प्रकारक विचार श्री रामकेँ देल। अन्तमे सचिव-श्रेष्ठ एवं सम्पूर्ण शास्त्रक ज्ञान-जनित संस्कारसँ युक्त हनुमानजी श्रुति-मधुर, सार्थक, सुन्दर ओ संक्षिप्त वचनमे पूर्व-व्यक्त विचारक खण्डन करैत बजलाह—"प्रभो! अपने बुद्धिमान सबहुमे उत्तम, सामर्थ्यशाली ओ वक्तागणमे श्रेष्ठ थिकहुँ, तेँ एकरासँ स्वयं गप्प कए ओकर वचनक स्वर-भेदसँ स्वयं निश्चय कए लेल जाओ जे ओ साधु-भावसँ आएल अछि अथवा असाधु-भावसँ। एकर कथनमे दुर्भाव लक्षित नहि होइत छैक, मुख प्रसन्न छैक। अतः हमरा एकरा पर सन्देह नहि अछि। दुष्ट पुरुष कखनहुँ निःशङ्क ओ स्व-स्थचित्त भए सम्मुख नहि आबि सकैत अछि, ओ कतबहु अपन अन्तर्भाव नुकएबाक चेष्टा किएक ने करए, से नुकाएल नहि जाए सकैत अछि। बाह्य आकार आन्तरिक भावकेँ बलात् प्रकट कए दैत अछि। एकर आगमन देश-कालक अनुरूप भेल अछि,—अपनेक उद्योग, रावणक मिथ्याचार वालीक वध एवं सुग्रीवक राज्याभिषेकक समाचार सूनि अपनेक

शरणमे आएल अछि। तेँ शरणागत-वत्सल दयालु श्रीराम! विभीषणकेँ शरण देब उचित बुझि पड़ैत अछि।"

पवनसुत हनुमानक अपन मनोनुकूल कथा सूनि श्री रामक चित्त प्रसन्न भए गेल। ओ सबकेँ सम्बोधन करैत कहलैन्हि—"मित्रगण! आब हमहु किछु कहए चाहैत छी, से सुनू। मित्र-भावेँ जे हमर शरणागत भेल अछि, तकरा हम कोना त्यागि सकैत छी? भए सकैत अछि जे ओकरामे किछु दोष हो, परन्तु दोषीकेँ आश्रय देब सेहो सत्पुरुषक हेतु कर्त्तव्यक कोटिमे अबैत अछि!" वानरराज सुग्रीव रामक गूढ़ वचन सूनि ओकरा पर सूक्ष्म रीतिएँ विचारि निवेदन कएल—"प्रभो! ई दुष्ट थिक वा अदुष्ट, से विचारणीय नहि, मुदा थिक तँ निशाचरे। जे संकटापन्न अपन भाइकेँ छोड़ि चल आएल तकरा दोसराकेँ त्याग करबामे कतबा समय लगतैक?" सुग्रीवक कथन सूनि सत्पराक्रमी रघुनाथजी पहिने मन्द-मन्द हँसए लगलाह, पश्चात् लक्ष्मणकेँ कहलथिन्ह—"सुमित्रा-नन्दन! सुग्रीव जेहन कथा कहलैन्हि, तेहन कथा केओ शास्त्रसबहिक अध्ययन करबाक पश्चातहि कहि सकैत अछि।" पुनः ओ सुग्रीवकेँ कहल—"सुग्रीव! अहाँ अपन भाइकेँ त्याग करबाक गप्प कहल अछि, ताहिमे हमरा सूक्ष्म अर्थ प्रतीत भए रहल अछि—राजालोकनिकेँ दुइ प्रकारक छिद्र होइत छैन्हि, एक तँ ओही कुलमे उत्पन्न अपन जाति-भाइ, दोसर, पड़ोसी देशक निवासी। संकट पड़लापर ओ अपन

विरोधी राजा तथा राजपुत्र पर प्रहार कए बैसैत छथि। हमरा बूझि पड़ैत अछि जे विभीषण अपन जाति-भाइक भयसँ शरणागत भेल छथि। रावण विभीषणकेँ शङ्काक दृष्टिसँ देखए लगलाह, अतः ई अपन रक्षाक हेतु एतए आएल छथि। तेँ हिनका पर अपन भाइबन्धुक त्याग करबाक दोष नहि लगएबाक चाही। ई हमरा लोकनिक कुटुम्बी नहि थिकाह, ओ एहि ठाम राज्यक अभिलाषासँ आएल छथि। तेँ ने तँ ई हमरालोकनिकेँ त्यागि सकैत छथि आ ने हानि कए सकैत छथि। अतः विभीषणकेँ अपन पक्षमे कए लेबाक चाही।" परन्तु रामक एतबा कहलहुँ पर सुग्रीव सन्तुष्ट नहि भेलाह, हुनका विभीषणक प्रति शङ्का बनले रहलैन्हि। तखन राम फेर बुझबैत हुनका कहए लगलथिन्ह—"वानरराज ! विभीषण दुष्ट होथि वा साधु, हमर थोड़सँ थोड़ अहित नहि कए सकैत छथि। यदि हम चाही तेँ अपन अँगुरीक अग्र भागसँ समस्त पिशाच, दानव, यक्ष ओ राक्षसकेँ मारि सकैत छी। पूर्व कालमे कण्व मुनिक सत्यवादी पुत्र कण्डु नीति वचन कहने छलाह जे यदि शत्रुओ दीन भावेँ हाथ जोड़ि दयाक याचना करए तँ ओकरा पर प्रहार नहि करबाक चाही। यदि सरणार्थी पुरुष संरक्षण नहि पाबि रक्षककेँ देखैत-देखैत नष्ट भए जाए तँ ओ अपना सङ्ग ओकर सम्पूर्ण पुण्यकेँ लेने चल जाइत अछि। एहि प्रकारेँ शरणार्थीक रक्षा नहि करब महान दोष कहल गेलैक अछि। अतः महर्षि कण्डुक उत्तम

वचनक हम पालन करब। एक बेर शरणमे आबि 'हम अहाँक थिकहुँ' कहि जे हमरासँ रक्षाक प्रार्थना करैत अछि तकरा हम अभय कए दैत छिऐक। इएह हम सदैवसँ व्रत लेने छी। तेँ शङ्का नहि कए विभीषण केँ बजाकेँ लए अनिऔन्ह हुनका हम अभयदान दए देलिऐन्हि।"

भगवान् रामक ई वचन सूनि वानरराज सुग्रीव सौहार्दसँ भरि हुनका कहलथिन्ह—"धर्मज्ञ ! लोकेश्वर-शिरोमणि! अपने श्रेष्ठ धर्मक विषय कहल अछि आओर एहिमे आश्चर्ये कोन, अपने महान शक्तिशाली ओ सन्मार्ग पर स्थित छी। हम-रहु अन्तरात्मा विभीषणकेँ शुद्धे बुझैत अछि, हनुमानजी सेहो अनुमान ओ भावसँ हुनकर सब तरहेँ परीक्षा कए लेल अछि। अतः भगवन् ! विभीषण शीघ्र एतए हमरहि जकाँ भएकेँ रहथि ओ हमरालोकनिक मित्रता प्राप्त करथि।"

एहि प्रकारेँ श्रीराम द्वारा अभय-दान भेटि गेला पर विनयशील महाबुद्धिमान विभीषण नीचाँ उतरबाक हेतु पृथ्वी दिसि तकलैन्हि। अपन भक्त सेवकलोकनिक सङ्ग सहर्ष पृथिवी पर उतरि ओ श्री रामचन्द्रक चरण पर खसि पड़लाह तथा हुनकासँ धर्मानुकूल, युक्तियुक्त, समयोचित तथा हर्ष-वर्द्धक विषय निवेदन कएल—"भगवन् ! हम रावणाक छोट भाइ विभीषण थिकहुँ। रावण हमर अपमान कएलैन्हि, तेँ समग्र प्राणीक शरणस्थल अपनेक शरणमे आएल छी, अपन मित्र, धन ओ लङ्कापुरी सबकेँ छोड़िकेँ आएल छी।

आब हमर राज्य, जीवन ओ सुख सब अपनहिक अधीन अछि।" विभीषणक ई वचन सूनि श्री राम मधुर वाणीमे सान्त्वना देलैन्हि तथा स्नेहसँ ओत-प्रोत दृष्टिएँ देखैत प्रेम-पूर्वक हुनका कहलथिन्ह—"विभीषण! अहाँ हमरा ठीक-ठीक राक्षसलोकनि बलाबलक विषयमे कहू।" अनायासे महान् कर्म करबामे पटु श्री रामक ई कहला पर विभीषण रावणक सम्पूर्ण बलक परिचय देब आरम्भ कएल—"राजकुमार! ब्रह्माजीक वरदानक प्रसादात् रावण खाली मनुष्यकेँ छोड़ि गन्धर्व, नाग, पक्षी आदि सबहि प्राणीसँ अवध्य छथि। रावणसँ छोट ओ हमरासँ पैघ भाइ जे कुम्भकरण छथि, से महातेजस्वी ओ पराक्रमी छथि। श्रीराम! रावणक सेना-पति प्रहस्त छथिन्ह, ओ कैलास पर भेल युद्धमे कुबेरक सेना-पति मणिभद्रकेँ पराजित कएदेने छलाह। रावणक बेटा इन्द्र-जित छथि, जे गोहिक चासक बनल खोली हाथमे पहिरि, अवध्य कवच धारण कए धनुष लए जखन युद्धक हेतु ठाढ़ होइत छथि तँ अदृश्य भए जाइत छथि। इन्द्रजित अग्निदेवकेँ तृप्त कए एहन शक्ति प्राप्त कए लेने छथि जे ओ विशाल व्यूहसँ युक्त संग्राममे अदृश्य भए प्रहार करैत छथि। महो-दर, महापार्श्व ओ अकम्पन नामक तीनटा राक्षस रावणक सेनापति छथि, जे लोकपालक समान पराक्रम प्रकट करबामे समर्थ छथि। लङ्कामे रक्तमांसाहारी दस कोटि सहस्र मायावी राक्षस निवास करैत अछि, जकरा सङ्ग लए रावण

लोकपालसबहुसँ युद्ध कएने छलाह तथा ओहि युद्धमे देवता-लोकनिक सङ्ग लोकपाल लोकनिक दुरात्मा रावणसँ पराजित भए भागि गेल छलाह।"

विभीषणक बात सूनि रघुकुलतिलक श्रीराम मनहि मन ओहि विषयसब पर विचार कए कहए लगलाह—"अहाँ रावणक युद्ध-विषयक जाहि-जाहि पराक्रमक वर्णन कएल अछि, से सबटा हमरा बुझल अछि; मुदा सुनू, रावण चाहे रसातलमे चल जाए वा पातालमे प्रवेश करए अथवा स्वयं ब्रह्मोजी लग चल जाए, हमरासँ ओ नहि बँचि सकत; हम निश्चय प्रहस्त आ पुत्रसबहिक सङ्ग ओकर वध करब ओ लङ्काक राजा अहाँकेँ बनाएब। हम तीनू भाइक शपथ लएकेँ कहैत छी, जाबत धरि युद्धमे पुत्र, भृत्यजन ओ बन्धु-बान्धवक सङ्ग ओकर हत्या नहि करब, ताबत धरि अयोध्यापुरीमे प्रवेश नहि करब।" श्रीरामचन्द्रक ई वचन सूनि धर्मात्मा विभीषण मस्तक नत कए भक्ति-समवेत हुनका प्रणाम कएल ओ कहए लगलाह—"प्रभो! राक्षसक संहार ओ लङ्कापुरी पर आक्रमण कए ओकरा जितबामे हम यथाशक्ति सहायता करब ओ प्राणो दए युद्धक हेतु रावणक सेनामे प्रवेश करब।"

विभीषणक ई कथा सुनितहिँ भगवान् राम हुनका हृदयसँ सटाए लेलैन्हि ओ लक्ष्मणसँ कहलैन्हि—"लक्ष्मण! अहाँ समुद्रसँ जल लए आनू आओर ओहिसँ एहि परम बुद्धिमान् राक्षसराज विभीषणकेँ लङ्काक राज्य पर शीघ्र अभिषेक कए

दिऔन्ह। हमरा प्रसन्न भेला पर हिनका ई लाभ भेटबेक चाहिऐन्हि।" श्रीरामक आज्ञा पाबि सुमित्राकुमार लक्ष्मण मुख्य-मुख्य वानरक बीच विभीषणकेँ राक्षसलोकनिक राजाक पद पर अभिषेक कए देलेन्हि। भगवान् श्रीरामक लगले अनुग्रहक फल देखि वानरसमुदाय तुमुल हर्षध्वनि कएल ओ महात्मा रामकेँ साधुवाद देबए लागल।

तत्पश्चात् हनुमान ओ सुग्रीव विभीषणसँ पुछलथिन्ह— "राक्षसराज! हमसब एहि असीम सागरकेँ ससैन्य कोना पार कए सकैत छी?" प्रश्नकेँ सूनि विभीषण उत्तर देलैन्हि— "रघुवंशी श्रीरामकेँ समुद्रक शरणमे जएबाक चाहिऐन्हि। एहि अपार महासागरकेँ राजा सगर खुनबओने रहथि, श्रीराम सगरहिक वंशज छथि। अतः समुद्र हिनकर कार्य अवश्य कए देथिन्ह।" विभीषणसँ सारगर्भित विचार सूनि सुग्रीव राम लग गेलाह, जतए लक्ष्मण सेहो विद्यमान रहथि। ओ विभीषणक समुद्र पर धरना देबाक विचार कहि सुनओल-थिन्ह। स्वभावहिसँ धर्मात्मा श्रीरामकेँ विभीषणक विचार उचित बुझि पड़लैन्हि। ओ लक्ष्मणसँ कहलथिन्ह— "लक्ष्मण! विभीषणक विचार हमरा नीक लागल, परञ्च सुग्रीव राजनीतिक निष्णात पण्डित छथि ओ अहूँ सम्मति देबामे कुशल छी। अतः अहूँ दूहूँ गोटा प्रस्तुत कर्तव्य पर नीक जकाँ विचारि जे उचित हो, से कहू।"

रामक बचन सूनि दुहू वीर सुग्रीव ओ लक्ष्मण आदर-

पूर्वक बजलाह—"पुरुषसिंह रघुनन्दन। हमरहुलोकनिकेँ विभीषणक सुखद विचार किएक नहि नीक लागल? एहि भयङ्कर सिन्धुमे बिना पुल बन्हने केओ लङ्कापुरी नहि पहुँचि सकैत अछि। अतः शूरवीर विभीषणक विचारानुसार कार्य कएल जाए, शीघ्रता कएल जाए, आब विलम्ब उचित नहि। एहि समुद्रकेँ अनुरोध कएल जाए जे ओ हमरालोकनिक सहायता करथि, जाहिसँ सेना-सहित हमरालोकनि रावणक लङ्कापुरीमे पहुँचि सकी।"

एहि प्रकारक सम्मति पाबि श्रीरामचन्द्र समुद्र-तट पर आबि कुशक आसन पर ओहिना बैसि गेलाह जेना वेदी पर अग्निदेव प्रतिष्ठित होइत छथि। परन्तु समुद्र हिनक सौम्य भावकेँ देखि सहायता करबाक हेतु प्रस्तुत नहि भेल, तखन श्रीराम कुपित भए गेलाह ओ सागरकेँ पाताल-सहित सुखा देबाक निश्चय कएल। ओ ब्रह्मदण्डक समान भयंकर बाणकेँ अपन श्रेष्ठ धनुष पर चढ़ाओल, से देखि नदीपति सागर हुनक सम्मुख उपस्थित भए हाथ जोड़ि बाजल—"सौम्य रघुनन्दन! हमर स्वभावे अछि अगाध ओ अपार होएब। हमर थाह यदि लोककेँ भेटि जाइक तँ हमर स्वभावक व्यतिक्रम होएत। अतः हम अपनेकेँ पार होएबाक उपाय कहैत छी, से कएल जाए। अपनेक सेनामे साक्षात् विश्वकर्माक पुत्र नल नामक वानर अछि, से हमरा ऊपर पुलक निर्माण करए, हम से धारण कए लेब।" नल पुलक निर्माण करए

लगलाह, शीघ्र पुल बनि गेल ओ दशरथनन्दन राम सेनासहित समुद्र पार कए गेलाह।

रावणकेँ समुद्र पर पुल बनबाक तथा रामक सेना-सहित सागर पार करबाक समाचार भेटलैक तँ ओ शुक ओ सारणकेँ गुप्त रूपेँ वानर-सेनामे प्रवेश कए श्रीरामक सैन्य-शक्तिक भेद लेबाक हेतु पठओलक। रावणक आदेशानुसार ओ बानरक रूपमे प्रच्छिन्न भेल श्रीरामक सेनाक निरीक्षण कए रहल छल, मुदा विभीषण दूहूकेँ देखतहिँ चीन्हि लेलैन्हि ओ पकड़िकेँ श्रीरामचन्द्र लग आनि बजलाह—"शत्रुनिकन्दन नरेश्वर! ई दूहू लङ्कासँ आएल गुप्तचर थिक राक्षसराज रावणक मन्त्री शुक ओ सारण।" दूहू राक्षस श्री रामकेँ देखि अत्यधिक भयभीत ओ हताश भए गेल ओ हाथ जोड़ि अपन परिचय दैत आगमनक उद्देश्यककेँ कहि देलक। भगवान राम हँसैत शुक ओ सारणकेँ कहलथिन्ह—"अहाँ दूनूगोटें दूत छी, तें अवध्य छी। अहाँ हमर सैन्यशक्तिक ज्ञान प्राप्त करबाक हेतु आएल छी आओर से अहाँलोकनि कए लेने होएब, अथवा अहाँ लोकनिकेँ आओर किछु देखब शेष अछि तँ विभीषण देखाए देताह। तत्पश्चात् प्रसन्नता पूर्वकघुरि जाएब।" ई कहि क्षमाशील राम शुक ओ सारणकेँ मुक्त कए देबाक आज्ञा विभीषणकेँ देलैन्हि ओ दूहू राक्षसकेँ रावणकेँ संवाद कहबाक हेतु कहलैन्हि—"रावण! जाहि बलक भरोसेँ अहाँ सीताक हरण कए लेने छलहुँ, से आबि देखाउ,

कालिह प्रातःकाल अहाँक लङ्कापुरीक ओ राक्षसी सेनाक विध्वंस होएत। रावण! जेना वज्रधारी इन्द्र दानव पर वज्र छोड़ैत छथि, तहिना कालिह सवेरे सेना-सहित अहाँ पर हम अपन भयंकर क्रोध छोड़ब।" श्रीरामक ई संवाद लए शुक्र ओ सारण शीघ्र लंकापुरी पहुँचि गेल। ओ दूहू निशाचर रावणकें सविस्तर श्रीरामक अपरिमेय वीरताक वर्णन सुनबैत हुनकासँ सन्धि करबाक ओ हुनक सेवामे सीताकें घुरा देबाक उचित विचार देलक, परन्तु मदान्ध रावण तमसाए ओकरा अपन सभासँ बहार कए देल।

शत्रुदेश लङ्कामे पहुँचि श्रीराम-सुमित्रानन्दन लक्ष्मण, वानरराज सुग्रीव, वायुपुत्र हनुमान, राक्षसराज विभीषिणक अतिरिक्त अन्यान्य प्रमुख-प्रमुख व्यक्तिक संग विचार-विमर्श करए लगलाह। ओ बजलाह—"इएह थिक रावण द्वारा शासित अविजेय लङ्कापुरी। एतहि राक्षसराज रावण निवास करैत अछि। अतः एहि पर कोना विजय पाओल जाए, से अहाँसबहु मिल विचार कए निर्णय कए लिअ।" श्री रामक ई कहला पर रावणक छोट भाइ विभीषण अर्थ-गर्भित वाणीमे कहलैन्हि—"हमर चारू मन्त्री पक्षीक रूप धारण कए शत्रु-सेनामे जाए सब किछु देखि घुरि आएल अछि। भ्रष्ट-बुद्धि रावण अपन नगरक रक्षाक प्रबन्ध एहि प्रकारें कएने छथि,—सेनासहित प्रहस्त पूर्व-द्वार पर ओ महापराक्रमी महापार्श्व ओ महोदर दक्षिण द्वार पर

ठाढ़ अछि। बहुसंख्यक राक्षससँ युक्त इन्द्रजित पश्चिम द्वारक रक्षा करबाक हेतु प्रस्तुत छथि। स्वयं मन्त्रवेत्ता रावण शुक, सारण आदि सहस्रो शस्त्रधारी राक्षसक संग उत्तर द्वार पर सावधान भेल उपस्थित छथि। विरूपाक्ष शूल, खड्ग प्रभृति धारण कएने सेना सबहिक संग नगरक मध्य भागमे सैनिक-समूहक मुख्य केन्द्रक रक्षा कए रहल अछि। रावणक सेनामे दस हजार हाथी, दस हजार रथ, बीस हजार घोड़ा एवं एक करोड़सँ ऊपर पैदल राक्षस अछि जे वीरता ओ बल-पराक्रमसँ सम्पन्न युद्धमे आततायी अछि।" एहि प्रकारेँ रावणक सैन्य-शक्ति ओ नगरक प्रबन्धक सूचना दए विभीषण वानर-सेनाक समुचित व्यूह-रचना करबाक सम्मति देल। बुद्धिमान वभीषणक वचन सूनि श्रीराम कहलैन्हि—"नील पूर्व द्वार पर प्रहस्तसँ, वालिकुमार अङ्गद दक्षिण द्वार पर महा-पार्श्व ओ महोदरसँ तथा पवनकुमार हनुमान पश्चिम द्वार पर इन्द्रजितसँ लड़ताह, हम स्वयं लक्ष्मणक संग उत्तर द्वार पर आक्रमण कए नगरमे प्रवेश करव तथा बलवान सुग्रीव पराक्रमी जाम्बवान तथा रावणक छोट भाइ विभीषणक संग नगरक मध्यमे उपस्थित रावणक सैन्यसमूह पर आक्रमण करताह।"

एहि प्रकारेँ कार्यक्रम निर्द्धारित कए श्रीराम अपन विशाल सेनाक संग सुबेल पर्वत पर चढ़ि, राति ओतहि निवास कएल।

अन्यायी राक्षसराज रावणक सङ्ग भगवान् रामक युद्ध आरम्भ भए गेल, वीर-शिरोमणि राक्षससब श्री रामक पराक्रमी वीर योद्धासबसँ पराजित होअए लागल। ई देखि इन्द्रजित राम ओ लक्ष्मणकें अपन बाणसँ वेधि देलैन्हि ओ गर्जना करए लगलाह। श्रीराम ओ लक्ष्मणकें अचेत देखि वानर-दल शोकसँ व्याकुल भए उठल, सुग्रीव भयभीत भए उठलाह, शोकसँ नोर प्रवाहित होअए लगलैन्हि, तखन विभीषण हुनका सान्त्वना दैत नीतिक वचन कहलथिन्ह— "वानर-सम्राट! एहना अवसर पर अधिक स्नेहक प्रदर्शनसँ मृत्युक भय उपस्थित होइत अछि, अतः शोक करब छोड़ि हुनक हितक विचार करू। श्रीरामक हेतु एहन संकटक कोनो गणना नहि, ई मरि नहि सकैत छथि। तें हिनक सेवा-शुश्रूषा करू ओ अपन सेनाकें आश्वासन दिअ। ताबत हमहुँ भयभीत सेनाकें धैर्य दैत स्थिर करैत छी।" एहि प्रकारें सुग्रीवकें आश्वस्त कए ओ पड़एबाक हेतु उद्यत वानर-सेनाकें सान्त्वना दए स्थिर करबाक हेतु विदा भेलाह।

श्री राम नागपाशसं बान्हल छलाह, परन्तु अपन शरीरक दृढ़ता ओ शक्तिमत्ताक कारणें मूर्च्छासँ जागि गेलाह। लक्ष्मण एखनहुँ अचेत भेल मृतवत लगैत छलाह। ई देखि बन्धु-विछोहक दारुण शोकसँ पराभूत मर्यादापुरुषोत्तम राम करुण विलाप करए लगलाह। ताबत सेनाकें सुस्थिर कए विभीषण सेहो घुरलाह तँ श्रीराम ओ लक्ष्मणक शरीरकें

वाणसँ व्याप्त देखि शोकसँ व्याकुल भए विलाप करए लगलाह। सुग्रीव हुनका सान्त्वना दए शान्त कएल। सबहिक सम्मतिसँ वायुपुत्र हनुमान चन्द्र ओ द्रोण नामक पर्वतसँ औषधि अनबाक हेतु विदा होअए लगलाह, तावत महावली विनतानन्दन गरुड़ ओतए उपस्थित भए दूहू भाइ राम-लक्ष्मण-केँ स्पर्श मात्रासँ नागपाशसँ मुक्त ओ स्वस्थ कए देल। पुनः चारू कात हर्षोल्लासक वातावरण पसरि गेल। वानर-सेनाक हर्ष-नाद सूनि दुर्मति रावण चिन्तित भए उठलाह ओ दूत द्वारा श्रीराम ओ लक्ष्मणक स्वस्थताक समाचार पाबि शोकसँ वशीभूत भेल मनहि मन विचारए लगलाह— "यदि वरदान द्वारा प्राप्त इन्द्रजितक विषधरक समान अमोघ नागपाशक बन्धनसँ ओ दूहू भाइ मुक्त भए गेलाह तँ हम अपन सम्पूर्ण सेनाकेँ संकटापन्ने बुझैत छी।"

फेर भयङ्कर युद्ध आरम्भ भेल। क्रमिक रावणक चुनल चुनल योद्धा—धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र, अकम्पन, प्रहस्त प्रभृति मारल जाए लगलाह। प्रहस्तक मृत्युक समाचार सूनि रावण बड़ दुःखी ओ कुपित भए उठलाह ओ युद्ध-क्षेत्रमे स्वयं उपस्थित भए अद्भुत पराक्रमक प्रदर्शन करए लगलाह। परञ्च रामक वीरत्वक तापकेँ सहबामे असमर्थ भए ओ युद्ध-भूमिसँ भागि गेलाह। श्रीरामसँ पराजित भए ओ कुम्भकरणकेँ फेर बड़ कठिनतासँ उठबाए बजबाओल एवं अपन पराभवक कथा कहैत शत्रुक विनाश करबाक हेतु प्रेरित

कएल। कुम्भकरण रणभूमिमे पहुँचि भयङ्कर पराक्रम प्रारम्भ कए देल, मुदा शत्रु-निकन्दन श्रीराम हुनका सुरपुर-धाम पहुँचाए देलैन्हि। कुम्भकरणक मृत्युक समाचार पाबि राक्षसराज रावणक शोक पराकाष्ठा पर पहुँचि गेल। ओ परम व्याकुल भए पश्चाताप करैत कहए लगलाह—"हम महात्मा विभीषणक उत्तम उपदेशकेँ अज्ञानताक वशीभूत भए नहि मानल, आब हुनक कहल सब कथा घटित भए रहल अछि; जहिआसँ कुम्भकरण ओ प्रहस्तक दारुण विनाश भेल, तहिआसँ विभीषणक कथा स्मरण भए हमरा लज्जित कए रहल अछि। हम धर्म-परायण विभीषणकेँ घर सँ बहार कए देलहुँ ओ एहि कुकर्मक शोकदायक परिणाम हमरा भोगए पड़ि रहल अछि।" एहि प्रकारेँ पश्चाताप करैत ओ असह्य शोकक कारणेँ पृथिवी पर मूर्च्छित भए खसि पड़लाह। परन्तु शीघ्र सचेत भए गेला पर त्रिशिरा हुनका बुझाए-सुझाए पुनः युद्धक हेतु उद्यत कएल।

एहिना फेर युद्ध आरम्भ भेल। राक्षसी सेनाक पैघ पैघ चुनल चुनल वीर योद्धालोकनि नरान्तक, महोदर, महापार्श्व प्रभृति कालक गालमे समाइत गेलाह। रावणक चिन्ता बढ़ैत गेल। अतिकायक मृत्युसँ तँ ओ अत्यधिक शोक-सन्तप्त तथा उद्विग्न भए उठलाह। दुःख प्रकट करैत बजलाह—"राम सिरपहुँ बड़ बलवान छथि, हुनक अस्त्र-बल महान अछि, जनिक बल विक्रमसँ भीरि असंख्य राक्षस

कालक गालमे चल गेल। हम वीर रघुनाथकेँ रोग-शोकसँ रहित साक्षात् नारायण-रूप मानैत छी।" एतबा कहि ओ राक्षससबहिकेँ वानरसबसँ सावधान कए दीन भावेँ अपन महलमे चल गेलाह। अपन पिताकेँ शोक-सन्तप्त भेल अश्रु बहबैत देखि इन्द्रजित्त लड़बाक हेतु चललाह। रणभूमिमे पहुँचि अग्निमे आहुति दए जखन ओ ब्रह्मास्त्रक आवाहन कएल तँ सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्रक संग अन्तरिक्षलोकक सकल प्राणी भयभीत भए उठल। इन्द्रजित अपन पराक्रमसँ श्रीरामचन्द्रक सेनाकेँ त्रस्त कए देल, पश्चात् श्री राम ओ लक्ष्मणक सम्मुख आबि अदृश्य भए वाण चलबए लगलाह। ई देखि धर्मात्मा श्रीराम लक्ष्मणकेँ कहलथिन्ह—"स्वयम्भू ब्रह्माक स्वरूप अचिन्त्य अछि, ओएह एहि जगतक कारण थिकाह, हुनके देल अस्त्रसँ इन्द्र-जित हमरालोकनि पर अघात कए रहल अछि। तेँ हे सुमि-त्रानन्दन! चिन्ता नहि कए चुपचाप एकर वाणक आघा-तकेँ सहैत रहू। जखन हम दूहूगोटा हर्ष ओ रोषसँ रहित अचेत भए खसि पड़ब, तखन ओ अपनाकेँ विजयी बूझि लङ्का चल जाएत।" तदुत्तर दूहू भाइ इन्द्रजितक बाणक आघातसँ मूर्च्छित भए गेलाह ओ इन्द्रजित्त लङ्का जाए अपन पिताकेँ उल्लसित भए विजयक समाचार कहि सुनओलक।

श्रीराम ओ लक्ष्मणक मूर्च्छासँ सबकेँओ भयभीत भए गेल। तखन बुद्धिमानमे श्रेष्ठ विभीषण सबकेँ बुझबैत कहल-

थिन्ह—"वानर वीरगण ! अहाँ सब भयभीत नहि होउ, विषाद नहि करू। ई दूहू भाइ ब्रह्माजीक वचनक आदर ओ पालन करबाक निमित्त स्वयं अस्त्रशस्त्र धारण नहि कएल ओ जानि-बूझिकें मूर्च्छित भए गेल छथि। स्वयम्भू ब्रह्मा ई उत्तम अस्त्र इन्द्रजितकें देने छलथिन्ह, ब्रह्मास्त्रक नामें ई प्रसिद्ध अछि, एकर बल अमोघ अछि। संग्राममे ओकर मर्यादाक रक्षा करबाक हेतु मर्यादा-पुरुषोत्तम राम ओ सुमित्रानन्दन लक्ष्मण धराशायी भेलाह। अतः खेदक विषय नहि अछि।" ई रहस्य-कथा सूनि पवनकुमार समग्र सेनाकें सान्त्वना देलैन्हि ओ विभीषणक संगभए शत्रुबाणसँ अत्यधिक क्षत-विक्षत अत्यन्त वृद्ध ऋक्षराज जाम्बवान लग गेलाह। जाम्बवान हनुमानक प्रशंसा करैत हुनका ऋषभका ओ कैलाश-शिखरक मध्य स्थित औषधिक पहाड़ परसँ मृतसंजी-विनी प्रभृति औषधि अनबाक हेतु कहलथिन्ह। बल-विक्रममे श्रेष्ठ हनुमानजी पर्वताकार रूप धारणकए विदा भेलाह ओ ओहि ठाम पहुँचि ओहि पर्वत-शिखरहिकें उखारि लेलैन्हि तथा ओहि शिखरकें हाथमे लए वायु वेगसँ घुरलाह। ओतए पहुँचितहिँ औषधिक गन्ध मात्रसँ श्रीराम ओ लक्ष्मण समग्र पीड़ित सेनाक सङ्ग स्वस्थ भए गेलाह।

तदुत्तर महातेजस्वी वानरराज सुग्रीवक विचारानुसार सेनाक महाबली ओ शीघ्रगामी वानरसब हाथमे मशाल लए लए विदा भेल ओ लंकापुरीमे प्रवेश कए समग्र नगरमे

आगि लगा देलक, सम्पूर्ण नगर जरि स्वाहा भए गेल तथा कुम्पन, शोणिताक्ष प्रभृति कतेक प्रतिष्ठित वीर राक्षस मारल गेल। तखन रावणक आज्ञा पाबि महापराक्रमी इन्द्रजित रणभूमिमे पहुँचि अदृश्य भए अगणित वानर-सैन्यक संहार कए देल। श्रीरामक सेना इन्द्रजितक वज्रक समान बाणसँ विकल भए भए पड़ाए लागल। ई देखि श्रीराम अत्यन्त कुपित भए मेघनादक वध करबाक दृढ़ निश्चय कए अपन धनुष पर अमोघ बाण चढ़बए लगलाह। ओ हुनक मनोभाव बुझि युद्धसँ निवृत्त भए लङ्कापुरी चल गेल।

इन्द्रजित अपन बन्धु-बान्धवक मृत्यु ओ पिताक पराभव देखि बड़ उत्तेजित छल, हृदयमे शान्ति नहि भेटैत छलैक। अतः उद्विग्न भेल ओ युद्ध करबाक हेतु पुनः विदा भेल। ओ मायावी नीच राक्षस मायामयी सीताक निर्माण कए अपन रथ पर चढ़ाए वानरसबहिक लग लए गेल तथा सभक समक्ष ओहि मायामयी सीताक हत्या अपमानपूर्वक कए देल। सीताक हत्याक समाचार सूनि श्रीराम शोकसँ मूर्च्छित भए गेलाह ओ हुनक सेनामे शत्रुक प्रति भीषण रोष पसरि गेल। ताबत रामभक्त विभीषण वानर-सैनिक सभकेँ अपन-अपन स्थान पर स्थापित कए ओतए पहुँचलाह, तँ सब समाचार अवगत कए ओ अचेत भेल श्रीरामकेँ कहए लगलथिन्ह—
"महाराज! अपनेकेँ जे समाचार भेटल अछि, तकरा हम असम्भव बुझैत छी। महाबाहु! रावणक सीताक प्रति केहन

भाव छैन्हि, सेहो हम जनैत छी। ओ हुनक वध ककरहु कदापि नहि करए देथिन्ह। साम, दाम ओ भेदनीतिक अनुसरण करितहुँ केओ दोसर पुरुष हुनका नहि देखि सकैत अछि, से ओ महिमामयी वैदेही युद्धभूमिमे कोना देखल जाए सकैत छथि? निश्चय ओ मायावी इन्द्रजितक माया छल, निश्चय ओ वानरसबहुकेँ मोहमे दए चल गेल अछि। इन्द्रजित निकुम्भिला मन्दिरमे होम करत ओ होमक पश्चात् घुरत तँ निश्चये पराजित नहि कएल होएत। ओ निर्विघ्न होम करए चाहैत अछि। वानरक पराक्रमसँ ओकर प्रयोजनमे विघ्न पड़ितैक, तेँ ओ मायाक प्रयोग कएलक अछि, जाहिसँ मोहमे पड़ि हमरालोकनि प्रतिकार नहि करी। अतः ओकर होमक समाप्तिक पहिनहि हमरालोकनि चली ओ ओकरा होमकर्म त्याग करबाक हेतु विवश करी। हे नर-श्रेष्ठ। मिथ्या एहि शोक केँ त्याग कएल जाए ओ एहि कार्यक निमित्त लक्ष्मणकेँ प्रस्थान करबाक आज्ञा देल जाए!"

श्रीराम शोकसँ पीड़ित छलाह, अतः विभीषणक कथनकेँ स्पष्ट रूपेँ नहि बुझि सकलाह। धैर्य धारण कए श्रीराम हनुमान लग बैसल विभीषणकेँ सब विषय फेरसँ कहबाक हेतु कहलथिन्ह, तँ श्रुतिमधुर गप्प करबामे कुशल विभीषण पुनः हुनका सान्त्वना दैत कहलथिन्ह—"रघुनन्दन! रावणकुमार इन्द्रजित निकुम्भिला मन्दिर दिसि गेल छथि। यदि ओ ओतए हवन-कार्य समाप्त कए लेताह, तँ हमरा सब

निश्चये हुनकासँ मारल जाएब आओर हवन-कार्य समाप्त करबाक पूर्व यदि हुनका पर आक्रमण कए देब तँ ओ निश्चये लक्ष्मणक बाणसँ मारल जएताह। ब्रह्माजी हुनका वरदान दैत हुनक मृत्युक विधान सेहो कए देने छथिन्ह। तेँ हे श्रीराम! अपने इन्द्रजितकेँ वध करबाक हेतु लक्ष्मणकेँ आज्ञा दिऔन्ह।"

विभीषणसँ ई रहस्य-कथा ज्ञात कए श्रीराम शोकरहित भए लक्ष्मणकेँ हनुमान, जाम्बवान प्रभृति ओ सुग्रीवक समस्त सेनाकेँ सङ्ग लए इन्द्रजितक वध करबाक हेतु आदेश दैत कहल—"महामना राक्षसराज विभीषण इन्द्रजितक मायाकेँ नीक जकाँ जनैत छथि, तेँ ई अपन मन्त्रीसबक सङ्ग सेहो अहाँक पाछाँ-पाछाँ जएताह।" अपन जेठ भाइक आज्ञा पाबि लक्ष्मण सर्वप्रथम हुनका प्रणाम कएल, पाछाँ हुनक परिक्रमा कए निकुम्भिला मन्दिर दिसि विदा भेलाह। जखन ओ शत्रु-सेनामे प्रवेश कएल, तखन विभीषण हुनका कहल-थिन्ह—"लक्ष्मण! सम्मुख कारी घन-घटाक समान जे राक्षसी सेना देखि पड़ैत अछि, तकर व्यूहकेँ तोड़बाक प्रयत्न करू। एकर आगाँ राक्षस-राजक पुत्र इन्द्रजित दृष्टिगोचर होएत। तेँ शीघ्र आक्रमण करू ओ मायावी, अधर्मी तथा भयंकर रावण-कुमारक वध करू।" नीति-विशारद विभीषणक वचन सूनि लक्ष्मण अपन बाणक वर्षा आरम्भ कए देल।

रावणकुमार इन्द्रजित बड़ दुर्धर्ष वीर छलाह। अतः सेनाकें शत्रु द्वारा पीड़ित जानि ओ बड़ दुखी भेलाह तथा अनुष्ठान बिनु समाप्त कएनहिँ अत्यन्त कुपित भेल ओ युद्धक हेतु ठाढ़ भए गेलाह। वृक्षसबहिक मध्य रथ राखल छलैन्हि, ताहि पर चढ़ि गेलाह तथा भयंकर धनुष-बाण हाथमे लेने अपन सारथीकें वानर-सेनाक बीचमे लए जएबाक आज्ञा देल। ओतए पहुँचि ओ शत्रु-सेना पर भीषण अस्त्र-शस्त्रसँ प्रहार करैत साक्षात् मृत्यु सन प्रतीत होइत छलाह। परम पराक्रमी पवन-कुमार हनुमानकें क्रोधसँ लाल भेल इन्द्रजित धनुष उठाए वध करबाक निमित्त भीषण प्रहार करए लगलाह, से देखि विभीषण लक्ष्मणकें कहलथिन्ह—"लक्ष्मण! देखू, रावणकुमार इन्द्रजित हनुमानक वध करए चाहैत छथि, अतः अपन प्राणान्तकारी बाणक आघातसँ हिनक शीघ्र वध करू।"

विभीषण धनुर्धर लक्ष्मणकें सङ्ग लए शीघ्रतासँ आगाँ बढ़लाह। गाछ-वृक्षक कारणेँ अन्हार भेल एक पैघ वनमे प्रवेश कए इन्द्रजितक कर्मानुष्ठानक स्थल देखबैत विभीषण लक्ष्मणकें कहलथिन्ह—"एहि वरक गाछक नीचाँमे बलवान रावणपुत्र प्रतिदिन आबि भूतकें बलि दैत छथि, तत्पश्चात् युद्धमे प्रवृत्त होइत छथि ओ तकरहि प्रतापें अदृश्य भए जाइत छथि। तें हुनका एतए अएबासँ पूर्वहि मारि दिऔन्ह।" इन्द्रजित लक्ष्मणक सम्मुख आबि विभीषणकें ओतए देखि

कठोर शब्दें कहल—"राक्षस ! इएह अहाँक जन्मभूमि थिक ओ एतहि अहाँ पैघ भेलहुँ। अहाँ हमर पिताक सोदर भाइ ओ हमर पित्ती थिकहुँ, तखन हमरासँ किएक द्वेष करैत छी ? अहाँमे नहि तँ कुटुम्बीक प्रति अपनत्व अछि आ ने आत्मीय-जनक प्रति स्नेहे अछि। अपन जातिक अभिमान सेहो नहि अछि। अहाँमे कर्त्तव्याकर्त्तव्यक मर्यादा, भ्रातृ-प्रेम ओ धर्म किछु नहि अछि। अहाँ राक्षस-धर्मकें कलङ्कित कए देल। दुर्मते ! अहाँ स्व-जनकें परित्याग कए दोसराक क्रीतदासत्व स्वीकारि सत्पुरुष द्वारा निन्दनीय भए गेलहुँ। आन लोक कतबहु गुणवान ओ अपन लोक कतबहु गुणहीन किएक ने होथु, स्वजने गुण-वान आनक अपेक्षें श्रेष्ठ होइत छथि, आन आने थिक ! हे रावणक छोट भाइ निशाचर ! अहाँ लक्ष्मणकें एहि स्थान पर आनि हमर वध करएबाक प्रयत्न करैत घोर निर्दयता देखाओल अछि, एहन पुरुषार्थ अहीँसन स्वजन कए सकैत अछि !"

अपन भातिजक कठोर कथा सूनि विभीषण बजलाह—"अधम ! अहाँ एहन बजैत छी जेना हमर स्वभाव जनितहि नहि होइ ! यद्यपि हमर जन्म राक्षस-कुलमे भेल, तथापि हमर शील-स्वभाव राक्षस जकाँ नहि अछि, हम सत्पुरुषक प्रधानगुण सत्वक आश्रय लेने छी। क्रूर कर्ममे हमर मन नहि लगैत अछि, अधर्म दिसि हमर रुचि नहि अछि। एहि शील-स्वभावक कारणहि तँ घरसँ बहार कए देल गेलहुँ !

फेर सत्पुरुषक आश्रयमे किएक ने रही ? जकर शील-स्वभाव धर्मसँ भ्रष्ट भए गेल अछि, जे पाप करबाक दृढ़ निश्चय कए लेलक अछि, एहन पुरुषकेँ त्यागि लोक ओहिना सुखी होइत अछि, जेना हाथ पर बैसल विषधरकेँ त्यागि मनुष्य निर्भय भए जाइत अछि। जे दोसराक धन लुटैत अछि, दोसराक स्त्रीकेँ वश करबाक चेष्टा करैत अछि, से दुरात्मा जरैत घर जकाँ त्याग करबाक योग्य अछि। पर-धनक अपहरण, पर-स्त्रीक संसर्ग ओ अपन हितैषी पर शङ्का विनाशकारी दोष थिक। महर्षिलोकनिक वध, देवताक सङ्ग विरोध, अभिमान, रोष, वैर ओ धर्मक प्रतिकूल आचरण आदि दोष हमर जेठ भाइमे अछि, जे हुनक प्राण ओ ऐश्वर्य दूनूक नाश कए रहल अछि। एही दोषक कारणेँ हम अपन जेठ भाइ ओ अहाँक पिताकेँ त्यागि देल। आब ने तँ ओ लङ्कापुरी रहत, ने अहाँ रहब आओर ने अहाँक पिता। राक्षस! अहाँ अत्यन्त उद्दण्ड, अभिमानी ओ मूर्ख छी। काल-पाश अहाँकेँ बन्हने अछि, तेँ जे कहबाक हो, से कहि लिअ! नीच! अहाँ हमरा जे कठोर कथा कहल अछि, तकरे फल थिक जे घोर संकटापन्न छी। आब अहाँ बरक गाछ धरि नहि पहुँचि सकब। आब अहाँ अपन समग्र बल देखाउ, जकर बड़ गौरव छल।"

विभीषणक कथा सूनि इन्द्रजित क्रोधसँ मूर्च्छित जकाँ भए गेलाह ओ अत्यन्त रोषसँ भरि युद्ध करए लगलाह। इन्द्रजित ओ लक्ष्मणमे अद्भुत ओ भयंकर युद्ध भेल। दूनू

योद्धा अपूर्व पराक्रम देखाओल, मुदा अन्तमे लक्ष्मण ऐन्द्रास्त्रसँ इन्द्रजितक दीप्तिमान मस्तककेँ धड़सँ काटि पृथिवी पर खसा देलैन्हि :

युद्धमे अपन वीर पुत्र इन्द्रजितक भयानक ओ दारुण वधक समाचार सूनि रावण मूर्च्छित भए खसि पड़लाह। अनेक कालक पश्चात् चेत भेलैन्हि तँ करुण विलाप करए लगलाह—"हा पुत्र! हा राक्षस सेनाक महाबली कर्णधार! अहाँ तँ इन्द्रहुकेँ पराजित कए चुकल छलहुँ, तखन लक्ष्मण द्वारा कोना मारल गेलहुँ! महाबाहु! आइ हमरा सूर्यपुत्र यमक महत्व बुझबामे आएल। आइ तीनू लोक ओ अनेक वन-उपवनसँ युक्त ई पृथ्वी अहाँक चल गेलासँ हमरा सून लगैत अछि। वीर! उचित तँ ई छल जे पहिने हम यमलोक जएतहुँ ओ अहाँ हमर श्राद्ध करितहुँ, मुदा विपरीते भेल ओ हमरा अहाँक श्राद्ध करए पड़त।" एहि प्रकारेँ आर्त्तभावेँ विलाप करैत राक्षसराज रावण अपन पुत्रक वधक स्मरण कए कालाग्निक समान अत्यन्त कुपित भए गेलाह, बीसो आँखिसँ अश्रु प्रवाहित होअए लगलैन्हि जेना जरैत दीपकक प्रकाशक सङ्ग सङ्ग तेलक विन्दु सेहो झरि रहल हो। पुत्र-वधसँ सन्तप्त ओ क्रोधसँ वशीभूत भए क्रूर रावण अपन बुद्धिसँ सोचि-बिचारि सीताकेँ वध कए देबाक निश्चय कएल ओ हाथमे तरुआरि लए बड़ वेगसँ आगाँ बढ़लाह, जतए मिथिलेशकुमारी सीता छलीह। परन्तु रावणक सुशील

एवं शुद्ध आचार-विचार चरित्र-युक्त सुपार्श्व नामक बुद्धिमान् मन्त्री हुनका बुझबैत कहलथिन्ह—"महाराज दश-ग्रीव ! अपने तँ स्वयं कुबेरक भाइ थिकहुँ, तखन क्रोधक कारणेँ धर्मक तिलाञ्जलि किएक दैत छी ? विदेहकुमारी सीताक वधक विचार कोना करैत छी ? वीरराक्षसराज ! अपने विधि-पूर्वक सकल शास्त्रक अध्ययन कए गुरुकुलसँ स्नातक भए सदैव अपन कर्तव्यक पालन करैत आएल छी, तइओ अपनहि हाथसँ स्त्री-वध करब कोना उचित बुझैत छी ? पृथ्वीनाथ ! सीताक दिव्य रूपकेँ देखि दया करिऔन्ह ओ हमरासबहिक सङ्ग राम पर युद्धमे क्रोध करू। आइ कृष्णपक्षक चतुर्दशी थिक, अतः आइए युद्धक प्रबन्ध कए काल्हि अमावस्याकेँ विजयक हेतु प्रस्थान करू। अपने शूर-वीर, बुद्धिमान ओ रथी वीर थिकहुँ। एक उत्तम रथ पर चढ़ि हाथमे खड्ग लए युद्धमे दशरथ-नन्दन रामक वध कए अपने सीताकेँ प्राप्त कए लेब।" मित्रसँ कहल ओहि उत्तम वचनकेँ स्वीकार कए बलवान रावण महलमे घुरि अएलाह एवं राजसभामे प्रवेश कए युद्धक आयोजन करए लगलाह।

रावणक जतेक महाबली राक्षस सब छल से सब मारल गेल, तखन रावण स्वयं रथ पर चढ़ि बड़ वेगसँ श्री रघुनाथ-जीक दिसि बढ़लाह ओ भयङ्कर वाणसँ प्रहार कए हुनका आक्रान्त करए लगलाह। इन्द्रक पठाओल रथ पर चढ़ि भगवान् राम रावणक सम्मुख आबि कठोर वाणीमे कहल-

थिन्ह—"नीच राक्षस! हमर अनुपस्थितिमे हमर असहाय स्त्रीकें हरण कए लए गेलेंह, तें तों बलवान कदापि नहि छें। भ्रष्ट-बुद्धि निशाचर! तों अपनाकें शूरतासँ सम्पन्न बुझैत छें, मुदा सीताकें चोर जकाँ चोराकें लए जाइत तोरा कनिओ लाज भेलौ? यदि हमरा रहैत तों सीताकें बल-पूर्वक हरण करितें तँ एखन धरि तों मरि अपन भाइ खरक दर्शन कए लेने रहितें। आइ हमर बाणसँ विदीर्ण ओ प्राणशून्य तोहर शरीरक अँतड़ीकें गीध ओहिना खिचतौक जेना गरुड़ साँपकें खिचैत अछि।" एहन कठोर कथा कहैत शत्रुसंहारक श्रीराम राक्षसराज रावण पर बाणक वर्षा करए लगलाह। ओहि काल युद्ध-स्थलमे शत्रु-वधक इच्छुक श्रीरामक बल, पराक्रम, उत्साह ओ अस्त्र-शक्ति द्विगुण भए गेल एवं हुनक प्रहारसँ रावण पीड़ित होअए लागल। जखन हृदयक व्याकुलताक कारणें ओ शिथिल भए गेल तँ रथचालक सारथी रथकें हटाए रणभूमिसँ बहार लए गेल।

रावणक काल समीप आबि गेल छलैन्हि, ओ मोहसँ वशीभूत भेल अत्यन्त कुपित भए अपन सारथीकें फज्झति करए लगलाह तथा पुनः रथकें रामक लग लए जएबाक आज्ञा देल। तदुत्तर श्रीराम ओ रावणक मध्य महान द्वैरथ युद्ध आरम्भ भए गेल, जे सभक हेतु भयंकर ओ अद्भुत छल। एक दोसराकें वध करबाक प्रयत्नमे लागल दूहू महावीर बड़ भयानक लगैत छलाह। राम अपन श्रेष्ठ श्रेष्ठ बाणक

प्रयोग कएल, मुदा तइओ रावणक किछु नहि होइत छलैक; एकटा शिर कटैत छलैक तँ दोसर भए जाइत छलैक। ई देखि श्री राम चिन्तित भए उठलाह।

राम-रावण-युद्ध कतेक दिन होइत रहल, तखन देवराजक सारथि मातलि श्रीरामकेँ स्मरण करबैत कहलथिन्ह—"वीर-वर! जे अस्त्र ओ चलबैत अछि, तकरहिटाक निवारण किएक करैत छी? एकर वध करबाक हेतु ब्रह्मास्त्रक प्रयोग करू। देवगण एकर विनाशक हेतु जे समय निर्द्धारित कएने छलाह, से आबि गेल अछि।" मातलिक कथा सूनि श्रीरामकेँ ब्रह्मास्त्रक स्मरण भए अएलैन्हि। जखन ओ ओहि बाणक सन्धान करए लगलाह तँ सम्पूर्ण प्राणी थर-थर करए लागल, पृथ्वी डोलए लगलीह। श्रीराम अत्यन्त कुपित भए यत्नपूर्वक ओहि मर्मभेदी बाणकेँ रावण पर छोड़ि देल जे क्षणमात्रमे दुरात्मा रावणक हृदयकेँ विदीर्ण कए देलक। ओ निष्प्राण भए पृथ्वी पर खसि पड़ल। रावणक वध होए-तहिँ देवगण आकाशमे दुन्दुभी बजबए लगलाह, मन्द मन्द गतिएँ दिव्य सुगन्धिसँ सुवासित समीर सिहकए लागल, श्रीराम पर अन्तरिक्षसँ पुष्पवर्षा होअए लागल।

अपन जेठ भाइकेँ रणभूमिमे मरल पड़ल देखि विभीषणक सबटा मनोमालिन्य विलीन भए गेलैन्हि, भ्रातृ-प्रेमक सरिता उमड़ि उठलैन्हि, ओ शोकसँ व्याकुल भए विलाप करए लगलाह—"हा विख्यात पराक्रमी वीर भाइ दशानन! हा

कार्यकुशल नीतिज्ञ! अहाँ तँ सदैव बहुमूल्य शय्या पर सुतैत छलहुँ, एना मृत भए भूमि पर कोना पड़ल छी? अहाँक विशाल भुजा निश्चेष्ट अछि, सदैव सूर्य जकाँ चमकैत अहाँक मुकुट ओतए फेका गेल अछि। वीरवर! अहाँकेँ बेर-बेर सावधान कएने छलहुँ, मुदा मोह ओ कामक वशीभूत भए हमर कथा नहि मानल, हमर बातक महत्व नहि देल। फल-स्वरूप एहन दिन आएल। अहाँक धराशायी भेलासँ नीति पर जे चलैत छथि, तनिक मर्यादा टूटि गेलैन्हि, धर्मक मूर्त्ति-मान विग्रह चल गेल, सत्व-संग्रहक स्थान नष्ट भए गेल, सूर्य पृथिवी पर खसि पड़लाह, चन्द्रमा अन्हारमे डूबि गेलाह, प्रज्वलित आगि मिझा गेल तथा वीरताक उत्साह निरर्थक भए गेल।" एहि प्रकारक विलाप करैत देखि भगवान् श्रीराम शोकमग्न विभीषणकेँ सान्त्वना दैत युक्ति-संगत वचन कहए लगलथिन्ह—"विभीषण! रावण समरमे क्षत्रिय धर्मक पालन ओ अपरिमित पराक्रम करैत मरलाह अछि, अतः एहन महावीरक प्रति शोक कर्त्तव्य नहि थिक। युद्धमे ककरहु सदैव विजये नहि होइत अछि। वीर पुरुष संग्राममे अपन शत्रुकेँ मारैत अछि अथवा स्वयं मारल जाइत अछि। क्षात्र-वृत्तिक आश्रय लेनिहार वीरक इएह गतिकेँ सब दिनसँ उत्तम मानल गेल अछि। अतः अहाँक रावणक प्रति शोक कर्तव्य नहि थिक, क्रिया-कर्म कर्तव्य थिक।"

परम पराक्रमी श्रीरामचन्द्रक ई वचन सुनि विभीषण

रावणक प्रशंसा करैत बजलाह—"पूर्वकालमे देवगण ओ इन्द्रहुसँ जे कहिओ पराजित नहि भेलाह, से अपनेसँ संघर्ष कए शान्त भए गेलाह। रावण अग्नि-होत्री, महातपस्वी, वेदान्त-वेत्ता एवं यज्ञ-यागादिमे परम कर्मठ छलाह। आब ओ मरि गेलाह, तेँ हे राम! हिनक श्राद्ध करए चाहैत छी।" विभीषणक ई इच्छा बुझि हुनका रावणक अन्त्येष्टि-कर्मक आज्ञा दैत श्रीराम कहलैन्हि—"विभीषण! शत्रुभाव जीवन-कालहि धरि रहैत अछि, मरणक पश्चात् शत्रुताक अन्त भए जाइत छैक। अतः हिनक आब अन्तिम संस्कार करू। एहि अवस्थामे ओ जेहन अहाँक स्नेह-पात्र छथि, तेहने हमरहु छथि।"

रावणक मृत्युक समाचार सूनि शोकसँ व्याकुल भए हुनक अत्यन्त प्रिय पत्नी मन्दोदरी एवं हुनक अगणित स्त्री रणभूमिमे हुनक शव ताकए लगलीह। सबहिक नेत्रसँ अश्रु-धारा बहि रहल छल, सब बेर-बेर बेसुध भए भूमि पर खसि खसि पड़ैत छलीह। अपन पतिक शवकेँ देखिलहिँ मन्दोदरी अपन अनेक सौतिनक सङ्ग एहन विलाप करए लगलीह, जकरा सूनि पाथरो पघलि जाए। विलाप करैत-करैत बाजए लगलीह—"अहाँ तँ अपन पाप ओ पुण्य लए चल गेलहुँ, वीर-गति प्राप्त कए लेलहुँ, मुदा हमरा महान् दुःखमे छोड़ि गेलहुँ। विभीषण अपन युक्ति-युक्त तथा सार्थक कथनसँ अहाँकेँ नीक विचार दैने छलाह, परञ्च अहाँ

नहि सुनलहुँ ओ तकर फल पओलहुँ ! मुदा राक्षसराज ! अहाँ उठैत किएक नहि छी? यद्यपि रामक द्वारा अहाँक पराभव भेल तथापि अहाँ सूतल किएक छी ? आइए तँ सूर्य-किरण निर्भय भए लङ्कामे प्रवृष्ट भेल अछि ! हे प्राणनाथ ! अहाँक मृत्यु भए गेल, तइओ हमर शोक-पीड़ित हृदय सहस्र खण्ड नहि होइत अछि, तेँ हमरा सन पाषाणहृदया नारीकेँ धिक्कार अछि।" एहि प्रकारेँ मन्दोदरी विलाप करैत गेलीह ओ अन्तमे अचेत भए रावणक छाती पर खसि पड़लीह।

तखनहिँ श्रीराम विभीषणकेँ कहलैन्हि—"एहि स्त्रीकेँ धैर्य दिऔन्ह ओ रावणक दाह-संस्कार करू।" विभीषण रामक अभिप्राय बुझबाक निमित्त कहलथिन्ह—"जे धर्म ओ सदाचारक त्याग कए देने छल, जे क्रूर, निर्दयी, असत्यवादी तथा पर-स्त्रीक स्पर्श करएबला छल, तकर दाह-संस्कार करब हम उचित नहि बुझैत छी। ई भाइ रहितहुँ हमर शत्रु छल। यद्यपि जेठ होएबाक कारणेँ ई हमर पूज्य छल, तथापि एकर संस्कार हम करी, से हम उचित नहि बुझैत छी।" विभीषणक ई वचन सूनि भगवान् राम प्रसन्न भेलाह। ओ अपन अभिप्राय व्यक्त करैत कहलैन्हि—"राक्षसराज ! अहाँक प्रभावसँ हमर विजय भेल अछि, अतः अहाँक जाहिसँ नीक हो, से कहैत छी। ई निशाचर भनहि अधर्मी ओ असत्यवादी रहल हो, मुदा संग्राममे सदैव तेजस्वी, बलवान

तथा शूर-वीर छल। शत्रुताक मरणक पश्चात् अन्त भए जाइत छैक, हमर उद्देश्यो आब पूर्ण भए चुकल अछि। अतः जेहन ई अहाँक भाइ अछि, तेहने हमरहु अछि। आब ओ धर्मानुसार अहाँसँ दाह-संस्कार करबा योग्य अछि, एहिसँ अहाँ यशस्वी होएब।"

श्रीरामक वचन सूनि विभीषण लङ्कापुरीमे प्रवेश कए रावणक दाह-संस्कारक प्रबन्ध करए लगलाह ओ अग्निहोत्र प्रभृति संस्कार-कार्य विधिपूर्वक समाप्त भए गेल।

रावणक अन्तिम संस्कार समाप्त भेला पर भक्त-वत्सल श्रीराम लङ्काक राज्य-सिंहासन पर बैसाए अपन प्रेमी, भक्त ओ उपकारक विभीषणकें अभिषिक्त करबाक आज्ञा सुमित्रा-नन्दन लक्ष्मणकें देलैन्हि। लक्ष्मण वानर यूथपतिसबकें स्वर्ण-घटमे समुद्रक जल अनबाक आदेश देल जे बड़ शीघ्रतासँ जल लए घुरि आएल। अनेक राक्षस ओ सुहृदगणसँ घेरल तथा लंकाक राज्यसिंहासन पर बैसल राम-भक्त विभीषणक वेदोक्त विधिसँ एक छोट घटमे जल लए सबसँ पहिने अभिषेक कएल लक्ष्मण, तत्पश्चात् राक्षस ओ वानर समुदाय सेहो हर्ष मनबैत अभिषेक करैत गेलाह। धर्मात्मा विभीषण धन्य-धन्य भए अपन शरण-स्थल श्रीरामक स्तुति करए लगलाह।

श्रीराम सीता ओ लक्ष्मण तथा अपन भक्त समुदायक संग अयोध्या घुरि गेलाह, जतए प्रजा-पालन करैत अपन भक्तलोकनि तथा सुहृदजनक मनोरंजन दीर्घ काल धरि कए-

लैन्हि। विभीषण लंकाक राजा रहितहुँ सदैव श्रीरामहिक शरणापन्न रहि अपन सेवासँ हुनका प्रसन्न कएने रहथि।

जखन श्रीरामक मर्त्यलोकक लीला समाप्त भए गेलैन्हि, तखन अपना भाइलोकनि, सुग्रीव आदि वानर, जाम्बवान प्रभृति ऋक्षक सङ्ग परमधामक यात्रा करबाक निश्चय कएल। यात्राक पूर्व ओ अपन शरणापन्न परमभक्त राक्षसराज विभीषणकें आज्ञा दैत कहलैन्हि—"महापराक्रमी राक्षसराज विभीषण! जाबत धरि संसारक प्रजा जीवन धारण कएने रहत, ताबत धरि अहूँ लङ्कामे रहि शरीर धारण करब; जाबत धरि चन्द्र-सूर्य रहताह, पृथ्वी रहतीह तथा हमर कथा प्रचलित रहत, ताबत धरि एहि पृथ्वी पर अहाँक राज्य रहत। हम मित्रभावें जे कहि रहल छी, तकर अहाँ पालन करी, धर्मपूर्वक प्रजाक रक्षा करैत रही। एखन जे हम कहल अछि तकर विरोध नहि करू। महाबली राक्षसराज! एकटा कथा आओर कहैत छी, से सूनू, हमर इक्ष्वाकु-कुलक देवता छथि भगवान् जगन्नाथ। इन्द्रादि देवता सेहो हुनक निरन्तर आराधना करैत रहैत छथि। अहूँ हुनक सदैव पूजा करैत रहब।"

महात्मा विभीषण मुग्ध भावें श्रीरामक आज्ञाकें स्वीकारि लेल। कहल जाइत अछि जे ओ आइओ जीवित छथि आ' हरि-भजन करैत श्रीरामक आज्ञाक पालन कए रहलाह अछि। श्रीरामक जे शरणापन्न होइत छथि, से विभीषणहि जकाँ हुनक कृपा-भाजन होइत छथि।



भरत शरणापन्न

सीता ओ लक्ष्मणकें सङ्ग लए राम चौदह वर्षक हेतु दण्डक वन चल गेलाह। राजा दशरथ ताहि शोकसँ प्राण त्यागि देल। जनिका ओ राज्य दए गेलाह से भरत अपना मात्रिकमे छलाह। अयोध्यामे केओ राजा नहि ओ बिनु राजाक जे दशा देशक होइत छैक तकर आतङ्कसँ भयभीत अमात्य ओ मार्कण्डेय प्रभृति सात गोट ऋषिक सङ्ग राज्य-कर्त्तागण सभा-भवनमे एकत्र भए राजपुरोहित वसिष्ठकें कहल—"एक रात्रि मात्र अयोध्या बिनु राजाक छल मुदा से एक राति दुःखसँ हमरालोकनिकें सए वर्ष बूझि पड़ल। अराजक देशमे धर्म-कर्मक लोप भए जाइत छैक, सुखशान्ति ऊठि जाइत छैक। तें अपनेलोकनि प्रतिकार कएल जाओ। यदि महाराज रहितथि तैओ तँ अपनहिक जूति चलैत।" वसिष्ठ उत्तर देलथिन्ह—"एहि विवादक कोन काज छैक। जनिका महाराज राज्य दए देलथिन्ह, से भरत मात्रिकमे छथि। खूब तेज घोड़ा पर बुझनुक दूतकें तुरन्त पठाउ जे हुनका बजाए अनैन्हि। हुनका कहैन्हि जे पुरोहित अहाँकें बजओलैन्हि अछि, राजधानीमे अहाँकें आवश्यक कार्य कर्तव्य अछि। हुनका ई नहि कहल जाइन्ह जे राम वन चल गेलाह तथा राजा स्वर्गीय भए गेलाह।"

जयन्त नामक दूत राजोचित उपहार लए विदा भेल। नाना देश, नदी ओ पर्वतकेँ पार करैत सातम दिनुक राति कैकय देशक राजधानी पहुँचल । ओहि राति भरत नाना दुःस्वप्न देखने रहथि जे भुल्ल केशवाली कारी मौगी सब लोहक आसन पर कारी वस्त्र पहिरने राजा दशरथकेँ पकड़िकेँ लए गेलि आ हुनका लाल चाननसँ रङि लाल फूलक माला पहिराए गदहाक रथपर चढ़ाए दक्षिण दिसि लेने गेलि। भरत अनमनाएल बैसल रहथि आ कतबो हुनक परिचरगण हुनक मन बहटारबाक यत्न करए परन्तु भरत कहथिन्ह जे "हमर मन नीक नहि अछि, कण्ठ सुखाइत अछि, अनेरे भय भए रहल अछि। हम जेहन जेहन स्वप्न देखल अछि ताहिसँ हमरा भय अछि जे हो न हो, की तँ हम स्वयं अथवा राजा दशरथ अथवा रामचन्द्र अथवा लक्ष्मण, ककरो ने ककरो मृत्यु अवश्यंभावी अछि।"

एही समयमे अयोध्याक दूत धड़फड़ाएल भरतक समक्ष उपस्थित भेल, घोड़ा घामसँ भीजल, स्वयं थाकल, बाटक धूरासँ भरल। भरत अकचकएलाह, मुदा दूत भरतक पाएर छूबि प्रणाम कएलक ओ कहलक—"पुरोहित ओ मन्त्री-लोकनि अपनेक कुशल पुछलैन्हि अछि आ निवेदन कएलैन्हि अछि जे अत्यन्त आवश्यक काज अछि तेँ अपने तुरन्त अयोध्याक हेतु विदा भए जाइ।" ई कहैत ओ सबटा उपहार आगाँमे पसारि देलक। दूतकेँ लगमे बैसाए भरत

पुछए लगलथिन्ह—"की हओ, राजा कुशल छथि ने, आ राम ओ लक्ष्मण निके छथि ? बड़की मा कौसल्या आ छोटकी मा सुमित्राक कुशल कहह ? हमर माए जे गोरवाहि छथि, तमसाहि छथि, अगुताहि छथि, से कोना छथि ?" दूत करजोड़ि कहलक—"जनिक जनिक कुशल अपने चाहैत छी, सब कुशल छथि। अपने रथ जोताओल जाओ, चलल जाओ।"

भरत उठलाह, जाएकेँ मातामहक ओतए निवेदन कएल—"अयोध्यासँ दूत आएल अछि। पुरोहित ओ मन्त्री तुरन्त आबए कहलैन्हि अछि। दूत बड़ अगुताएल अछि, बड़ अगुतबैत अछि। तेँ आज्ञा हो जे हम लगले विदा भए जाइ। पुनः जखनहि स्मरण करब, हम पुनः आबि जाएब।" मातामह भरतकेँ हृदयसँ लगाए कहलथिन्ह—"अवश्य जाउ, अहाँ सन बेटा पाबि कैकेयी धन्य भेलीह। सबकेँ कुशल आशीर्वाद कहि देबैन्हि, अपन बापकेँ, माए सबकेँ, राम ओ लक्ष्मणकेँ; पुरोहित ओ ब्राह्मणलोकनिकेँ प्रणाम कहबैन्हि।" ओ भरतक सङ्ग अङ्गरक्षक वीर सबकेँ जएबाक आज्ञा दए सनेसमे सुन्दर-सुन्दर हाथी, उत्तम उत्तम घोड़ा, महलमे पोसल बाघ सन-सन बड़का-बड़का कुकुर, कम्बल, हरिनक ओ बाघक छाल, सोन-चानीक ढेर वस्तु सङ्ग लगाए देलथिन्ह। स्वप्नसँ भरत चिन्तित रहबे करथि, दूतक अगुताइसँ

आओरो चिन्तासँ व्याकुल शत्रुघ्नकें सङ्ग कए वीर अमात्य-लोकनिक सङ्ग भरत राजभवनसँ विदा भए गेलाह।

सात राति बाटमे बीतल। अठमा दिन अरुणोदय समकालमे ई लोकनि दूरहिसँ अयोध्याकें देखलैन्हि, मुदा जँ-जँ लग होइत गेलाह, अयोध्या दोसरे सन लगैन्हि। बूझि पड़ैन्हि जेना अयोध्याक माटि पीअर भए गेल हो। सब काल जे ओतए तुमुल शब्द होइक से जेना बन्द भए गेल रहैक। हाथी, घोड़ा, रथ किछु चलैत नहि देखथिन्ह। कामीलोकनि जे राति नगरक कात उपवनमे क्रीड़ा करए जाथि से केओ नहि भेटलैन्हि। मार्गसब कातक गाछक पातसँ भरल देखलथिन्ह, कोनो मार्ग साफ नहि। दिव्य चंपक सुगन्धिसँ सुवासित बसात नहि लगैन्हि। वेणी, मृदङ्ग इत्यादिक कोन कथा, पशुपक्षी समेतक बाजब नहि सूनि पड़ैन्हि। ताहि परसँ नाना प्रकारक अशुभ दर्शन ओ अप-शकुन देखि भरत व्याकुल भेल जाथि। एहि रूपें विषादसँ भरल, थाकल, डेराएल ओ चेतनासँ जेना शून्य भरत पूब द्वारसँ निःशब्द ओ जनशून्य अयोध्यामे प्रवेश कएल। द्वार-पाल देखितहिँ चुपचाप प्रणाम कए फाटक खोलि देलक। नगरमे जेना कतेक दिनसँ कतहु झाड़ू नहि पड़ल हो कतहु बुहाड़ लागल नहि, सर्वत्र जेना श्री विलीन; कतहु जेना बलि-कर्म नहि भेल हो, कतहु धूपक सुगन्धि नहि; सब घर शून्य जकाँ, शोभाहीन; देवालय सबमे जेना कतेक दिनसँ पूजा नहि

भेल हो, कतहु निर्माल्यक ढेर नहि; फूल ओ मालाक दोकान सब खाली; बाजार बन्द; जे लोक भेटैन्हि से सब चुप ओ सभक आँखिमे नोर भरल। भरत सोझे महाराजक महलमे धड़फड़ाएल पहुँचलाह। केओ मनुष्य हुनका ओतए नहि भेटलैन्हि, सम्पूर्ण महल शून्य छल। चिन्ता ओ शङ्कासँ थाकल भरत ओहि ठामसँ चोटहि अपन माए कैकेयीक दिसि दौड़लाह।

कैकेयी सोनाक चौकी पर बैसल छलीह। भरतकेँ देखितहिँ ओ उल्लाससँ भरि उठलीह। ताबत भरत आबि हुनक दूहू पाएर छूबि प्रणाम कएल। माए हुनका उठाए हृदयसँ लगाए लेल ओ पूछए लगलथिन्ह—"कहिआ चललहुँ? बाटमे क्लेश तँ ने भेल? दादाजी ओ भाइजी कुशल छथि ने?" भरतक आँखि चारू दिसि भवनकेँ शोभाविहीन देखि चकित छल। अन्यमनस्क जकाँ माइक प्रश्नक उत्तर दैत ओ कहि गेलथिन्ह—"आठम दिन विदा भेलहुँ, बाटमे सात राति बितल। नाना ओ मामा कुशल छथि। सनेस सब लेने जे लोक अबैत छल से बाटहि अछि। महाराजक दूत हमरा ततेक अगुतओलक जे हम वेगसँ बढ़ल चल अएलहुँ। मुदा, माए! पिता कतए छथि? सोनाक ई अहाँक पलङ्ग शून्य अछि? केओ इक्ष्वाकु प्रसन्न नहि देखि पड़ैत अछि। वेसी काल पिता अहाँक आलयमे रहैत छथि। अपना महलमे नहि भेटलाह। हमरा जल्दी कहू जे ओ कतए छथि? की बड़की माक महलमे छथि?"

राज्यक लोभसँ मोहित कैकेयी जेना अत्यन्त प्रिय समाचार कहैत होथिन्ह तहिना उल्लाससँ ई घोर अप्रिय समाचार कहलथिन्ह—"जे गति सब प्राणीक होइत छैक सएह गति अहूँक पिताकेँ भेलैन्हि, ओ धर्मात्मा स्वर्ग चल गेलाह।" ई सुनितहिँ भरत 'हतोस्मि' कहैत अचेत भए भूमि पर खसि पड़लाह ओ अत्यन्त कातर स्वरमे विलाप करए लगलाह। कैकेयी हुनका बहुत प्रबोधलथिन्ह ओ तखन ओ माएकेँ कहए लगलाह—"कतेक मनोरथ छल जे पिता रामक अभिषेक करथिन्ह तखन यज्ञ करताह। सब मनोरथ भग्न भए गेल। हृदय फाटए चाहैत अछि। की भेलैन्हि पिताकेँ जे हम आबि नहि सकलहुँ तावतहिँ ओ प्राण त्यागि देल? जाहि स्नेहसँ ओ दुलार करथि से आब के करत? धन्य थिकाह राम जे अपना हाथसँ बापक संस्कार कएलैन्हि। बापक तुल्य हमर जेठ भाए हमर बाप भेलाह, जेठ भाए भेलाह, सब किछु भेलाह। आब तँ ओएह हमरालोकनिक गति छथि हुनके शरणमे जाइ। मुदा माए! ई तँ कहू जे पिता हमरा किछु संवाद नहि कहि गेलाह? अन्तिम कथा जे ओ हमरा हेतु कहि गेलाह से बुझए चाहैत छी।" कैकेयी निर्विकार कहए लगलथिन्ह—"राजा 'हा राम हा लक्ष्मण हा सीता' कहैत प्राण त्यागलैन्हि। अन्तिम कथा ई इएह बजलाह—धन्य थिक ओ लोक जे रामकेँ अयोध्या घूरिकेँ आएल देखतैन्हि।"

भरतक सबटा शोक आश्चर्यमे बदलि गेल। अकचकाएकें ओ पुछलथिन्ह—"से किएक? राम कतए छथि? लक्ष्मण ओ सीताक सङ्ग ओ कतए गेलाह अछि?" कैकेयीकें एख-नहुँ धरि विश्वास छलैन्हि जे ई कथा भरतकें प्रिय होएतैन्हि, ओ बड़ प्रसन्न जकाँ कहए लगलथिन्ह—"राम तँ चीर ओ जटा धारण कए वन चल गेलाह, लक्ष्मण ओ सीता हुनकहि सङ्ग गेल छथिन्ह।" भरतक मुँह डरसँ सुखाए गेलैन्हि। कँपैत स्वरमे भरत पुछलथिन्ह—"कोन एहन दुष्कर्म कएना गेलैन्हि जे रामकें वनवास भेलैन्हि? की कोनहुँ ब्राह्मणक हत्या कएना गेलैन्हि, की कोनहुँ कन्या पर बलात्कार कएना गेलैन्हि? की धनक हेतु ककरहु वध कए देलथिन्ह? कोन अपराधक हुनका दण्ड भेंटतैन्हि?" कैकेयी आब अवसर पाबि अपन कुकृत्य खोलिकें बजलीह, एहि भरोससँ जे भरत ई बूझि प्रसन्न होएताह। ओ कहलथिन्ह—"राम कोनो दुष्कर्म नहि कएलैन्हि, हुनका दण्ड नहि देल गेलैन्हि। ओ कतहु ब्रह्महत्या करथि, परस्त्री दिसि तँ आँखिओ नहि दैत छथि। रामक अभिषेकक समाचार सुनिकें हमहि महाराजकें कह-लिऐन्हि जे रामकें वन पठाए दिऔन्ह ओ राज्य अहाँकें भेटओ। वचन-पाशसँ बद्ध राजा सएह कएलैन्हि। लक्ष्मण ओ सीताक सङ्ग राम वन चल गेलाह। रामक चल गेला उत्तर हुनक वियोगक शोकसँ राजा पञ्चतत्वकें प्राप्त कएल। आब अहाँ राज्य सम्हारू। अहीँक हेतु हम ई सब

कएल। शोक-सन्ताप त्यागू, धैर्य धारण करू। ई नगर ई राज्य सब आब अहीँक थिक। उठू, वसिष्ठकेँ बजबिऔन्ह, काल्हि प्रातःकाल ब्राह्मणलोकनिसँ विधानपूर्वक राज्याभिषेक कराउ।"

शोक ओ संतापसँ भरत विकल छलाह, कैकेयीक कुकृत्यक ई समाचार हुनकहि मुँहसँ सूनि ओ अवाक् रहि गेलाह। पुनः विषाद ओ क्षोभसँ दीन स्वरमे ओ कहए लगलथिन्ह—"हा! ई की अनर्थ अहाँ कएल? पिता छोड़ि स्वर्ग चल गेलाह, भाए छोड़ि वन चल गेलाह, एहन अभागल हमरा राज्यसँ कोन प्रयोजन? राजाकेँ स्वर्ग पठाए आ रामकेँ तपस्वी बनाए अहाँ घाओ पर नोन छीटल अछि। एहि कुलक संहार करए अहाँ अएलहुँ आ पिता ई नहि बूझि सकलाह जे ओ धधकैत अङोराकेँ छातीसँ लगओने छथि! केहन पाप अहाँकेँ सूझल जे राजाक प्राण लए लेलिऐन्हि ओ एहि कुलक सुख उठि गेल। धर्मक कारण राजाक प्राण गेलैन्हि मुदा कहू तँ रामकेँ वनवास किएक देलिऐन्हि? अहाँ सन माए हमर भेलीह तेँ कौसल्या आ सुमित्रा जीबि सकतीह की नहि ताहिमे सन्देह। राम तँ कहिओ अपन माएसँ भिन्न अहाँकेँ नहि बुझलैन्हि, कौसल्या कहिओ अहाँकेँ बहिनसँ आन नहि मानलैन्हि, ओहन माइक ओहन बेटाकेँ वन पठाए अहाँकेँ मनमे कनिओ शोक नहि होइत अछि? राज्यक लोभसँ आन्हरि जेहन

बुझैत छी तेहन हम नहि छी। अहाँ तँ बड़का अनर्थ कएल। राम ओ लक्ष्मणक बिना कोन शक्तिसँ हम राज्यक भार उठाए सकब? राजा सेहो तँ रामहिक बल पर निर्भर छलाह, जुआएल बड़का बलीबर्द जाहि बोझकेँ ऊघि सकैत अछि तकरा एक गोट अजोह बाछा जे पाठि लगबेटा कएलक अछि से कोना घीचि सकत? कदाचित् से हम बुद्धिक बलसँ कैओ सकी मुदा से हम कथमपि नहि करब, अहाँक मनोरथ हम नहि होअए देब। हम तँ अहाँकेँ त्यागि दितहुँ मुदा राम अहाँकेँ माए मानैत छथि, तेँ हम से नहि करब। मुदा ई बुद्धि अहाँकेँ कतएसँ आएल? एहि कुलमे सब दिन जेठे राजा होइत आएल छथि, छोट भाएसब हुनकहि सेवने रहैत आएल छथि। अहाँकेँ ने राजधर्म बुझल अछि ने राज-नीतिक कोनो ज्ञान अछि। राजधर्मे इएह थिकैक जे जेठ राजा हो, इक्ष्वाकुवंशमे तँ से परम धर्म रहलैक अछि। ओहि इक्ष्वाकुवंशक सबटा गौरव अहाँ ध्वस्त कए देल। अपनहुँ तँ अहाँ बड़का राजकुलमे जन्म लेने छी। एहन मोह अहाँकेँ कोना भेल? हम अहाँक इच्छा जे अछि से नहि होअए देब। हम एखनहि वन जाए राम-लक्ष्मणकेँ घुराए अनैत छिऐन्हि आ रामकेँ राजा बनाए हुनक दास भए शान्त होएब।" ई कहैत कहैत भरत कण्ठ छोड़ि घोर चीत्कार कए कानए लगलाह।

सहसा भरत चुप भए गेलाह ओ काटल सालक गाछ जकाँ

जे भूमि पर खसल छलाह, से उठि बेसलाह। क्रोधसँ हुनक आँखि लाल भए गेलैन्हि, श्वास जोर जोरसँ चलए लगलैन्हि, थर थर काँपए लगलाह, सिंह जकाँ गरजि गरजि ओ कहए लगलथिन्ह—"अरे पापिनि! निर्दय! दुष्ट! अहाँक सब मनोरथ चूर्ण भए जाओ, हम मरि जाइ तैओ अहाँक आँखिसँ नोर नहि खसओ। अहाँ नरक जाइ, जाहि लोकमे अहाँक स्वामी छथि से लोक अहाँकेँ नहि भेटओ। राम अहाँकेँ कोन अपकार कएलैन्हि, राजा कोन अपराध कएलैन्हि जे एक गोटाकेँ वन, दोसराकेँ स्वर्ग पठाओल? लोकमे मुह देखएबा योग्य हमरा अहाँ रहए नहि देल। स्वामीक प्राण लेनिहार अहाँ हमर कुलक विनाश करबाक हेतु अश्वपतिक कन्या भए राक्षसी उत्पन्न भेलहुँ। धर्माचरणमे लागलि वेचारी कौसल्याकेँ वेटासँ छोड़ाए अहाँ कोन नरकमे जाएब? जकरा हजारो वेटा रहतैक सेहो माए वेटाक शोच करैत अछि, कौसल्याकेँ एकटा वेटा, हुनक की दशा होएतैन्हि से नहि विचारलहुँ। अहाँ असम्भाव्य छी, बजबाक योग्य नहि छी, अहाँ हमरा टोकि नहि सकैत छी। जाउ, आगिमे जाएकेँ बैसि जाउ, अपनहि दण्डक वन चलि जाउ, गरदनिमे फँसरी लगाए मरि जाउ, अथवा घोर हालाहल विष पीबि लिअ गए। हम अपन बाप ओ भाइक यश ध्वस्त नहि होअए देब। हम जाइत छी, कौसल्याक पुत्र रामकेँ बजबाए राज्यमे प्रतिष्ठित कए हम वनवास लए लेब।"

तावत भरतक आगमन सूनि गोटा गोटी अमात्यलोकनि आबए लगलाह। कैकेयी चुपचाप ठाढ़ि छलीह। भरत बजैत जाइत छलाह—"हमरा राज्यक कोनो काज नहि अछि। हमरा माइक विचार नहि चाही। शत्रुघ्नक सङ्ग हम जखन एतए नहि रही तखन जे किछु भेल से हम नहि जानी। राजा जे हमर अभिषेक स्वीकार कएल से हम नहि जानी। राजा जे रामकें वनवास देल से हम नहि जानी। हम ई सब किछु नहि मानैत छी। अयोध्याक राजा राम थिकाह, रामकें छोड़ि आन केओ अयोध्याक राजा नहि भए सकैत अछि, हम नहि होअए देबैक।" एतबा कहैत भरत उठिकें कौसल्याक भवन दिसि विदा भेलाह। तावत कौसल्या हुनक गरजब सूनि सुमित्राकें कहलथिन्ह—"प्रायः भरत आबि गेलाह। ओ तँ बड़ ज्ञानी छथि। चलू देखिऐन्हि जे हुनक की रूखि छैन्हि।" ओ पाछाँ पाछाँ सुमित्रा कैकेयीक भवन दिसि विदा भेलीह भरत विदा भेले छलाह। दूनू गोटाकें विधवा वेशमे, मलिन, सुखाएल, हताश ओ बताह जकाँ कनैत देखितहिँ भरत ओ शत्रुघ्न हुनका दूहूकें भरि पाँजकें पकड़ि लेलथिन्ह। कौसल्या कहए लगलथिन्ह—"अहाँकें राज्य चाही से कैकेयी से उपाय रचलैन्हि जे अहाँकें चटपट अकण्टक राज्य भेटि गेल। मुदा हमर सोन सन बेटाक कोन अपराध जे ओकरा वनवास भेटलैक? महाराज! कैकेयीकें कहल जाइन्ह जे जतए राम छथि ततए हमरहु

पठाए देतीह, नहि तँ सुमित्राकें सङ्ग कए हम घर छोड़ि विदा भए जाइ। ई सब ऐश्वर्य एसकरे अहाँक थिक। माइक सङ्ग एकर भोग करू।"

कौसल्याक वाक्यबाणसँ आहत भरत बैसि गेलाह ओ कौसल्यांक पाएर पर मूच्छित भए खसि पड़लाह। क्रमशः संज्ञा प्राप्त कए ओ कौसल्याकें कहलथिन्ह—"मा ! रामक प्रति हमर स्नेह ओ भक्ति अहाँ जनैत छी तखन हमर हृदयक घावमे अहाँ सुइआ किएक भोकैत छी।" भरत घोरसँ घोर शपथ पर शपथ खाए लगलाह—"रामक वनवासमे जँ हमर अनुमति छल हो तँ जघन्यसँ जघन्य पापक फल हमरा भेटओ।"

भरत शपथ करैत बजैत छलाह। पति ओ पुत्रक वियोगसँ दीना कौसल्या भरतकें चैतन्य-शून्य भेल जाइत देखि द्रवित भए गेलीह। ओ भरतकें भरि पाँजकें पकड़ि अपन हृदयसं लगाए कहए लगलथिन्ह—"वत्स ! आब शपथक कोनो काज नहि छैक। हमरालोकनि सभक, एहि कुलक भाग्य जे अहाँ धर्मक मार्गसं विचलित नहि भेल छी, आब अहाँक शोकसँ हमर शोक नव भए गेल अछि। आब अहाँ शान्त होउ ओ सत्य पर स्थिर रहू।" एहिना भरतकें प्रबोधैत दूनू भाइकें बोल-भरोस दैत दूनू माए भरि राति दूहू बेटाक संग बिताए देलि।

प्रातःकाल गुरु वसिष्ठ अएलाह ओ शोकसँ सन्तप्त भरतकें भूमि पर लोटाइत देखि कहलथिन्ह—"वत्स ! अहाँ

ज्ञानी छी, शोक कएने की होएत ? एखन जे कर्त्तव्य संप्राप्त अछि से करू। महाराजक अन्त्येष्टि-क्रिया करबाक अछि।" भरत उठलाह। तेलक कराहसँ महाराजक शव बहार कएल गेल, एकदम पीअर, बूझि पड़ैक जेना सूतल रहथि। रत्न-जटित पलंग पर शय्या सुसज्जित कराए ओहि पर राजाकेँ सुताए बहुमूल्य ओढ़ना ओढ़ाए देल गेल। भरत हुनका एना पड़ल देखि पुनः विलाप करए लगलाह—"दादाजी! अहाँ ई की कएल, हमरा आबए नहि देलहुँ, राम-लक्ष्मण ओ सीताकेँ वन पठाए देलिऐन्हि, रामसँ रहित अयोध्याकेँ, धन-जन-परिवारकेँ ककरा पर छोड़ि चल गेलहुँ! पृथिवीकेँ विधवा कए अहाँ कतए चल गेलहुँ।" एना विलाप करैत भरतकेँ वसिष्ठ पुनः कहल—"वत्स! आगाँ काज करबाक अछि। आब चलू। राजाक अन्तिम संस्कार सम्पन्न कराउ।" भरत विदा भेलाह। ऋत्विक पुरोहित ओ आचार्य अग्न्या-गारमे आगि लए आगाँ विदा भेलाह। राजाकेँ पलंग पालकी पर राखि वेदज्ञ ब्राह्मणलोकनि लए चललाह। कौसल्या प्रभृति सब रानी पालकी पर चढ़ि-चढ़ि विदा भेलीह। सब राजपुरुष ओ नगरक लोक पाछाँ-पाछाँ चलल। बाटमे सोन-चानी-वस्त्र-कम्बल सब दरिद्रकेँ दान दैत जलूस सरयू तट पर पहुँचल। चानन, अगुरु, सरड़ प्रभृति सुगन्धित काठक चिता बनाओल गेल। ऋत्विकलोकनि वेदमन्त्रक जप करैत छलाह, सामवेदीलोकनि सामगान करैत छल, रानीलोकनि

कुररी जकाँ क्रन्दन करैत छलीह, पुरवासी कण्ठ छोड़ि कनैत छलाह ओ ब्राह्मणलोकनि राजाकेँ ओहि चितापर राखि देल, भरत आगि लगाए संज्ञाशून्य भए बैसि रहलाह। राजाक शरीर जरिकेँ भस्म भए गेल तखन सबकेओ सरयूमे पैसि स्नान कएल ओ दक्षिणाभिमुख भए राजाकेँ तियतोयाञ्जलि दए-दए राजाक अन्तिम संस्कार विधिवत् सम्पन्न कएल। तदुत्तर नगर आबि अशौचक दशो दिन सबकेओ भूमि पर बिताओल।

श्राद्ध सविधि सम्पन्न भेल। ब्राह्मणलोकनिकेँ असंख्य गाए, रत्न, अन्न, दास-दासी, भूमि, हाथी, घोड़ा, नाना प्रकारक रथ, घर, शय्या, पाक ओ भोजन आदिक पात्र— कतेक वस्तु दान देल गेल। तेरहम दिन अस्थि-सञ्चयक निमित्त भरत पुनः सरयूतट पर जाए उपस्थित भेलाह परन्तु चिताक समीप जाए भरत पुनः विलाप करए लगलाह। पिताक गुण मन पाड़ि-पाड़ि भरत विलाप करैत-करैत अचेत भए भूमि पर खसि पड़लाह, शत्रुघ्न सेहो खसि पड़लाह। सबलोक दौड़ल, शोकसँ अभिभूत सबलोक दूनू भाइकेँ उठ-ओलक। भरत एतबे कहथिन्ह जे पिता स्वर्ग चल गेलाह, भाए वनमे छथि, कोन बल पर हम नगर जाएब, हम आगिमे प्रवेश करब, हम तपोवन चल जाएब। तावत गुरु वसिष्ठ भरतकेँ ओ सुमन्त्र शत्रुघ्नकेँ प्रबोधए लगलाह। कहलथिन्ह-- "तीनटा एहन द्वन्द्व जीवनमे छैक, जेकर परिहार नहि

छैक—भूख ओ पिआस, शोक ओ मोह, जरा ओ मृत्यु—एहि विषयसँ एना विह्वल नहि होइ। उठू, अस्थिसञ्चय मात्र कृत्य अवशेष अछि। ई सम्पन्न कए पिताक अन्त्येष्टि-क्रिया सम्पन्न कएल जाओ।" सबटा काज सम्पन्न कए पुनः सब केओ महल अएलाह।

भरतक चित्तमे एकटा मात्र चिन्तना, वन जाए रामकेँ फिराए आनब। ओएहटा हुनक गप्प, ओकरे विचार, ओकरे योजना। शत्रुघ्न हुनका बुझबथिन्ह—"सब जीवक जे गति थिकैक, पिता ताहि गतिकेँ प्राप्त कएल, ताहि हेतु हमरा-लोकनि एतेक दुःख किएक करी। मुदा रामकेँ तँ वन पठाओल राजा नहि, एक गोट स्त्री। लक्ष्मण की करैत छलाह? हुनका उचित छलैन्हि जे राजाकेँ पकड़ि रामकेँ छोड़ाए लितथि। नारीक वशमे राजा भए गेलाह तखन तँ न्याय इएह कहैत अछि जे राजाकेँ पकड़ि राखो। राजा जे उत्पथ भेलाह से नारीक वशमे, अपना इच्छासँ नहि।" ई कहितहिँ छलाह ताबत ओ देखैत छथि जे दुवारि द्वार देने गहना-गुड़िआ पहिरने, सौँसे देह सुगन्धित चाननक लेप कएने, विलक्षण वस्त्र सबसँ झाँपलि, रंग-विरंगक कमरकस आदिसँ विभूषित झुनझुन करैत आ सखीक झुण्डसँ घेरलि हुलसैत-फुलसैत मन्थरा आबि रहलि अछि जे बुझि पड़ैक जेना सिङार-पेटार कएने बनरनी रस्सीसँ बान्हलि आबि रहलि अछि। द्वार पर नियुक्त लोक सब आबिकेँ शत्रुघ्नसँ

निवेदन कएलक जे इएह थिक सब अनर्थक जड़ि जकर द्वारेँ राजाक प्राण गेल आ रामकेँ वनवास भेल। शत्रुघ्नक तामस भभकि उठलैन्हि। ई कहैत जे "जाहि कुकर्मसँ तोँ हमरा बाप आ सब भाइकेँ घोर दुःख देलेँ तकर फल आब चाख" ओकरा झोँट पकड़ि पृथिवी पर पटकि देल आ ओकरा घिसिअबैत अन्दर दिशि विदा भेलाह। मन्थरा तेहन चीत्कार कएलक जे सौँसे महल काँपि उठल। ओकर सखीसब डरसँ लंक लेलक आ सब कौसल्याक महल दिसि पड़ाइलि। शत्रुघ्नक रुद्र रूप देखि कैकेयी डेराए गेलीह ओ चुपचाप भरतक लग जाए ठाढ़ि भए गेलीह। भरत हाँ-हाँ करैत दौड़लाह आ शत्रुघ्नकेँ शान्त करैत कहए लगलथिन्ह—"स्त्रीगणकेँ नहि मारी, छोड़ि दिऔक। अहाँ की बुझैत छिएक जे हम पापकारिणी अपना माइकेँ छोड़ि दितिऐन्हि, मुदा राम यदि से सुनताह तँ बिगड़ि जएताह। एहू दुष्टाकेँ जँ मारबैक तँ राम हमरा पर ओ अहाँ पर बिगड़ि जएताह, एकरा क्षमा कए दिऔक।" भरतक कथा सूनि रामक डरेँ शत्रुघ्न चट ओकरा छोड़ि देल। मन्थरा जान लए पड़ाइलि।

चौदहम दिन प्रातःकाल राज्यक समस्त कर्मचारीगण अभिषेकक समटल संभार ओरिअओने वसिष्ठकेँ आगाँ कएने ब्राह्मणलोकनिक सङ्ग महलमे उपस्थित भेलाह ओ भरतक आगाँ निवेदन कएल—"महाराज दशरथ स्वर्ग चल गेलाह,

रामकें वन पठाए देलथिन्ह, लक्ष्मण हुनकहि सङ्ग गेल छथि। राज्य बिनु राजाक अनायक अछि। अपने राजा भेल जाओ। अभिषेकक सब संभार प्रस्तुत अछि। कुलगुरु वसिष्ठ उपस्थित छथि! समस्त पुरवासी ओ राज्यक प्रजा चाहैत अछि जे अपने तुरन्त अभिषेक कराए कुलक्रमागत एहि राज्यक भार ग्रहण कएल जाए, देशक ओ प्रजाक पालन कएल जाए।"

अभिषेकक सामग्रीक प्रदक्षिण कए भरत अत्यन्त नम्र भए कहए लगलथिन्ह—"एहि महाकुलमे राज्य सब दिन जेठकें होइत अएलैक अछि। ई जनैत राजनीतिकुशल अपनेलोकनि हमरा एना किएक कहैत छी? राम हमर जेठ भाए छथि, राज्य हुनक थिकैन्हि, राजा ओएह होएताह। हम चौदह वर्ष वनमे वास करब। तें राज्यक विशाल चतुरङ्गिणी सेना साजल जाओ। हम ओहि वन जाएब जाहि वनमे राम छथि ओ हुनका लए आनब। अभिषेकक सब संभार संग लेने चलू; आगाँ आगाँ संभार लेने हमरा-लोकनि चली। रामकें ताकि ओतहि हुनक अभिषेक कर-बैन्हि। धर्मतः जे राजा थिकाह तनिका राजा बनाए हमरा-लोकनि हुनका लए अनबैन्हि। लोभसँ आन्हरि अपना माइक मनोरथ हम नहि पूरब। हम घोर वनमे वास करब, राम राजा होएताह। तें देश भरिक शिल्पीकें विदा करू जे रास्ता ठीक करए; रक्षक सेनाकें कहिऔक जे आगाँ बढ़ि

रास्ताकेँ निरापद करए। 'हमरालोकनि तैआर होइत जाइ जे अविलम्ब विदा होइ।" भरतक ई वचन सूनि समस्त प्रजा धन्य-धन्य कहि उठल ओ भरतक भूरि-भूरि प्रशंसा करए लागल "जे भमतः जेठकेँ जे राज्य प्राप्त छैन्हि से अहाँ हुनका देअए चाहैत छिऐन्हि, अहाँक सर्वथा मङ्गल हो।"

निरीक्षक राजपुरुषलोकनिक दलक दल शिल्पीकेँ लए विदा भेलाह। जे रास्ता जनैत छलाह, जे रास्ता नापए जनैत छलाह, जे रास्ता बनबए जनैत छलाह, रास्ता बनएबामे जे काज पड़ैत छैक, गाछ काटब, माटि काटब आ भरब इत्यादि से सब जे जनैत छलाह, रास्तामे मध्य मध्य जे विश्रामक स्थान बिछबाक ओ ओतए सब सुभीता प्रस्तुत करबाक काज जे लोकनि जनैत छलाह—सब केओ चललाह ओ समस्त मार्ग केँ सरि करैत, ठाम ठाम विश्रामक हेतु सबटा प्रबन्ध करैत गेलाह।

भोरे सूत, मागध ओ वन्दीलोकनि महलक बाहरी कक्षमे एकत्र होइत गेलाह ओ सोनाक नगाड़ा, दुन्दुभी, मृदङ्ग प्रभृति वाद्ययन्त्रक सङ्ग मङ्गल-गान करए लगलाह। भरतकेँ निन्द टुटलैन्हि ओ मङ्गल-ध्वनि सुनितहिँ ओ दुःखसँ सन्तप्त भए उठलाह। गीत-वादनकेँ तुरन्त बन्द कराए ओ शत्रुघ्नकेँ कहए लगलथिन्ह—"देखू शत्रुघ्न! हमर माए लोकक कतेकटा अनिष्ट कएलथिन्ह, राजाकेँ स्वर्ग पठाए हमरा पर दुःखक दुर्वह भार दए देलैन्हि। आइ पिताजीक ई धर्म-मूला

राजनदमो जलमे पड़लि बिना नाविकक नाओ जकाँ डगमगाए रहल छथि। हमरा लोकनिक सबसँ पैघ स्वामी ओ सरक्षक भाइजीकेँ माए धर्मक विचार नहि कए वनवास दए देलथिन्ह।"

जखन भरत एहि प्रकारेँ करुण विलाप कए रहल छलाह, तखनहिँ राजधर्मक ज्ञाता महर्षि वसिष्ठ सभाभवनमे प्रवेश कएल। स्वस्तिकाकार बिछाओनसँ बिछाओल सोनाक पीढ़ी पर बैसि ओ दूतसबकेँ आज्ञा देल—"अहाँ सब शीघ्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, योद्धा, अमात्य ओ सेनापतिलोकनिकेँ बजा कए आनू। अन्यान्य राजकुमारक सङ्ग यशस्वी भरत ओ शत्रुघ्नकेँ बजाए अनिऔन्ह, मन्त्री युधाजित् ओ सुमन्त्रकेँ, आओर जे जे हितेच्छु पुरुष छथि, सबकेँ शीघ्र बजाए अनिऔन्ह। हमरा हुनका सबहुसँ आवश्यक कार्य अछि।" तदुत्तर घोड़ा, हाथी, रथसँ उपस्थित भेल आगन्तुकलोकनिक घोर कोलाहल आरम्भ भेल। तत्पश्चात् जखन भरत उपस्थित भेलाह तँ अमात्य, सेनापति, उपस्थित प्रजा प्रभृति हुनका दशरथहि जकाँ, देवता लोकनि जेना इन्द्रक अभिनन्दन करैत छथि, तहिना अभिनन्दन कएल। ओ सभा भरतसँ ओहिना सुशोभित भेल जेना पहिने दशरथक उपस्थितिसँ होइत छल।

राजसभा नगरक श्रेष्ठ श्रेष्ठ व्यक्तिसँ भरल छल। पैघ पैघ ऋषि-मुनि ओ उत्तम उत्तम विद्वान यथायोग्य आसन

पर बैसल छलाह। तखन धर्मज्ञ पुरोहित वशिष्ठ राजाक सब आप्त लोकके उपस्थित देखि भरतसँ मधुर वचन कहए लगलथिन्ह—"वत्स ! राजा दशरथ धन-धान्यसँ भरल-पुरल एहि समृद्धिशाली पृथिवी अहाँके दए धर्मक आचरण करैत स्वयं स्वर्गवासी भेलाह। राम सेहो पिताज्ञाक उल्लङ्घन ओहिना नहि कएल जेना चन्द्रमा अपन चन्द्रिकाके नहि छोड़ैत अछि। एहि प्रकारेँ पिता ओ जेठ भाए दूहू अहाँके अकण्टक राज्य दए गेलाह अछि। अतः अहाँ अपन मन्त्री-लोकनिके प्रसन्न रखैत प्रजाक पालन करू आ शीघ्र अभिषेक कराए लिअ।" ई कथा सूनि धर्मज्ञ भरत शोकाकुल भए गेलाह, भरल सभामे नोर बहबए लगलाह, पुनः कलहंसक समान मधुर स्वरमे विलाप करैत अपन पुरोहित वशिष्ठकेँ उलहन दैत कहलथिन्ह—"जे ब्रह्मचर्यक पालन कएल, जे सम्पूर्ण विद्यामे निष्णात भेलाह तथा जे सतत धर्मक हेतु प्रयत्नशील रहैत छथि, तेहन बुद्धिमान भाइजीक राज्यकेँ हमरासन मनुष्य कोना अपहरण कए सकैत अछि ? महा-राज दशरथक कोनहु पुत्र जेठ भाएक राज्यक अपहरण कोना कए सकैत छथि ? एहि राज्यक ओ स्वयं हमर स्वामी श्रीराम छथि, से बूझि एहि सभामे अहाँकेँ धर्म-सङ्गत कथा [illegible] उचित थिक। धर्मात्मा राम हमरासँ अवस्थामे पैघ छथि, गुणमे पैघ छथि, दिलीप ओ नहुषक समान तेजस्वी छथि, अतः सब तरहेँ एहि राज्यक ओएह अधिकारी छथि। पापक

आचरण तँ नीच मनुष्य करैत अछि, पाप निश्चय मनुष्यकें नरकमे पहुँचाए दैत अछि। यदि जेठ भाइक राज्यकें लेबाक पापाचरण हम करी तँ निश्चये हम इक्ष्वाकुकुलक कलंक बुझल जाएब। हमर मा पाप कएलैन्हि, से हम पसिन्द नहि करैत छी। अतः एतए रहितहुँ दुर्गम वनक वासी श्रीरामकें हाथ जोड़ि प्रणाम करैत छिऐन्हि। हम हुनकरहि अनुसरण करब, मनुष्यमे श्रेष्ठ ओएह एहि राज्यक राजा छथि, ओएह तीनू लोकक राजा होएबा योग्य छथि।" भरतक धर्म-युक्त वचन सूनि सभ सभासद हर्षातिरेकसँ नोर बहए लगलाह। भरत पुनः बजलाह—"यदि हम भाइजीकें वनसँ घुराए नहि आनि सकब तँ हमहु नरश्रेष्ठ लक्ष्मण जकाँ ओतहि निवास करब। हम अहाँ सबहु श्रेष्ठ ओ पूजनीय सभासदक समक्ष हुनका बलपूर्वक घुराए अनबाक सब सम्भव चेष्टा करब। मार्ग-शोधमे कुशल कार्यकर्त्ता गणकें हम पहिनहिँ आगाँ पठाए देल अछि, तँ विलम्ब उचित नहि, भाइजी लग यथाशीघ्र चलबे उचित थिक।"

तत्पश्चात् भ्रातृवत्सल भरत मन्त्रवेत्ता सुमन्त्रणकें कहलथिन्ह—"सुमन्त्र! अहाँ जल्दी जाउ, वन-चलबाक हमर आज्ञाकें सबकें सूचित कए दिऔन्ह, सेनाकें सेहो शीघ्र तैआर करू।" महात्मा भरतक प्रिय सन्देशकें प्रसन्न मनें सुमन्त्र सबकें सूचित कए देल।

"श्री रामचन्द्रजीकें घुराए अनबाक हेतु भरत जाइत छथि,

सेनाकेँ सेहो संग चलबाक आदेश भेटलैक अछि"—ई समाचार सुनितहिँ सभ प्रजा ओ सेनापतिलोकनि प्रसन्न भए उठलाह। ई समाचार सूनि सैनिकक स्त्रीगण पुलकित भए उठलीह ओ जल्दी जल्दी अपन अपन पतिकेँ तैआर होएबाक हेतु प्रेरित करए लगलीह। सेनापति घोड़ा, बैलगाड़ी तथा मनक समान द्रुतगामी रथ-सहित सेनाकेँ सबोक यात्राक हेतु शीघ्र प्रस्तुत होएबाक आज्ञा देल। सेनाकेँ विदा होएबाक हेतु तैआर देखि वसिष्ठ लग ठाढ़ सुमन्त्रकेँ भरत कहलथिन्ह—"अहाँ हमर रथकेँ शीघ्र तैआर कए आनू।" भरतक आज्ञाकेँ शिरोधार्य कए सुमन्त्र बड़ हर्षक संग गेलाह ओ उत्तम घोड़ासँ जोतल रथकेँ लए घुरि अएलाह। तखन सुदृढ़ ओ सत्यपरायण पराक्रमी प्रतापी भरत अपन जेठ भाइकेँ घुरबाक हेतु तैआर करबाक निमित्त यात्राक उद्देश्यसँ बजलाह—"सुमन्त्र! अहाँ जल्दी सेनापति लग जाउ, हुनकालोकनिकेँ कहि सेनाकेँ काल्हि विदा होएबाक प्रबन्ध करू, कारण, हम सब लोकक कल्याणक हेतु वनवासी रामकेँ प्रसन्न कए एतए लए आनए चाहैत छी।"

भरतक ई उत्तम आज्ञा पाबि सूत-पुत्र सुमन्त्र अपनाकेँ सफल मनोरथ बुझलन्हि ओ प्रजावर्गक सभ प्रधान प्रधान व्यक्तिकेँ, सेनापतिकेँ तथा सुहृदलोकनिकेँ भरतक आदेश सुनाए देल। तखन सब घरमे भरतक सङ्ग चलबाक जल्दी जल्दी प्रबन्ध होअए लागल।

प्रात भेल। भरत ऊठि नित्य-कर्म सम्पन्न कए रथ पर आरूढ़ भेलाह, ओ रामचन्द्रक दर्शन करबाक निमित्त सबकें शीघ्रतापूर्वक प्रस्थान करबाक आज्ञा देल। हुनक आगाँ अमात्यवर्ग ओ पुरोहित वसिष्ठ रथ पर बैसल यात्रा कए रहल छलाह, रथसब सूर्य-यान जकाँ आलोकित बूझि पड़ैत छल! यात्रा करैत इक्ष्वाकुकुलनन्दन भरतक पाछाँ पाछाँ विधिपूर्वक सुसज्जित नओ हजार हाथी जाए रहल छल, तकर पाछाँ साठि हजार रथ ओ नाना प्रकारक अस्त्र-शस्त्र धारण कएने धनुर्धर योद्धा जा रहल छलाह। तहिना एक लाख घोड़-सवार राजकुमार भरतक अनुसरण कए रहल छल। कैकेयी, सुमित्रा ओ यशस्विनी सुमित्रा सेहो श्रीरामकें घुरा अनबाक उद्देश्यसँ कएल एहि यात्रामे प्रसन्न मनें तेजस्वी रथ पर प्रस्थित छलीह। ब्राह्मण आदि त्रैवार्णिक समूह प्रसन्नचित्त, राम ओ लक्ष्मणक दर्शनक आशासँ प्रफुल्लित हुनकहि विषयमे गप्प-सप्प करैत यात्रा कए रहल छलाह—"दृढ़ताक संग जे उत्तम व्रतक पालन करैत छथि, सांसारिक दुःखक जे निवारण करैत छथि. ताहि स्थितप्रज्ञ, श्यामवर्ण महाबाहु रामक दर्शन हमरालोकनि कखन कए सकब? उदित होइतहिँ सूर्य जेना समग्र संसारक घोर अन्हारकें हरि लैत छथि, तहिना श्रीरामक दर्शन मात्रसँ हमरालोकनिक सम्पूर्ण शोक ओ सन्ताप क्षण भरिमे दूर भए जाएत।" एहि प्रकारक गप्प-सप्प करैत, अत्यन्त आनन्दित

होइत, एक दोसराकेँ आलिङ्गन करैत अयोध्याक नागरिक-गण यात्रा कए रहल छलाह। नगरक जतेक सम्मानित व्यक्ति छलाह, जतेक व्यापारी छलाह, जतेक शुभ विचारक प्रजाजन छलाह, सब बड़ हर्षसँ भरत श्रीरामसँ भेँट करबाक निमित्त प्रस्थित भेलाह। मणिकेँ सान पर चढ़ाए चमका देबामे जे पटु मणिकार छलाह, सुन्दर-सुन्दर पात्र बनएबामे निष्णात जे कुम्हार छलाह, वस्त्र बनएबाक कलाक जे विशेषज्ञ छलाह, शस्त्र-निर्माण करबामे जे कुशल छलाह, मयूरक पाँखिसँ छत्र-व्यजन प्रभृति जे बनबए जनैत छलाह, मणि-मोती आदिमे जे छेद करए जनैत छलाह, दीवार ओ वेदी आदिमे शोभाक जे सम्पादन करए जनैत छलाह, हाथीक दाँत आदिसँ जे नाना प्रकारक वस्तु बनएबामे समर्थ छलाह, एहिना अपन-अपन कार्यमे कुशल गन्धी, सोनार, वैद्य, धोबी, दर्जी, सस्त्रीक नट, केओट एवं समाहित चित्तक सदाचारी वेदवेत्ता सहस्रो ब्राह्मण बैलगाड़ी पर चढ़ि-चढ़ि वन दिसि यात्रा करैत भरतक पाछाँ पाछाँ चललाह। सब लोकक भेष-भूषा सुन्दर छल, सब केओ शुद्ध वस्त्र धारण कएने छलाह। सब गोटाक शरीरमे तामक समान लाल अङ्गराग लागल छल ओ सब केओ नाना प्रकारक वाहन पर चढ़ल भरतक अनु-सरण कए रहल छलाह।

एहि प्रकारेँ रथ, पालकी, घोड़ा ओ हाथी द्वारा चलैत-चलैत सुदूर मार्ग पार कए सबकेओ शृङ्गवेरपुरमे सुरसरिताक

तट पर पहुँचैत गेलाह, जतए निषादराज गुह सबन्धु-बान्धव-सखाक संग ओहि देशक रक्षामे तत्पर भेल निवास करैत छल। गंगातट पर पहुँचि भरतक अनुसरण करैत सेना रुकि गेल। पुण्य-सरिता भागीरथीक दर्शन कए तथा अपन सेनाकेँ थाकल जानि भरत कला-कुशल वाणीमे समस्त अमात्यवर्गकेँ कहलथिन्ह—"अहाँ सबहु सैनिकलोकनिकेँ एतहि विश्राम करबाक हेतु कहिऔन्ह। भरि राति एतहि विश्राम कए हमरालोकनि काल्हि भोरे सागरगामिनि एहि सुरसरिताकेँ पार करैत जाएब। एतए थम्हबाक दोसरो उद्देश्य अछि, हमरा गंगाजीक पवित्र जलमे प्रवेश कए पारलौकिक कल्याणक हेतु दादाजीकेँ जलाञ्जलि देबाक इच्छा अछि।" मन्त्रीवर्ग 'तथास्तु' कहि भरतक आज्ञाकेँ शिरोधार्य कएल, सब सैनिकक इच्छानुसार भिन्न-भिन्न स्थान पर विश्रामक व्यवस्था भेल। तट-प्रान्तमे खेमाक महानगर बसि गेल। सब व्यवस्था सम्पन्न भेलाक पश्चात्, श्रीरामकेँ घुरएबाक विषयमे चिन्ता करैत भरत सेहो ओतहि निवास कएल।

एमहर निषादराज गुह नदीक तट पर रुकल भरतक सेनाकेँ देखि, अपन चारूकात बैसल बन्धुबान्धवसँ कहए लागल—"बन्धु! एहि कात जे विशाल सेना रुकल अछि, समुद्रक सदृश जे अपार लगैत अछि, कतबहु विचार करैत छी, तकर आगमनक कारण नहि बुझि पड़ैत अछि। एहि सेनाक संग निश्चये दुर्बुद्धि भरत सेहो आएल अछि।

कोविदार-चिह्नसँ युक्त जे ध्वजा फहरा रहल अछि, से निश्चये ओकरहि रथ पर फहराइत अछि। हम अनुमान करैत छी जे समन्त्रीक भरत हमरालोकनिकेँ रस्सीसँ बन्हबाए देत अथवा मरबाइए देत। तत्पश्चात् पिता द्वारा राज्यसँ निष्काषित दशरथ-नन्दन रामक सेहो वध कए देत। कैकेयी-पुत्र भरत राजा दशरथक सुदुर्लभ राजलक्ष्मीकेँ एसकरे हड़पए चाहैत अछि। एही हेतुएँ ओ श्रीरामक वनमे हत्या करबाक निमित्त जाए रहल अछि। मुदा दशरथ-कुमार राम हमर स्वामी छथि, सखा छथि। अतः हुनक हितक हेतु अहाँ सब केओ अस्त्र-शस्त्रसँ सुसज्जित भए एतहि गंगा तट पर उपस्थित रहू। सब मलाह सेनाक संग नदीक रक्षा करैत तटहि पर ठाढ़ रहू, नाओमे राखल फल मूल आदिक आहार कए आइ राति एतहि बिताउ। हमरालोकनिकेँ पाँच सए नाओ अछि, प्रत्येक नाओ पर सए सए युवक योद्धा युद्ध-सामग्रीसँ युक्त भए बैसल रहू।" एहि प्रकारेँ गुह सबगोटाकेँ आदेश देल। पुनः ओ बाजल— "यदि भरतक भाव श्रीरामक प्रति सन्तोषजनक होएत, तखनहि हुनक सेना आइ सकुशल गङ्गाकेँ पार कए सकत।"

निषादराज गुह विशाल सेनाक सङ्ग भरतक आगमनक उद्देश्य बुझबाक हेतु हुनकासँ मिलबाक विचार कएल, मिश्री, मधु, फल-मूल आदि उपहारक सामग्री लए ओ भरत लग चलल। निषादराजकेँ अबैत देखि समयोचित कर्त-

व्यक मन्त्रणा देबामे पटु प्रतापी सूतपुत्र सुमन्त्र सविनय भरतसँ निवेदन कएल—"रघुकुल-भूषण ! ई बूढ़ निषादराज गुह सहस्रो बन्धु-बान्धवक सङ्ग एतहि निवास करैत अछि। ई अपनेक जेठ भाइक सखा अछि। एकरा दण्डकारण्यक मार्गक उत्तम ज्ञान होएतैक। एकरा अवश्य बूझल होएतैक जे दूहू भाइ राम-लक्ष्मण एखन कतए निवास करैत छथि। तेँ एकरासँ अवश्य भेँट कएल जाओ।"

सुमन्त्रणक शुभ परामर्श सुनि भरत निषादराजसँ भेँट करबाक व्यवस्था कएल। अनुमति पाबि गुह भाइ-बन्धुक संग प्रसन्नतापूर्वक उपस्थित भेल, भरतसँ भेँट कए बाजल—"एहि वन-प्रदेशकेँ अपने अपन फुलबाड़ीक सदृश बुझल जाओ! अपने अपन आगमनक पूर्व-सूचना नहि देल, हम अपनेक स्वागतक किछु प्रबन्ध नहि कए सकलहुँ। तथापि हमरा जे किछु अछि, से सब अपनेक सेवामे अर्पित अछि। निषादलोकनिक घर अपने घर बुझल जाओ, एतए सुखपूर्वक निवास कएल जाओ। ई फल-मूल अपनेक सेवामे प्रस्तुत अछि। एकरा निषादलोकनि अपनहि हाथेँ तोड़ि अनलैन्हि अछि। एकरा संग अन्यान्य वन्य पदार्थ सेहो अछि, अपने एकरा ग्रहण कएल जाओ। सम्भवतः सेना आइ राति एतहि रहत ओ हमर आतिथ्य स्वीकार करत। नाना प्रकारक मनोवांछित वस्तुसँ सेना-सहित अपनेक हम सत्कार करब।"

निषादराज गुहक वचन सूनि महाबुद्धिमान भरत युक्ति पूर्वक उत्तर दैत कहलथिन्ह —"भाइ! अहाँ हमर जेठ भाइक सखा थिकहुँ। अहाँ हमर एतेक पैघ सेनाक सत्कार करए चाहैत छी, अहाँक मनोरथ बड़ ऊँच अछि, एकरा पूर्ण भेल बुझू, अहाँक श्रद्धहिसँ हमरा सबहुक सत्कार भए गेल।" एतबा कहि महातेजस्वी भरत गन्तव्य मार्ग दिसि संकेत करैत पुनः गुहसँ उत्तम वाणीमे पुछलथिन्ह—"निषादराज। एहि दूनू मार्गमे ककरा अनुसरण कए भारद्वाज मुनिक आश्रम जाए सकैत छी? गंगा-तटक ई प्रदेश तँ बड़ गहन बूझि पड़ैत अछि, एकरा पार कए आगाँ बढ़ब तँ बड़ कठिन अछि!"

बुद्धिमान भरतक वचन सुनि गुह कर जोड़ि बाजल—"महाबली राजकुमार! अपनेक संग बहुतो मलाह जाएत जे एहि प्रदेशसँ सुपरिचित अछि, दोसर हमहूँ अपनेक सङ्ग जाएब। मुदा ई तँ कहल जाओ, श्रीरामचन्द्रक प्रति अपने अकस्मात् कोनो दुर्भावना लए तँ नहि जाए रहल छी! अपनेक एतेक विशाल सेना हमर मनमे शङ्का उत्पन्न कए रहल अछि।"

गुहक ई मर्म-कथा सूनि निर्मल नभक समान भरत मधुर वाणीमे कहलथिन्ह—"निषादराज! एहन समय कहिओ संप्राप्त नहि होअए। अहाँक गप्प सूनि हमरा-बड़ कष्ट भेल। अहाँ हमरा पर सन्देह नहि करू, श्रीराम हमर जेठ भाइ

थिकाह, हुनका हम पिता सदृश आदर करैत छिऐन्हि। ककुत्स्थकुल-भूषण श्रीराम वन-वास करैत छथि, तेँ हुनका हम घुरा लए जएबाक हेतु जाए रहल छी। गुह! हम सत्य कथा कहि रहल छी, अहाँ हमरा अन्यथा नहि बुझू।"

भरतक वचन सूनि निषादराज प्रसन्नतासँ प्रफुल्लित भए उठल, पुनः हर्षसँ भरल ओ भरतसँ कहलक—"बिना प्रयत्नक प्राप्त राज्यकेँ अपने त्यागए चाहैत छी, से अपने धन्य थिकहुँ। अपने सन धर्मात्मा एहि भूमण्डलमे दोसर केओ नहि देखबामे अबैत अछि। कष्टसँ भरल वनमे वास करैत रामकेँ अपने घुरा लए जाए चाहैत छी, एहिसँ तीनू लोकमे अपनेकेँ अक्षय कीर्त्ति प्राप्त होएत।" गुह भरतक बारंबार प्रशंसा करैत छलाह, तखनहि सूर्यदेवक प्रभा अदृश्य भए गेलैन्हि, रात्रिक अन्हार चारू कात पसरि गेल।

धर्मप्राण भरत शोकक योग्य नहि छलाह, तथापि श्रीरामक चिन्ता करैत-करैत शोकमे डूबि गेलाह। दावानलसँ सन्तप्त गाछक धोधरिमे नुकाएल आगि ओकरा जेना शनैः शनैः जरबैत रहैत छैक तहिना पिताक मृत्युक चिन्ताग्नि ओ जेठ भाइक वियोगक आगि हुनका जरबए लागल; सूर्यातपसँ जेना हिमाद्रि अपन हिमपुञ्जकेँ पघिला-पघिला बहबए लगैत अछि, तहिना शोकाग्निक सन्तापसँ भरल अपन अङ्ग-अङ्गसँ स्वेद बहबए लगलाह। हुनक मन बड़ दुःखी छल, दीर्घ निश्वास लैत छलाह। मानसिक चिन्तासँ आक्रान्त हुनका

शान्ति नहि भेटैत छलैन्हि। गुहसँ भेँट करबाक काल हुनक इएह स्थिति छलैन्हि, हुनक मन बड़ दुःखी छल, ओ अपन जेठ भाइक हेतु बड़ चिन्तित छलाह। अतः गुह हुनका आश्वासन देल।

भरतक इच्छा जानि वनचारी गुह राम ओ लक्ष्मणक प्रसंग गप्प कहए लागल जखन दूहू भाइ एही बाटेँ वन जाइत छलाह। सबसँ पहिने ओ लक्ष्मणक सद्भावक वर्णन करैत बाजल—"जखन रातिमे एतहि सीता सहित राम सूति रहलाह, तँ लक्ष्मण उत्तम धनुष-बाण धारण कए जगैत रहलाह। हुनकहु सुतबाक हम आग्रह कएल, सुखद शय्याक प्रबन्ध कए रघुनाथक रक्षाक आश्वासन देल, परन्तु ओ अनुनय-वचन द्वारा से अस्वीकार कए देल। ओ कहलैन्हि—'निषादराज! दशरथनन्दन राम सीता-सहित भूमिओहि पर सूतल छथि तँ हम उत्तम शय्या पर कोना सूति सकैत छी, स्वादिष्ट अन्न कोना खा सकैत छी आ दोसर-दोसर सुखकेँ कोना भोग कए सकैत छी! सुर-असुर मिलिओकेँ जनिक युद्धक वेगकेँ नहि सहि सकैत छथि, सएह श्रीराम सीताक सङ्ग खर पर सूतल छथि! हमरा बूझि पड़ैत अछि जे रामक वियोगमे दादाजी जीवित नहि होएताह, राजमहलमे माएलोकनि आर्त्तनाद करैत होएतीह, पुत्रक वियोगमे मा कौशल्या तँ निश्चये प्राण त्यागि देतीह।' एहि प्रकारेँ विलाप करैत मनस्वी लक्ष्मण भरि राति जगैत रहलाह। प्रातःकाल राम-लक्ष्मण एतहि

गंगा-तट पर जटा धारण कएल, सीता सहित वल्कल ओ चीर पहिरल ओ सुन्दर तरकस धारण कएने दूहू भाइ सीताक संग एतएसँ चल गेलाह।"

श्रीरामक जटा आदि धारण करबाक अप्रिय वचन सूनि भरत चिन्तामग्न भए गेलाह। भरत सुकुमार रहितहुँ अत्यन्त बलशाली छलाह—हुनक कान्ह सिंहक सदृश, बाँहि पैघ पैघ ओ नेत्र फुलाएल कमलक समान सुन्दर छलैन्हि, तरुणावस्थाक ओ देखबामे बड़ सुन्दर छलाह। गुहक गप्प सूनि एहन कमनीय-रूप वीर-पुङ्गव भरत क्षण भरि तँ कहुना धैर्य धारण कएने रहलाह, पुनः असह्य वेदनाक कारणेँ अङ्कुशसँ वेधल हाथी जकाँ सहसा दुःखसँ शिथिल होइत मूर्च्छित भए गेलाह।

भरतकेँ मूर्च्छित देखि गुहक मुहक रङ्ग ऊड़ि गेल; भूकम्पसँ मथित वृक्ष जकाँ ओ व्यथित भए उठल। शत्रुघ्न सेहो ओही ठाम छलाह, अपन अग्रजक ओहन दशा देखि हुनका हृदयसँ सटा लेलथिन्ह, जोर जोरसँ कानए लगलाह ओ अपनहु वेहोश भए गेलाह। तदुत्तर पतिक वियोगसँ दुःखी ओ उपवाससँ दुर्बल भरतक तीनू माए ओतए पहुँचैत गेलीह, अबितहिँ हुनका चारूकातसँ घेरि लेलथिन्ह। कौसल्याक छाती तँ जेना दुःखसँ फटबा पर होइन्ह, ओ अत्यन्त व्याकुल वत्सलताक सङ्ग भरतकेँ अपन अङ्कमे लए कनैत कनैत करुण विलाप करए लगलीह—"पुत्र! अहाँकेँ कोनो रोग तँ नहि भए गेल अछि? अहीँ एहि राजवंशक जीवन थिकहुँ।

वत्स ! अहींकें देखि हम कहुना जिबैत छी । राम लक्ष्मणक सङ्ग वन गेलाह, राजा स्वर्गवासी भए गेलाह, हमरा सबहिक आब अहींटा रक्षक थिकहुँ । बेटा ! सत्यं सत्य कहू, लक्ष्मणक विषयमे अथवा सीताक सङ्ग वनमे गेल माएक एक मात्र पुत्र रामक विषयमे कोनो अप्रिय गप्प तँ ने सुनलहुँ अछि ?"

महायशस्वी भरत कनेक कालक पश्चात् स्वस्थचित्त भेलाह, कनैते-कनैते कौसल्याकेँ सान्त्वना देल ओ गुहसँ प्रश्न कएल—"गुह ! ओहि दिन रातिमे हमर जेठ भाइ राम कतए छलाह, सीता कतए छलीह, लक्ष्मण कतए छलाह ? ओ की भोजन कएलैन्हि, कोन बिछाओन पर सुतैत गेलाह ? ई सब विषय हमरा कहू।" ई प्रश्न सूनि गुह बड़ प्रसन्न भेल ओ भरतसँ कहए लागल—"हम भाँति भाँति प्रकारक अन्न, अनेक खाद्य पदार्थ ओ कएक प्रकारक फल भोजनक हेतु श्रीरामचन्द्रजीकेँ देलिऐन्हि । हमर प्रिय सखा सत्यपराक्रमी राम हमर देल सब वस्तुकेँ स्वीकार लेल, मुदा क्षत्रिय-धर्मकेँ स्मरण कए एकहुटा वस्तु ग्रहण नहि कएल, सब वस्तु आदरपूर्वक घुराए देल । सीता सहित राम ओहि राति उपवासे कएल, लक्ष्मण जल अनलैन्हि, सएहटा ओ पीलैन्हि, शेष बाँचल जल लक्ष्मणजी ग्रहण कएल । तत्पश्चात् तीनू गोटा एकाग्र-चित्तेँ सन्ध्योपासना करैत गेलाह । तदुत्तर लक्ष्मण कुश

आनि हुनका हेतु बिछाओन बनओलैन्हि, जाहि पर सीताक सङ्ग राम विराजमान भेलाह। लक्ष्मण दूहू गोटाक चरण पखारि ओतएसँ हटि गेलाह। इएह ओ इङ्गुदी वृक्षक जड़ि थिक आ ओएह ई तृण थिक जतए श्रीराम ओ सीता रातिमे शयन कएने छलाह।"

निषादराजसँ सब विषय बूझि भरत मन्त्रीलोकनिक सङ्ग इङ्गुदीवृक्षक जड़ि लग गेलाह ओ श्रीरामचन्द्रजीक शय्याक निरीक्षण करए लगलाह, पुनः अपन तीनू माताकें देखबैत बजलाह-"भाइजी एही ठाम भूमि पर सूति राति बितओने रहथि, इएह ओ कुश थिक, जे हुनक अङ्गसँ विमर्दित भेल। जे पुरुषसिंह राम कोमल मृगचर्मक विशेष चद्दरिसँ झाँपल नीकसँ नीक बिछाओनसँ सजाओल पलङ्ग पर सुतैत छलाह, से एहि पृथिवी पर कोना सूतल छल होएताह? जे सब दिनसँ विमानाकार राजमहलक श्रेष्ठ भवनमे सुतैत आबि रहल छलाह जकर भूमितल सोना-चानीसँ निर्मित रहैक, नीक नीक बिछाओन सुशोभित रहैक, पुष्पराशिसँ विभूषित जकर अद्भुत शोभा छलैक, जतए चानन ओ अगुरु महमह करैत रहैक, जकर दीवार पर सुवर्णक काज कएल रहैक, जे प्रासाद मेरु पर्वत जकाँ ऊँच छलैक; एहन एहन राजमहलमे जे निवास कएने रहथि, से राम एहि वनमे पृथिवी पर कोना सूतल छल होएताह? जे गीत ओ वाद्य-ध्वनिसँ, जे श्रेष्ठ

आभूषणक झंकारसँ तथा जे मृदङ्गक उत्तम शब्दसँ जगाओल जाइत छलाह; अनेक वन्दी समय समय पर जनिक वन्दना करैत छल, सूत ओ मागध अनुरूप गाथा गाबि ओ स्तुति कए कए जनिका जगबैत छल, से शत्रुसंतापी राम भूमि पर कोना सूतल छल होएताह ? एहि पर हमरा विश्वास नहि होइत अछि, ई हमरा सत्य नहि बूझि पड़ैत अछि, हमरा ई स्वप्न जकाँ लगैत अछि। निश्चये काल बड़ प्रबल होइत अछि, जकरहि प्रभावेँ रामहुकेँ भूमि पर सुतए पड़लैन्हि, विदेहराजक कन्या ओ महाराज दशरथक पुतहु सीतहुकेँ सुतए पड़लैन्हि। इएह हमर भाइजीक शय्या थिक, एतहि ओ करोट लेने होएताह। एही कठोर वेदी पर हुनकर शुभ शयन भेल छल, जतए हुनक अङ्गसँ पिचा गेल सबटा कुश एखनहु धरि ओहिना पड़ल अछि। बूझि पड़ैत अछि—शुभलक्षणा हमर भौजी सीता आभूषण पहिरनहि सूति रहलि रहथि, यत्र-तत्र सोनाक कण जे सटल अछि से सएह सङ्केत कए रहल अछि। एहि ठाम ओझराएल किछु रेशमीक सूत जे चमकि रहल अछि, ताहिसँ स्पष्ट अछि जे एतहि हुनक ओढ़नी कुशमे ओझराए गेल छलैन्हि। पतिक शय्या कोमल होइन्ह अथवा कठोर, साध्वी स्त्रीकेँ ओएह सुखदायिनी बूझि पड़ैत छैन्हि, तेँ तँ पतिव्रता सीताकेँ सुतबामे क्लेश नहि भेलैन्हि !"

एहि प्रकारेँ विलाप करैत भरत पुनः कहए लगलथिन्ह—"आइसँ हम पृथिवी पर अथवा कुश पर सूतब, फल-मूल

भोजन करब, सदैव वल्कल वस्त्र पहिरब तथा जटा धारण कएने रहब। वनवासक जतेक दिन आब शेष छैन्हि, ततबा दिन धरि हमही वनमे ओतए सुखपूर्वक निवास करब, एहिसँ भाइजी जे प्रतिज्ञा कएलैन्हि, से मिथ्या नहि होएतैन्हि। भाइजीक हेतु वनवास करबामे शत्रुघ्न हमरा सङ्ग देताह ओ भाइजी लक्ष्मणक सङ्ग अयोध्याक पालन करताह। अयोध्यामे ब्राह्मणलोकनि हुनकर अभिषेक करथिन्ह। की देवतालोकनि हमर एहि मनोरथकेँ सफल सिद्ध करताह? हम हुनक चरण पर माथ दए हुनका मनएबाक चेष्टा करब, तइओ यदि ओ नहि मानताह तँ हमहुँ वनवासी रामक सङ्ग दीर्घकाल धरि ओतहि निवास करब, एहिमे ओ हमर उपेक्षा नहि कए सकताह।"

एहि प्रकारक विचार व्यक्त करैत गुहक व्यवहारसँ परम सन्तुष्ट भरत सेनाकेँ विश्राम करबाक आज्ञा दए शत्रुघ्न सङ्ग अपनहु सुतबाक हेतु गेलाह।

शृङ्गपुरमे गङ्गातट पर राति व्यतीत कए रघुकुलनन्दन भरत प्रातःकाल उठि शत्रुघ्नकेँ उठबैत कहलथिन्ह—"शत्रुघ्न! आब कियक सूति रहल छी? उठू, निषादराज गुहकेँ जल्दीसँ बजाए आनू, ओ हमरा सबकेँ गङ्गा पार कराए देत" शत्रुघ्न बजलाह—"भाइजी! हम अहीँ जकाँ आर्य श्रीरामक स्मरण करैत जगले छी, सुतल नहि छी।" दूहू भाइ गप्पे करैत छलाह, ताबत गुह समय पर उपस्थित भए हाथ जोड़ि बाजल—

"ककुत्स्थकुलभूषण भरतजी ! एहि नदीक तट पर राति सकुशल बीतल ने, सेना-सहित अपनेकेँ कोनो कष्ट तँ ने भेल, अपने सर्वथा नीरोग रहलहुँ ने ?" गुहक स्नेहसँ सानल वचनकेँ सूनि अपन अग्रजक परम भक्त भरत कहलथिन्ह—"बुद्धिमान निषादराज ! हमरालोकनि राति सुखपूर्वक व्यतीत कएल, अहाँ हमर बड़ सत्कार कएल ! आब शीघ्र व्यवस्था करू जे अहाँक मलाहसब हमरासबकेँ अपना नाओसँ गंगाक ओहि पार उतारि देबए।"

भरतक आदेश सूनि गुह तुरन्त अपन भाइ-बन्धु लग गेल ओ कहलक—"उठू, जागू, नाओकेँ घीचि घाट पर अनैत जाउ, सेनाक संग भरत गंगा पार करताह।" अपन राजाक आज्ञा पाबि मलाह सब चारूकातसँ पाँच सए नाओ आनि एकत्र भेल। एहि पाँच सए नाओक अतिरिक्त स्वस्ति-चिह्नसँ युक्त होएबाक कारणेँ ओही नामेँ प्रसिद्ध किछु आओर नाओ छलैक, जाहि पर पैघ-पैघ घंटी लटकल ध्वजा फहरा रहल छलैक। सोना आदिसँ बनल चित्रसँ सजल रहबाक कारणेँ एहन नाओ बड़ सुन्दर लगैत छल। एहन अत्यन्त मजबूत नाओकेँ चलएबाक हेतु कुशल नाविक बैसल छल। ओहने नाओमेसँ एकटा कल्याणमयी नाओ लग स्वयं गुह उपस्थित भेल, जाहि पर कालीन बिछाओल छलैक आओर जे माङ्गलिक ध्वनिसँ मुखरित छल। एहि नाओपर सबसँ पहिने पुरोहित, गुरु ओ ब्राह्मण सब बैसलाह,

तत्पश्चात् महात्मा भरत ओ महाबली शत्रुघ्न तथा कौसल्या, सुमित्रा ओ कैकेयी बैसलीह। तदनन्तर राजपरिवारक अन्यान्य स्त्रीगण बैसैत गेलीह। गाड़ी ओ क्रय-विक्रयक सामग्री दोसर-दोसर नाओ पर चढ़ाओल गेल। सैनिकगण अपन-अपन खेमा तोड़ि नाओ सब पर बैसए लगलाह तँ कोलाहलसँ आकाश गूँजि उठल। सब नाओ पर ध्वजा फहरा रहल छल जाहि पर कएक गोट मलाह बैसल लोक ओ वस्तुजातकेँ खेबि-खेबि पार कए रहल छल।

एहि प्रकारेँ मलाहक सहायतासँ सबकेँओ--भरत, शत्रुघ्न, वसिष्ठ, अमात्यवर्ग एवं राजपरिवारक अन्यान्य व्यक्ति विशाल सेना सहित गंगा पार कए मैत्र नामक मुहूर्त्त मे प्रयाग-वन दिसि विदा भए गेलाह। ओतए पहुँचि महात्मा भरत ओतहि सेनाकेँ स्थापित कए विश्राम करबाक आज्ञा देल एवं स्वयं ऋत्विज तथा राजसभाक सभ्यलोकनिक संग ऋषि-श्रेष्ठ भरद्वाजक दर्शन करबाक निमित्त चललाह।

धर्मज्ञ नरश्रेष्ठ भरत आश्रमसँ एक कोस एमहरहि संगक सब लोककेँ राखि देल, अपन राज्ञोचित वस्त्र ओ अस्त्र-शस्त्रकेँ उतारि लेल, खाली दुइ गोट रेशमी वस्त्र मात्र धारि पुरोहित वसिष्टकेँ आगाँ कए मन्त्रीगणक संग पैदले चललाह। आश्रममे प्रवेश करितहिँ दूरहिसँ मुनिश्रेष्ठ भरद्वा-जक दर्शन होअए लगलैन्हि तँ ओतहि अपन मन्त्रीसबहुकेँ ठाढ़ कए देल तथा गुरुवर वसिष्ठकेँ आगाँ कए हुनक

पाछाँ पाछाँ ऋषि लग गेलाह। महर्षि वसिष्ठकेँ देखितहिँ महातपस्वी भरद्वाज आसनसँ ऊठि ठाढ़ भेलाह तथा अपन शिष्यकेँ शीघ्रतासँ अर्घ्य अनबाक हेतु कहल, फेर बड़ उत्साहसँ वसिष्ठक स्वागत कएल। तत्पश्चात् भरत हुनक पाएर छूबि प्रणाम कएलैन्हि। महातेजस्वी ऋषि बूझि गेलाह जे ओ महाराज दशरथक पुत्र थिकाह। ओ मुनि वसिष्ठ तथा भरतकेँ अर्घ्य-पाद्य ओ फलक आग्रह कएल, हुनक दूहू कुलक समाचार पुछलथिन्ह, तदुत्तर अयोध्या, सेना, खजाना, मित्रवर्ग एव मन्त्रिमण्डलक विषयमे जिज्ञासा कएल। राजा दशरथक शरीर त्याग करबाक विषय बुझल छलैन्हि, तेँ एहि प्रसंगक चर्चा ओ नहि कएलथिन्ह! उत्तरमे वसिष्ठ ओ भरत महर्षिक स्वास्थ्य, अग्नि-होत्र, शिष्यवर्ग, गाछ-वृक्ष तथा मृग-पक्षी प्रभृतिक कुशल-समाचार पुछलथिन्ह। शिष्टाचारक आदान-प्रदानक पश्चात् मुनिश्रेष्ठ भरद्वाज भरतसँ कहलथिन्ह–
"अहाँ नीक जकाँ राज्य करैत छी ने? अहाँकेँ एतए अएबाक कोन आवश्यकता भेल? हमरा ई विषय कहू, कारण, हमर मन अहाँक प्रति शुद्ध नहि अछि, हमरा अहाँ पर विश्वास नहि अछि! अहाँ अकण्टक राज्य भोगबाक इच्छासँ निरपराध श्रीराम ओ हुनक अनुज लक्ष्मणक अनिष्ट तँ ने करए चाहैत छिऐन्हि?"

भरद्वाजक ई वचन सूनि दुःखक कारणेँ भरतक आँखिमे नोर डबडबा गेलैन्हि, ओ अवरुद्ध कँपैत वाणीमे हुनका कहल-

थिन्ह—"यदि पूज्यपाद महर्षि अपने सेहो हमरा सएह बुझैत छी तँ हम सब दिसिसँ गेलहुँ ! भाइजीक वनवासमे हमरासँ कोनो अपराध नहि भेल, तेँ हमरा एहन कठोर कथा नहि कहल जाओ। हमरा हेतु हमर माए जे किछु कएल, से हमरा अभीष्ट नहि छल, ने माताक ओहि बातकेँ हम स्वीकारे कएल। हम तँ पुरुषसिंह रामकेँ प्रसन्न कए अयोध्या घुरएबाक हेतु जाए रहल छी। एही उद्देश्यसँ एतए आएल छी। ई बुझि हमरा पर कृपा कएल जाओ आ कहल जाओ जे राम एखन कतए निवास करैत छथि ?" तदनन्तर वसिष्ठ आदि ऋत्विजलोकनि प्रार्थना कएलथिन्ह जे "भरत अपराधी नहि छथि तेँ हिनका पर प्रसन्न भेल जाइन्ह।" तखन भरद्वाज प्रसन्न भए भरतकेँ कहए लगलाह— "हे महात्मा भरत ! अहाँ रघुकुलमे जन्म लेल अछि, तेँ अहाँमे गुरुजनक सेवा, इन्द्रिय-संयम एवं श्रेष्ठ व्यक्तिक अनुसरणक भाव होएबेक चाही। अहाँक मनक भाव हम जनैत छी, तथापि हम जे पूछल, से अहाँक भावकेँ आओर अधिक दृढ़ ओ अहाँक कीर्त्तिकेँ आओर अधिक विस्तार करबाक हेतु। हम श्रीरामक पता जनैत छी, ओ सीता ओ लक्ष्मणक सङ्ग चित्रकूटमे निवास करैत छथि ! आब काल्हि अहाँ यात्रा करब, आइ राति अमात्यलोकनिक संग एहि आश्रमहिमे विश्राम कए हमर अभिलाषाकेँ पूर्ण करू।" भरत 'तथास्तु'

कहि मुनिक आज्ञा शिरोधार्य कए लेल ओ राति आश्रमहिमे बितएबाक निश्चय कपल।

भरतक राति आश्रमहिमे बितएबाक दृढ़ निश्चय बूझि महातपस्वी भरद्वाज हुनका आतिथ्य-ग्रहण करबाक नोंत देल। भरत हुनका कहलथिन्ह—"मुने! वनमे जेहन आतिथ्य सम्भव अछि, अपने तँ से पाद्य, अर्घ्य ओ फलमूल आदि दए कइए चुकलहुँ!" हुनक ई कहला पर भरद्वाज हँसैत बजलाह—"हमरा प्रति अहाँके प्रेम अछि, से हम जनैत छी, अतः हमरा विश्वास अछि जे जएह हमरासँ भए सकत, ताहीसँ अहाँ प्रसन्न भए जाएब। मुदा एखन हम अहाँक सेनाकेँ भोजन करबए चाहैत छी। नरश्रेष्ठ भरत! हमरा एहिसँ प्रसन्नता होएत ओ हमरा जाहिसँ प्रसन्नता होएत, से कार्य अहाँके अवश्य करबाक चाही। अहाँ अपन सेनाकेँ आतेक दूर छोड़ि किएक आएल छी, सङ्गहि किएक नहि आनल?" तखन भरत हाथ जोड़ि तपोधन मुनिकेँ कहल-थिन्ह—"हम अपनेक भयसँ सेनाकेँ सङ्ग नहि आनल। भगवन्! राजा ओ राजपुत्रक ई कर्तव्य थिकैन्हि जे ओ सर्वत्र प्रयत्नपूर्वक तपस्वीजनसँ दूर रहथि। प्रभो! हमरा सङ्ग अगणित नीक-नीक घोड़ा-हाथी ओ विशाल सेना अछि, जे बहुत पैघ भूभागकेँ छेकि हमर पाछाँ-पाछाँ चलैत अछि। ओ आश्रमक वृक्ष, जल, भूमि ओ पर्णशालाकेँ हानि ने करए

तेँ ओकरा संग नहि अनलहुँ, अपनहिटा अएलहुँ।" ई सूनि महर्षि सेनाकेँ ओतहि बजाए लेबाक हेतु आज्ञा देल।

तदनन्तर मुनिवर भरद्वाज अग्निशालामे प्रवेश कए आचमन कए एवं ठोढ़ पोछि भरतक आतिथ्य-सत्कारक हेतु विश्वकर्मा आदिक आवाहन कएल। हुनक आवाहन करितहिँ गोटा-गोटी सब देवता ओतए पहुँचि गेलाह। फेर तँ प्रिय ओ सुखद सुगन्धित समीर बहए लागल जकर स्पर्श मात्रसँ स्वेद सूखि जाइत छल, अन्तरिक्षसँ पुष्प-वर्षा होअए लागल, दिशा-दिशामे देवतालोकनि मधुर स्वरमे दुन्दुभी बजबए लगलाह, अप्सराक समुदाय नृत्य करए लगलीह, देवगन्धर्व गाबए लगलाह एवं वीणाक स्वरगुञ्जन चारूकात पसरि गेल। दिव्य संगीत-लहरी मुखरित होइतहिँ छल, ताबत भरतक सेनाकेँ विश्वकर्माक अद्भुत निर्माण-कला देखबा योग्य भेलैन्हि। चारू कात योजन भरि भूमि समतल भए गेल, जाहि पर नीलम ओ वैदूर्यमणिक समान घास जनमि गेल, स्थान-स्थान जे फलक गाछ छल, ताहि सबमे फल सुशोभित भए उठल, दिव्य भोग-सामग्रीसँ सम्पन्न चैत्ररथ नामक वन ओतए आबि गेल। उज्ज्वल चारि कोठरीसँ युक्त घर बनि गेल। हाथी ओ घोड़ाकेँ रखबाक स्थान बनि गेलैक। राज्य-परिवारक हेतु जे घर बनल, से श्वेत मेघ जकाँ शोभित भए रहल छल, श्वेत पुष्प-माल्यसँ सजाओल तथा दिव्य सुगन्धित जलसँ पटाओल गेल छल। ओहि

महलमे सुख-सुविधाक सब सामग्री उपस्थित छलैक। महर्षिक आज्ञासँ कैकेयी-पुत्र भरत नाना प्रकारक रत्नसँ भरल ओहि महलमे प्रवेश कएल, हुनका संग-संग पुरोहित ओ मन्त्रीगण सेहो जाइत गेलाह। ओहि भवनमे भरत दिव्य राजसिंहासन देखलैन्हि, चँवर ओ छत्र सेहो देखलैन्हि, ओ श्रीरामक भावना कए मन्त्रीगणक सङ्ग ओहि समस्त राजभोग्य सामग्रीक प्रदक्षिणा कएल। सिंहासन पर श्रीराम विराजमान छथि, से धारणा कए ओ श्रीरामकेँ प्रणाम कए पूजा कएलैन्हि, पुनः अपन हाथमे चँवर लए ओ मन्त्रीक आसन पर बैसि गेलाह। तत्पश्चात् मन्त्री ओ सेनापति सब सेहो अपन-अपन आसन पर बैसैत गेलाह। तदुत्तर भरद्वाज मुनिक आज्ञासँ दुइए क्षणमे भरतक सेवामे कएकटा नदी उपस्थित भए गेल, जाहिमे पङ्कक स्थान पर खीर भरल छल। नदीक दूहू कात मुनिक कृपासँ नीक जकाँ चुनेटल दिव्य ओ रमणीय भवन प्रकट भए गेल। तखनहिँ ब्रह्माजीक पठाओल दिव्य आभूषणसँ विभूषित बीस हजार, कुबेरक पठाओल सुवर्ण, मणि, मुक्ता, प्रभृतिसँ निर्मित अलङ्कारसँ अलंकृत बीस हजार, तहिना नन्दनवनसँ बीस हजार दिव्याङ्गना उपस्थित भेलीह। सूर्यक समान कान्तिवान नारद, तुम्बरु ओ गोप भरतक सम्मुख आबि गीत गाबए लगलाह। जे दुर्लभ फल-फूल देवताक उद्यान ओ चैत्ररथ वनमे होइत छल, से महर्षिक प्रतापसँ प्रयागक एहि स्थल पर प्रकट भए गेल।

भरतक संग आएल अगणित मानव समुदाय ओहि ठामक वैभवकेँ देखि अत्यधिक हर्षसँ भरि बाजए लगलाह— "ई स्थान स्वर्ग थिक !" आ भरि राति महर्षि भारद्वाज द्वारा प्रस्तुत दिव्य सामग्रीक स्वर्गीय आनन्द लैत अपन सुधि-बुधि बिसरि जाइत गेलाह।

परिवारक सङ्ग भरत इच्छानुसार मुनिक आतिथ्य ग्रहण कए भरि राति आश्रमहिमे रहलाह। फेर भोरे ऊठि आगाँ यात्रा करबाक आज्ञा लेबाक लेल महर्षि भरद्वाज लग गेलाह। पुरुष-सिंह भरतकेँ हाथ जोड़ने अपना लग आएल देखि भरद्वाज जी अग्निहोत्रक कार्य कए हुनका कहलथिन्ह—निष्पाप भरत ! हमर आश्रममे राति सुखसँ बीतल ने, सबकेओ हमर आतिथ्यसँ सन्तुष्ट होइत गेलाह ने ?" भरत महर्षिकेँ प्रणाम कए कहलैन्हि—"भगवन् ! हम सम्पूर्ण सेना ओ सवारीक सङ्ग सुखपूर्वक राति भरि रहलहुँ। राति भरि उत्तम अन्न-पान ग्रहण कए ओ सुन्दर गृहमे आश्रय लए हमरालोकनि सब केओ ग्लानि ओ सन्ताप बिसरि गेल छलहुँ। हे मुनिश्रेष्ठ ! आब हम अपन भाइ लग प्रस्थान करबाक हेतु आज्ञा लेबए आएल छी। हे मुनीश्वर ! हमरा स्नेहपूर्ण दृष्टिएँ देखैत कहल जाओ जे धर्म-परायण महात्मा रामक आश्रम कतए अछि, कतेक दूर अछि, ओतए पहुँचबाक कोन मार्ग अछि ?"

एहि प्रकारेँ पुछला पर महातेजस्वी तपस्वीश्रेष्ठ भरद्वाज

मुनि अपन जेठ भाइक दर्शनक लालसासँ भरल भरतकेँ कहए लगलथिन्ह—"एतएसँ अढ़ाइ योजन दूर एक निर्जन वनमे चित्रकूट नामक पहाड़ अछि, जकर उत्तर दिसि मन्दाकिनी नदी बहैत अछि आओर जे फल-फूलसँ भरल-पुरल वृक्षसँ आच्छादित अछि। ओकर लग-पासक स्थल बड़ रमणीय अछि। तात! ओतए पहुँचि नदी ओ पर्वतक बीचमे श्रीरामक पर्णकुटी देखब, ओ दूहू भाइ राम-लक्ष्मण निश्चय ओहीमे निवास करैत छथि।" फेर मुनिश्रेष्ठ सेनापतिकेँ सम्बोधित करैत कहल—"सेनापति! अहाँ एतए हाथी-घोड़ासँ भरल अपन सेना लए पहिने यमुनाक दक्षिण तटवर्त्ती मार्गसँ जाएब। आगाँ जाए दुइ गोट बाट भेटत, ताहिमे जे पथ बामाँ दाबि दक्षिण दिसि गेल अछि, ताहि पर अपन सेना लए आगाँ बढ़ब। ओहा मार्ग पर चलैत अहाँ शीघ्र श्रीरामक दर्शन कए लेब।"

शीघ्र प्रस्थान करबाक समाचार सूनि महाराज दशरथक तीनू रानी अपन अपन सवारीसँ उतरि प्रणाम करबाक निमित्त ब्रह्मर्षिकेँ चारू कातसँ घेरि लेलैन्हि। उपवासक कारणेँ अत्यन्त दुर्बल ओ दीन भेलि कौसल्या, जनिक शरीर काँपि रहल छलैन्हि, सुमित्रा देवीक सङ्ग अपन दूहू हाथसँ भरद्वाज मुनिक चरण पकड़ि लेलैन्हि, तत्पश्चात् अपन असफल कामनाक कारणेँ जे सब लोकक द्वारा निन्दित

भए गेल छलीह, से कैकेयी मुनिक चरण-स्पर्श तथा परिक्रमा कए दीन भावें भरतक समीप ठाढ़ि भए गेलीह। तखन भरद्वाज मुनि भरतसँ पुछलथिन्ह—"रघुनन्दन ! हम अहाँक माता सबहिक विशेष परिचय बुझए चाहैत छी।" मुनिक ई पुछला पर बजबाक कलामे कुशल धर्मात्मा भरत हाथ जोड़ि कहए लगलथिन्ह—"भगवन्! जे शोक ओ उपवासक कारणें देवी सन प्रतीत होइत छथि, से हमर पिताक सबसँ पैघ रानी कौसल्या थिकीह। जाहि प्रकारें अदिति धाता नामक आदित्यकें उत्पन्न कएल, तहिना ई देवी सिंहक समान पराक्रमी श्रीरामक जन्म देलैन्हि। हिनक बाम कात उदास मनें सटिकें ठाढ़ि दुःखें आतुर ओ आभूषणहीन जे बनमे झड़ल पुष्पित कनैलक डारि जकाँ लगैत छथि, से महाराजक मझिली रानी सुमित्रा थिकीह, सत्पराक्रमी वीर तथा देव-तुल्य कान्तिमान राजकुमार लक्ष्मण ओ शत्रुघ्न हिनके पुत्र थिकाह, आ जनिक कारणें पुरुषसिंह राम ओ लक्ष्मण वनवासक दुःख भोगि रहल छथि तथा राजा दशरथ पुत्रवियोगक कष्टसँ प्राण त्याग कएल, जे स्वभावहिसँ उग्र अशिक्षित बुद्धि, अभिमानिनी छथि, जे अपनाकें सबसँ वेशी सुन्दरि ओ भाग्यवती बुझैत राज्यक लोभ कएनिहारि छथि, जे देखबामे आर्या मुदा वस्तुतः अनार्या छथि, सएह कैकयी ई हमर माता थिकीह। ई बड़ क्रूर ओ पापी छथि। हमरा पर जे एतेक पैघ संकट आबि गेल,

तकर मूल–कारण इएह थिकोह ।" अश्रु-गद्गद वाणीसँ एहि प्रकारेँ कहैत भरत रोषसँ भरि गेलाह ओ कुपित सर्प जकाँ दीर्घ श्वास लेबए लगलाह।

भरतकेँ एहि प्रकारेँ कहला पर श्रीरामावतारक प्रयोजनक ज्ञाता बुद्धिमान महर्षि भरद्वाज हुनका कहलथिन्ह— "भरत! अहाँ कैकेयीकेँ दोष-दृष्टिएँ नहि देखिऔन्ह। श्री रामकेँ वन पठाए ई देवता, दानव ओ महर्षि लोकनिक बड़ उपकार कएलैन्हि अछि। श्री रामक वनवासक परिणाम भविष्यमे सुखद होएत।"

श्रीरामक पता जानि ओ मुनिक आशीर्वाद प्राप्त कए कृतकृत्य भेल भरत मस्तक झुकओने महर्षिक प्रदक्षिण कएल एवं सेनाकेँ कूच करबाक आज्ञा देल। सब केओ अपन-अपन सवारी पर बैसि विदा भेलाह ओ मृग-पक्षी सबहिसँ सेवित गंगाक ओहि पारक अनेक पर्वत ओ नदीक निकटवर्ती वनकेँ पार करैत आगाँ बढ़ि गेलाह। ओहि सेनाक हाथी ओ घोड़ासबक समुदाय सेहो बड़ प्रसन्न छल। वनक मृग ओ पक्षी समूहकेँ भयभीत करैत भरतक सेना चित्रकूटक समीप-वर्त्ती वनमे पहुँचि गेल। ओहि वनमे प्रवेश करितहिँ विशाल वाहिनीसँ पीड़ित भए वनवासी यूथपति मताएल हाथी अपन अपन यूथक संग भागए लागल; रीछ, चितकाबर मृग प्रभृति वनप्रदेशमे, पर्वतमे तथा नदीक तटपर ओहि सेनासँ

पीड़ित प्रतीत होइत छल। महान कोलाहल करैत अपन चतुरङ्गिणी सेनासँ घेरल धर्मात्मा भरत यात्रा कए रहल छलाह। वर्षा ऋतुमे घन-घटा जेना आकाशकेँ झाँपि दैत अछि, तहिना भरतक समुद्रसन विशाल सेना दूए धरि ओहि भूमि-भागकेँ आच्छादित कए लेलक। जखन सुदूर पथ पार करबाक पश्चात् भरतक सवारी बड़ थाकि गेल तँ श्रीमान् भरत मन्त्रि-श्रेष्ठ वसिष्ठकेँ कहल—"ब्रह्मन! जेहन सुनने छलहुँ ओ जेहन देखि पड़ैत अछि तथा भरद्वाजजी जतए पहुँचबाक आदेश देने छलाह, ताहि देशमे हमरासब आबि गेलहुँ अछि। बूझि पड़ैत अछि जे इएह चित्रकूट पहाड़ थिक। एहि पर्वतक लगक वन-प्रदेश नील मेघ जकाँ प्रकाशित भए रहल अछि। एहि ठामक गाछ-वृक्ष पर्वत-शिखर पर ओहिना फूलक वर्षा कए रहल अछि जेना वर्षा-कालमे नील जल-धर मेघ ओहि पर जल-वृष्टि करैत अछि।" तदुत्तर भरत शत्रुघ्नकेँ कहए लगलाह—"शत्रुघ्न। देखू, एहि पर्वतक उप-त्यकामे जे देश अछि, जतए किन्नर विचरण करैत छथि, सएह देश हमरालोकनिक सेनाक घोड़ासबहिसँ व्याप्त भए मगर सबसँ भरल समुद्र जकाँ लगैत अछि; सैनिक सबहिसँ बैलाओल मृगक झुण्ड तीव्र वेगसँ भगैत ओहिना शोभित भए रहल अछि जेना शरद्-कालमे हवासँ उड़ाओल गेल मेघक समूह सुशोभित होइत अछि। लोक नहि रहबाक कारणेँ भयंकर लगैत ई वन एखन हमरा सबहिक सङ्ग

आएल' लोकसबहिसँ व्याप्त रहबाक कारणेँ हमरा अयोध्या-पुरी सन लगैत अछि। शत्रुघ्न! देखू, एहि वनमे घोड़ा सबसँ जोतल ओ कुशल सारथीसभक द्वारा संचालित ई रथ सब कतेक शीघ्रतासँ आगाँ बढ़ि रहल अछि। ओहि मयूरकेँ देखू, जे देखबामे कतेक प्रिय लगैत अछि, जे सैनिक-सभक भयसँ कतेक डेराएल प्रतीत होइत अछि; तहिना अपन आवास-स्थान पर्वत दिसि उड़ैत आन-आन पक्षी दिसि सेहो देखू। निष्पाप शत्रुघ्न! ई वन-प्रदेश बड़ मनोहर अछि, तपस्वीजनक निवासस्थान ई जेना स्वर्ग हो। एहि वनमे मृगीक सङ्ग विचरण करैत कतेक चितकाबर मृग एहन मनोहर लगैत अछि जेना एकरा सबकेँ फूलसँ चित्रित सुसज्जित कएल गेल हो। हमरालोकनिक सैनिक वनमे उचित रूपेँ आगाँ बढ़थि ओ ताकथि जाहिसँ पुरुषसिंह श्रीराम ओ लक्ष्मणक शीघ्र पता लागि जाए।"

भरतक वचन सूनि अनेक शूर-वीर हाथमे अस्त्र-शस्त्र लए आगाँ बढ़ि वनमे प्रवेश कएल। आगाँ बढ़ला पर हुनका-सबकेँ किछु दूर पर ऊपर धुआँ उठैत दृष्टिगोचर भेलैन्हि। ओहि धूम-शिखाकेँ देखि ओ लोकनि घुरिकेँ आबि भरतसँ कहलथिन्ह—"प्रभो! जतए मनुष्य नहि रहैत अछि ततए आगि नहि जरैत अछि, तेँ अवश्ये श्रीराम ओ लक्ष्मण एतहि होएताह! यदि राम-लक्ष्मण नहि छथि तँ केओ आने तपस्वी अवश्य होएताह।" हुनकालोकनिक गप्प तर्क-सङ्गत छल,

अतः से सूनि बुद्धिमान भरत ओहि समस्त सैनिकके कहल—
"अहाँ सबहु सावधान भए एतहि थम्हू, एतएसँ आगाँ नहि बढ़ब। आब हमहिटा ओतए जाएब, हमरा सङ्ग सुमन्त्र ओ धृति सेहो रहताह।" हुनक ई आज्ञा पाबि समस्त सैनिक ओतहि चारूकात पसरि ठाढ़ भए गेल ओ जाहि दिसि धुआँ उठि रहल छल, ताहि दिसि भरत विदा होएबाक निश्चय कएल। भरतक द्वारा रोकल गेल सेना आगाँक भूमिक निरीक्षण करितहुँ सहर्ष ओतए ठाढ़ रहल; कारण, ओकरा सबहुकेँ बुझबा योग्य भए गेलैक जे आब श्रीरामचन्द्रजीसँ भेँट करबाक अवसर आबि गेल अछि।

गिरिवर चित्रकूट श्रीरामकेँ बड़ प्रिय छलैन्हि। ओ ओहि पहाड़क शिखर पर बहुत दिनसँ रहि रहल छलाह। एक दिन देवतुल्य तेजस्वी दशरथनन्दन श्रीराम विदेहकुमारीकेँ प्रसन्न करबाक ओ अपनहुँ मन बहटारबाक निमित्त अपन भार्याकेँ विचित्र चित्रकूटक शोभाकेँ देखबए लगलाह, जेना देवराज इन्द्र अपन पत्नी शचीकेँ पर्वतीय सुषमाकेँ देखबैत होथि। ओ सीताकेँ ओहि दिसि देखबैत कहलथिन्ह—
"भद्रे! यद्यपि हमर राज्य चल गेल तथा अपन हितैषी सुहृद्जनसँ विलग भए रहए पड़ैत अछि, तइओ हम एहि रमणीय पहाड़केँ जखन देखैत छी तँ सबटा दुःख बिम्हरि जाइत छी, राज्यक नहि भेटब ओ अपन सुहृदजनक बिछोह

हमरा व्यथित नहि करैत अछि। कल्याणि! एहि पर्वतकेँ देखू, नाना प्रकारक असंख्य पक्षी कलरव कए रहल अछि, नाना प्रकारक धातुसँ पूर्ण ई मेघकेँ स्पर्श करैत शिखर आकाशकेँ वेधि रहल अछि, से केहन सुन्दर लगैत अछि! ई पर्वत बहुसंख्यक पक्षीसँ, नाना प्रकारक मृग, बड़का-बड़का बाघ, चित्ता ओ रीछसँ भरल अछि। ई बाघ आदि हिंसक जन्तु अपन-अपन दुष्ट-भावनाकेँ त्यागि एतए रहैत एहि पहाड़क शोभाकेँ बढ़ाए रहल अछि। नाना प्रकारक वृक्ष—आम, जामुन, कटहर, बेल, महु, धात्री, कदम्ब, दाड़िम प्रभृति, जे फूल ओ फलसँ लादल मनोरम लगैत अछि, एतए व्याप्त भेल एहि पर्वत-प्रदेशक शोभाक विस्तार कए रहल अछि। एहि रमणीय शैलशिखर सबहिकेँ देखू, जे प्रेम-मिलनक भावनाकेँ उद्दीप्त कए आन्तरिक हर्षकेँ बढ़बैत अछि। एहि शिखर पर कतहु निर्झर नीचाँ झरैत अछि, भूमिक गर्भसँ स्रोत बहार भए रहल अछि ओ कतहु छोट-छोट नदी प्रवाहित अछि। एहि सबसँ युक्त ई पहाड़ मद बहबैत हाथीक समान शोभित होइत अछि। गुफासँ बहराइत वसात नाना प्रकारक फूलक सुगन्धि लए मन्द मन्द बहैत अछि, जे ककर मनकेँ प्रसन्न नहि कए दैत अछि? सती-साध्वी सीते! अहाँ ओ लक्ष्मणक सङ्ग यदि हम अनेक वर्ष धरि एतए रही तँ तइओ नगर-त्यागक शोक हमरा पीड़ित नहि कए पाओत। प्रिये! एहि वनवाससँ हमरा दुइ गोट उपकार भेल—प्रथम,

धर्मानुसार पिताक आज्ञा-पालन; दोसर, भाइ भरतकँ प्रिय भेलैन्हि। हमर प्रपितामह मनु आदि श्रेष्ठ राजर्षि नियम-पूर्वक कएल गेल वनवासकेँ अमृत कहने छथि, एहिसँ शरीर-त्यागक पश्चात् परम कल्याण भेटैत छैक। चारू कात नील, पीअर, उज्जर ओ लाल आदि विविध रंगक सैकड़ो विशाल शिला-खण्ड एहि पर्वत पर शोभित भए रहल अछि। रातिमे एहि पर्वतराज पर जन्मल सहस्रो जड़ी-बूटी अपन प्रभा-सम्पत्तिसँ प्रकाशित होइत अग्निशिखाक समान चमकैत रहैत अछि। लगैत अछि जेना चित्रकूट पृथिवीकेँ फाड़ि ऊपर उठि गेल अछि; जकर शिखर बड़ सुन्दर बूझि पड़ैत अछि। प्राणवल्लभे सीते! अपने उत्तम धर्म पर चलैत, सन्मार्ग पर स्थिर रहैत यदि हम अहाँ ओ लक्ष्मणक सङ्ग एहि चौदह वर्षकेँ सानन्द व्यतीत कए लेब तँ हमरा ओहन सुख प्राप्त होएत जे कुलधर्मकेँ बढ़बए बला होइत अछि।"

तदुत्तर ओहि पर्वतसँ बहार भए कोसल-नरेश श्रीराम-चन्द्रजी मिथिलेशकुमारी सीताकेँ पुण्यसलिला रमणीय मन्दाकिनी नदीक दर्शन करबए लगलाह। ओ कहए लगलथिन्ह—"प्रिये! एहि मन्दाकिनी नदीक शोभा देखू, हंस ओ सारससँ सेवित ई केहन सुन्दर लगैत अछि! फल-फूलसँ लादल नाना प्रकारक तटवर्ती वृक्षसँ घेरल ई कुबेरक सौग-न्धिक सरोवर सन सुशोभित अछि; देखू, मन्दाकिनी नदीक केहन शोभा अछि—कतहु तँ एहिमे मोतीक

समान स्वच्छ जल बहैत अछि ओ कतहु सिद्धजन एहिमे आवाहन कए रहल छथि। सुन्दरि! देखू, वायुक द्वारा उड़ा कए आनल ई ढेरक ढेर फूल कोना दूहू तटपर पसरल अछि ओ किछु फूल पानिमे सेहो हेलि रहल अछि! भामिनि! सीते! जेना एक सखी अपन दोसर सखीक सङ्ग क्रीड़ा करैत अछि, तहिना अहाँ मन्दाकिनी नदीमे पैसि एकर लाल ओ श्वेत कमलकेँ जलमे डुबबैत स्नान-क्रीड़ा करू।" एहि प्रकारेँ श्रीरामचन्द्र जी गंगाजीक प्रसङ्ग अनेक सुसंगत कथा कहैत नील कान्त चित्रकूट पर्वत पर अपन प्रिया पत्नी सीताक संग विचरण करए लगलाह।

एहि प्रकारेँ मिथिलेशनन्दिनी सीताकेँ मन्दाकिनीनदीक दर्शन कराए श्रीरामचन्द्रजी पर्वतक समतल स्थल पर हुनका सङ्ग बैसि गेलाह। ओ सीताकेँ तपस्वीजनक उपभोगमे प्रयुक्त सुस्वादु फलमूलक गुदा दए दए प्रसन्न कए रहल छलाह, तावत हुनक दर्शनक निमित्त अबैत भरतक सेनाक कोलाहलसँ ओ हाथी-घोड़ा प्रभृतिक पदाघातसँ उड़ैत धूलिसँ आकाश व्याप्त भए उठल। तखनहिँ ओहि कोलाहलसँ भयभीत ओ पीड़ित कतेक मताएल हाथीक यूथपति अपन अपन यूथक सङ्ग सेहो भागए लागल। श्रीरामचन्द्र भरतक सेनाक कोलाहलकेँ एवं भगैत हाथीक महाभयङ्कर शब्दकेँ सूनि तेजोद्दीप्त सुमित्राकुमार लक्ष्मणसँ कहलथिन्ह— "लक्ष्मण! पता तँ लगाउ, एहि विशाल वनमे हाथीक झुण्ड

अथवा महीस वा मृग जे यत्र-तत्र भागि रहल अछि, तकर की कारण थिक ? एकरा सबकेँ कोनो सिंह तँ ने आबि डेराए देलकैक अछि अथवा कोनो राजा वा राजकुमार तँ ते आबि सिकार खेलाइत छथि ?"

भगवान् श्री रामक आज्ञा पाबि लक्ष्मण तुरन्त फूलसँ भरल एक शाल-वृक्ष पर चढ़ि गेलाह ओ सम्पूर्ण दिशाके देखैत पूब दिशि देखलैन्हि, तत्पश्चात् उत्तर दिसि देखलैन्हि तँ एक विशाल सेना दृष्टिगोचर भेलैन्हि जे हाथी, घोड़ा ओ रथ सबसँ परिपूर्ण छल। एकर सूचना दैत ओ श्री रामचन्द्र जीकेँ कहलथिन्ह—"आर्य ! अपने आगि मिभ्फा दिऔक, देवी सीता गुफामे चल जाथु, अपने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाए लिअ एवं बाण ओ कवच धारण कए लिअ।" ई सूनि पुरुषसिंह राम लक्ष्मणसँ पुछलथिन्ह—"प्रिय सुमित्राकुमार ! नीक जकाँ देखु तँ, अहाँ जनितेँ ई ककर सेना भए सकैत अछि ?" रामक ई वचन सूनि लक्ष्मण प्रज्वलित भेल आगि जकाँ एना देखाए लगलाह जेना ओकरा जराए भस्म कए देताह ओ बजलाह—भाइजी ! निश्चय ई कैकेयी-पुत्र भरत थिक, जे अयोध्यामे अभिषिक्त भए अपन राज्यकेँ निष्कण्टक बनएबाक इच्छासँ हमरा दूहू गोटाक वध करबाक हेतु एतए आबि रहल अछि। सम्मुख जे बड़ पैघ शोभासम्पन्न गाछ देखि पड़ैत अछि, तकर समीप जे रथ अछि, ओहि पर कोविदार-चिह्नित ध्वजा शोभित भए रहल अछि। वीर ! हमरा दूहू गोटाकेँ धनुष लए पर्वतक शिखरपर चलबाक चाही

अथवा कवच बान्हि अस्त्र-शस्त्र धारण कए एतहि रहबाक चाही। रघुनन्दन ! आइ कोविदार-चिह्नसँ युक्त ध्वजबला रथ हमरालोकनिक अधिकार मे आबि जाएत, आइ हम यथेच्छा ओहि भरतकेँ देखबैन्हि जकर कारणेँ अपने, सीता ओ हम महान् विपत्तिमे पड़ल छी ओ अपने अपन सनातन राज्याधिकारसँ वञ्चित छी। वीर रघुनाथ ! ई भरत हमर शत्रु थिक ओ तेँ भरतक वध करबामे कोनो दोष नहि देखैत छी। हम कैकेयीक समग्र सम्बन्धी एवं बन्धु-बान्धवक सङ्ग वध कए देबैन्हि। आइ ई पृथिवी कैकयी-रूपक महापापसँ मुक्त भए जाएत। अपन तीख बाणसँ शत्रुक शरीर सबकेँ खण्ड-खण्ड कए देब ओ चित्रकूटक एहि वनमे शोणितक नदी प्रवाहित कए देब। एहि महान वनमे हम सेना-सहित भरतक वध कए धनुष ओ बाणक ऋणसँ उऋण भए जाएब, एहिमे कोनो सन्देह नहि।"

भरतक प्रति क्रोधावेशक कारणेँ लक्ष्मणक विवेक नष्ट भए गेल देखि श्रीराम हुनका बुझबैत कहए लगलाह—"लक्ष्मण ! महाबली ओ बड़ अधिक उत्साही स्वभावक भरत जखन एतए आबि रहल छथि तँ धनुष, कवच ओ तरुआरिक कोन प्रयोजन छैक ? पिताक राज्यक रक्षाक हेतु प्रतिज्ञा कए यदि हम भरतकेँ मारि राज्य लए लैत छी तँ संसारमे हमर कतेक निन्दा होएत ! अपन बन्धु-बान्धव ओ मित्रजनकेँ विनाश कए जे धन प्राप्त होइत अछि से विष-

मिश्रित भोजनक समान त्याज्य थिक। वीर लक्ष्मण! भरत बड़ भ्रातृ-भक्त छथि ओ हमर प्राणहुसँ बढ़ि प्रिय छथि। हमरा तँ लगैत अछि जे भरत मात्रिकसँ अयोध्या घुरला पर हमरालोकनिक वनवासक विषयमे जानि शोकसँ व्याकुल भए उठल छलाह ओ कुल-धर्मक विचार कए स्नेहयुक्त हृदयसँ हमरालोकनिसँ भेँट करबाक हेतु आबि रहल छथि। हुनक आगमनक दोसर उद्देश्य नहि भए सकैछ। भरतक भेँट करबाक हेतु आएब सर्वथा समयोचित अछि, ओ हमरा-सभक अहित करब तँ सोचिओ नहि सकैत छथि। लक्ष्मण! भरत अहाँक सङ्ग कहिआ कोन अप्रिय व्यवहार कएल जे हुनकासँ भय भए रहल अछि, एहन आशङ्का हृदयमे उत्पन्न होइत अछि? यदि भरत आबथि तँ हुनक अनादर नहि करबैन्हि, कोनहु अनुचित कथा नहि कहबैन्हि; जँ कहबैन्हि तँ हमर अनादर होएत। सुमित्रानन्दन! कतबहु किछु किएक ने भए जाए, बेटा अपन बापकेँ कोना मारि सकैत अछि, अथवा भाइ अपन प्राणक समान प्रिय भाइक वध कोना कए सकैत अछि? यदि अहाँ राज्यक हेतु एतेक कठोर कथा बजैत छी, तँ भरतसँ भेँट भेला पर हम कहबैन्हि जे ई राज्य अहाँकेँ दए देथि। हमरा विश्वास अछि जे यदि हम भरतकेँ कहबैन्हि तँ ओ लगले अहाँकेँ राज्य दए देताह।"

अपन धर्मात्मा भाइक ई कथा सूनि लक्ष्मण लाजेँ गड़ि गेलाह ओ लज्जित भेल श्रीरामकेँ कहलथिन्ह—"भाइजी!

हमरा लगैत अछि जे हमरालोकनिक पिता सएह अपनेसँ भेँट करबाक हेतु आबि रहल छथि।" लक्ष्मणकेँ लज्जित भेल देखि श्रीराम हुनका कहए लगलथिन्ह—"अथवा हमरा लगैत अछि जे हमरालोकनिक वनवासक कष्टकेँ विचारि पिताजी हमरा सबकेँ घुरा लए जएबाक हेतु आबि रहल छथि। नीक कुलमे उत्पन्न ओएह अपन दूनू शीघ्रगामी ओ मनोरम घोड़ा रथमे जोतल चमकि रहल अछि, पिताजीक सवारीमे जे सब दिनसँ रहल अछि से विशाल-काय शत्रुंजय नामक हाथी सेनाक आगाँ आगाँ झूमि झूमि चलैत अछि। परन्तु महाभाग ओकर ऊपर पिताजीक ओ विश्वविख्यात दिव्य श्वेत छत्र हमरा नहि देखि पड़ैत अछि, तेँ सन्देह होइत अछि। लक्ष्मण! आब हमर बातकेँ मानू ओ गाछसँ उतरि जाउ।"

धर्मात्मा रामक ई वचन सूनि युद्धजयी लक्ष्मण ओहि शाल वृक्षक अग्र भागसँ उतरि गेलाह ओ हुनका लग आबि हाथ जोड़ि ठाढ़ भए गेलाह।

जखन भरतक आज्ञासँ सब सेना खेमा खसाए लग-पासक डेढ़ योजन भूमि पर पसरि गेल, यथा-स्थान रुकि गेल, तखन भरत शत्रुघ्नकेँ कहलथिन्ह—"सौम्य! अहाँ वनक चारू दिसि किछु लोक सङ्ग लए श्रीरामक अन्वेषण करू। निषादराज गुह सेहो अपन अनेक बन्धु-बान्धवक

संग ककुत्स्थवंशी श्रीराम ओ लक्ष्मणक पता लगाबथु। स्वयं हम मन्त्री, पुरोहित, गुरुजन तथा ब्राह्मण सबहिक सङ्ग हुनका तकबाक हेतु समग्र वनमे विचरण करब। जाबत धरि श्रीरामकेँ सीता ओ लक्ष्मणक सङ्ग ताकि नहि लेब, तावत धरि शान्ति नहि भेटत। निश्चय लक्ष्मण बड़ भाग्यवान छथि जे सतत सङ्ग रहि कमल-नयन श्रीरामक परम तेजस्वी मुखक निरन्तर दर्शन करैत रहैत छथि। जाबत धरि भाइजीक राजोचित चिह्नसँ युक्त चरण पर अपन माथ नहि राखब, ताबत धरि हमरा शान्ति नहि भेटत; जाबत धरि राज्यक वास्तविक अधिकारी श्रीराम राज्य पर प्रतिष्ठित नहि भए जाइत छथि, ताबत धरि शान्ति नहि भेटत।" एना कहैत महातेजस्वी पुरुषप्रवर भरत ओहि विशाल वनमे प्रवेश कएल तथा पर्वत शिखरपर उत्पन्न वृक्षसबहिक बीचसँ होइत आगाँ बढ़लाह जकर शाखाक अग्र-भाग फूलसँ भरल छलैक। आगाँ जाए ओ एक शाल वृक्ष पर चढ़ि गेलाह आ ओतएसँ श्रीरामचन्द्रक आश्रममे आगिक धुआँकेँ देखि भरत ओ शत्रुघ्नकेँ बड़ प्रसन्नता भेलैन्हि। 'एतए भाइजी छथि' से जानि हुनका ओतबहि सन्तोष प्राप्त भेलैन्हि जतबा अथाह जल-राशि पार कए होइत छैक।

सेनाक यथा-स्थान स्थापित भए गेलाक पश्चात् गुरुभक्त भरत महर्षि वसिष्ठकेँ मातासबहिक सङ्ग शीघ्र अएबाक सन्देश दए आगाँ बढ़ि गेलाह ओ अपन छोट भाइ

शत्रुघ्नकें आश्रम-चिह्न देखबैत ओहि दिसि चललाह। सुमन्त्र शत्रुघ्नक पाछाँ-पाछाँ जाए रहल छलाह, हुनकहु श्रीरामक दर्शन करबाक तीव्र अभिलाषा छलैन्हि। जाइत-जाइत भरत दूरहिसँ तपस्वीजनक आश्रम जकाँ प्रतिष्ठित अपन भाइक पर्णकुटी देखलैन्हि। पर्णकुटीक सम्मुख छोट-छोट काठक टुकड़ी होमक हेतु संगृहीत राखल छल, पूजाक हेतु राखल फूलकें सेहो ओ देखल। आश्रम धरि जएबाक हेतु श्रीराम ओ लक्ष्मण द्वारा निर्मित मार्गबोधक चिह्न गाछमे लागल अथवा गाछक शाखासबहि पर लटकल भरत देखलैन्हि। चलैत-चलैत महाबाहु भरत शत्रुघ्न ओ अपन मन्त्री सबकें प्रसन्न भए कहए लगलाह—"लगैत अछि जेना महर्षि भरद्वाज जाहि स्थानक पता देने छलाह, ताहि ठाम हमरालोकनि पहुँचि गेलहुँ अछि, मन्दाकिनी नदी सेहो लगहिमे प्रवाहित होइत होइतीह। गाछमे ऊँच कए बान्हल जे ओ चीर देखि पड़ैत अछि, तकरा प्रायः समय-असमय जल अनबाक निमित्त ठेकानक हेतु चेन्हक लेल लक्ष्मण बान्हि देने छथि। अतः आश्रम जएबाक मार्ग एमहरहि बाटें होएत। देखु, वनमे तपस्वी-मुनिजनिक आधान करैत छथि, ताहि अग्निदेवक सघन धूमराशि दृष्टिगोचर भए रहल अछि। एतए हम पुरुषसिंह आर्य रघुनन्दनक आनन्दमग्न महर्षि जकाँ दर्शन करब।" तदुत्तार भरत दुइए घड़ीमे मन्दाकिनीक तट पर विराजमान चित्रकूटक समीप पहुँचि गेलाह ओ अपना सङ्ग जाइत लोकसबकें कहए

लगलाह—"हा ! हमरहि कारणें महाराज श्रीराम एहि निर्जन वनमे आबि माँटिए पर वीरासन लगाए बैसैत छथि, हमरहि कारणें लोकनाथ रघुनाथ कष्ट सहैत एतए वनवास करैत छथि, अतः हम सभसँ निन्दित भेल छी। आइ हम श्रीरामकें प्रसन्न करबाक निमित्त हुनक चरण पर, सीता ओ लक्ष्मणक चरण पर खसब।" एहि प्रकारें विलाप करैत भरत ओहि वनमे एक पैघ पर्णशाला देखलैन्हि जे पवित्र ओ मनोरम छल। शाल, ताल प्रभृति वृक्षसबहिक पातसँ आच्छादित ओ पर्णकुटी यज्ञशाला जकाँ लगैत छलैक। गुरुतर कार्य-साधनमे समर्थ कएकटा धनुष पर्णकुटीमे टाँगल शोभित भए रहल छल, कएकटा तरकसमे धनुष भरल सेहो राखल छल, जे सूर्य-किरण जकाँ चमकि रहल छल। सोनाक म्यानमे दुइटा तरुआरि एवं स्वर्णमय बिन्दुसँ विभूषित दुइ गोट विचित्र ढालि सेहो ओहि आश्रमक शोभाकें बढ़बैत छल। गोहक चामसँ बनल कतेक सुवर्णजटित हाथमे पहिरबाक खोली टाङ्गल छलैक। श्रीरामक निवास-स्थानक ईशानकोणमे स्थित एकटा वेदी छलैक, जाहि पर आगि जरि रहल छलैक।

पर्णशालाकें अनेक काल धरि देखि भरत ओतहि अपन जेठ भाइ श्रीरामचन्द्रकें सेहो देखलैन्हि जे कृष्णमृगचर्म तथा चीर ओ वल्कल वस्त्र धारण कएने वेदी पर, जाहि पर कुश बिछाओल छलैक, बैसल छलाह; ओही वेदी पर सीता ओ लक्ष्मण सेहो विराजमान छलाह। हुनकालोकनिकें ओहि

अवस्थामे देखि धर्मात्मा कैकेयीकुमार भरत एक सङ्ग शोक ओ मोहमे डूबि गेलाह एवं बड़ वेगसँ हुनका दिसि दौड़लाह। अपन शोकक आवेगकें ओ धैर्यक द्वारा नहि रोकि सकलाह ओ विलाप करैत गद्गद वाणीसे बाजए लगलाह—"हा! जे राजसभामे बसि प्रजा ओ मन्त्रीवर्ग द्वारा सेवा ओ सम्मान प्राप्त करबाक योग्य छथि, सएह भाइजी श्रीराम वन्य पशुसं घेरल एतए बैसल छथि! जे नीक-नीक सहस्रो वस्त्रक उपयोग करैत छलाह, से आब धर्माचरण करैत दुइ मृगचर्म मात्र धारण कएने छथि। हा! जे सर्वथा सुख-भोग करबा योग्य छथि, से श्रीराम एतेक दुःखमे पड़ल छथि! ओह! हम कतेक क्रूर छी? हमर एहि लोकनिन्दित जीवनक धिक्कार अछि!" एहि प्रकारक विलाप करैत-करैत ओ अत्यन्त दुःखी भए गेलाह, मुखारविन्दपर स्वेद-विन्दु चमकए लगलैन्हि, श्रीरामक चरण धरि पहुँचबासँ पहिनहिँ खसि पड़लाह। नोरसँ हुनक गरा बाँझि गेल छलैन्हि, अतः यशस्वी श्रीराम दिसि देखि ओ 'हा! आर्य' कहि एक वेर कहुना जोरसँ चिचिएलाह, फेर किछु बाजल नहि भेलैन्हि। फेर कनैत-कनैत शत्रुघ्न सेहो श्रीरामक चरणकें प्रणाम कएल। श्रीराम दूहू भाइकें उठाकें छातीमे सटाए लेलैन्हि ओ अपनहु कानए लगलाह। तत्पश्चात् राजकुमार श्रीराम निषादराज गुह ओ सुमन्त्रसँ भेँट कएल; लगैत छल जेना आकाशमे सूर्य ओ चन्द्रमा, शुक्र ओ वृहस्पतिक मिलन भए रहल हो। यूथपति गजराज पर

बैसि यात्रा करबा योग्य चारू राजकुमारकें ओहि विशाल वनमे आएल देखि समस्त वनवासी हर्षकें बिसरि शोकक नोर बहबए लगलाह।

श्रीराम अपन भाइ भरतकें अपन दूहू हाथें उठा कए छातीमे सटाए लेल, हुनका अपन अङ्कमे रखिनहिं आदरपूर्वक पुछए लगलथिन्ह—"तात ! दादाजी कतए छलाह जे अहाँ वनमे आबि गेलहुँ ? हम कतेक दिनक पश्चात् अहाँकें देखैत छी, मुदा अहाँ तँ बड़ दुर्बल भए गेलहुँ अछि ! तात ! कहू वनमे किएक आएल छी ? भाइ ! दादाजी जिबैत छथि ने ? अत्यन्त दुःखी भए ओ परलोकवासी तँ ने भए गेलाह, एही हेतुएँ की अहाँकें अपनहिँ आबए पड़ल ? सौम्य ! एखन अहाँ नेना छी, तें कदाचित् परम्परागत राज्य तँ ने नष्ट भए गेल ? सत्पराक्रमी भरत ! अहाँ दादाजीक सेवा-शुश्रूषा करैत छी ने, अहाँ इक्ष्वाकुकुलक आचार्य महातेजस्वी वसिष्ठक पूजा करैत छिऐन्हि ने ? दादाजी सकुशल छथि ने ? की माता कौसल्या, उत्तम सन्तानकें जन्म देलैन्हि से सुमित्रा ओ आर्या कैकेयी प्रसन्न तँ छथि ? तात ! की अहाँ देवता, पितर, सेवक, गुरुजन, पिता-तुल्य आदरणीय वृद्धजन ओ ब्राह्मणलोकक आदर करैत छी ने ? की अहाँ अपनहि सन शूरवीर, शास्त्रवेत्ता, कुलीन, जितेन्द्रिय एवं बाह्य-चेष्टासँ मनक बात बुझनिहार सुयोग्य व्यक्तिकें मन्त्री बनाओल

अछि ने ? भरत ! अहाँ असमये निद्राक वशीभूत तँ ने होइत छी, समय पर जगैत छी ने ?" एहि प्रकारक अनेक युक्तिसङ्गत ओ नीतिपूर्ण प्रश्नक द्वारा श्रीराम भरतके राज-नीतिक उपदेश दैत फेर पुछए लगलथिन्ह—"तात ! अहाँ राज्य छोड़ि वल्कल, कृष्णमृगचर्म ओ जटा धारण कए जे एतए आएल छी, तकर की प्रयोजन, से हम बुझए चाहैत छी ?" ककुत्स्थवंशी महात्मा श्रीरामक ई पुछला पर भरत बलपूर्वक आन्तरिक शोकक दमन कए हाथ जोड़ि उत्तर देलथिन्ह—"आर्य ! हमरालोकनिक पिताजी अत्यन्त कठिन वचनकेँ पूर्ण कए पुत्र-शोकसँ पीड़ित भए स्वर्ग चल गेलाह। शत्रुसंतापी रघुनन्दन ! पिताजी एहन कठोर कार्य अपन स्त्री ओ हमर माता कैकेयीक द्वारा विवश भए कए-लैन्हि; हमर माए सएह एहन भारी पापक कारण थिकीह जे निश्चय शोकसँ दुर्बल और नरक-गामी होइतीह। राज्यक सभ प्रजा हमरा ओ माता सबहिक सङ्ग सेवामे आएल अछि। एकरा सब पर कृपा करिऔक ओ हमरहु पर कृपा कए राज्य-ग्रहण द्वारा अपन अभिषेक करबाए लिअ। हे रघुवीर ! ज्येष्ठ होएबाक कारणेँ अपने सएह एहि राज्यक अधिकारी थिकहुँ, तेँ धर्मानुसार राज्यक ग्रहण कए हमरा सबहुकेँ सफलमनोरथ बनाबी। हम अपन सब सचिवक सङ्ग अपनेक पाएर पर माथ राखि याचना करैत छी जे अपन राज्य ग्रहण करू। हम तँ अपनेक भाइ, शिष्य ओ दास थिकहुँ, हमरा पर कृपा करू। ई मन्त्री-

लोकनि कुल-परम्परास रहि आएल छथि, दादाजीक समयहुमे छलाह। अतः हिनकालोकनिक प्रार्थनाकेँ अस्वीकार नहि करू।" ई कहैत महाबाहु भरत नेत्रसँ नोर बहबैत श्रीरामचन्द्र जीक चरण पर माथ टेकि देलैन्हि। ओहि समय ओ मताएल हाथी जकाँ बारंबार दीर्घ निश्वास लैत छलाह।

श्रीराम भरतकेँ उठाए हृदयसँ लगओने कहए लगलथिन्ह—"भाइ! अहीँ कहू, उत्तम कुलमे उत्पन्न, सत्त्वगुणसम्पन्न, तेजस्वी ओ श्रेष्ठ व्रतक पालक हमरा सन मनुष्य राज्यक हेतु दादाजीक आज्ञाक उल्लङ्घन कोना कए सकैत अछि? शत्रुसूदन! अहाँमे किंचितो दोष नहि अछि, अहाँकेँ अज्ञानक वशीभूत भए अपन माताक निन्दा नहि करबाक चाही। धर्मज्ञ! पुत्र पर माता ओ पिताक अधिकार समाने रहैत छैन्हि। ओ हमरा वल्कल-वस्त्र ओ मृगचर्म धारण करबाए वन पठाबथि अथवा राज्य पर बैसाबथि। रघुनन्दन! हमर धर्मशील माता ओ पिता दूहू गोटा हमरा वन चल जएबाक आज्ञा देने छथि, तखन हम एकर विपरीत कार्य कोना कए सकैत छी? अहाँकेँ अयोध्यहि रहि समस्त जगतक हेतु आदरणीय राज्य प्राप्त करबाक थिक ओ हमरा वल्कल-वस्त्र धारण कए दण्डकारण्यमे रहब कर्तव्य थिक, कारण, महाराज दशरथ बहुतो लोकक सम्मुख इएह आज्ञा दए स्वर्गवासी भेलाह अछि। सौम्य! चौदह

वर्ष दण्डकारण्यमे रहबाक पश्चाते हम पिताजी द्वारा प्रदत्त राज्य-भागक उपभोग करब।"

श्रीरामचन्द्रजीक कथा सूनि भरत फेर ई उत्तर दैत कहल-थिन्ह—"भाइजी ! हम राज्यक अधिकारी नहि छी, तेँ राजधर्मक अधिकारी सेहो नहि छी। अतः हमरा राजधर्मक उपदेशक कोन प्रयोजन पड़त ? नरश्रेष्ठ ! हमरालोकनिक ओहिठाम जेठ पुत्रक रहैत छोट पुत्र राजा नहि होइत अछि, एही शाश्वत धर्मक सब दिनसँ पालन होइत रहल अछि। अतः हे रघुनन्दन ! अपने हमरा सङ्ग अयोध्या चलू ओ कुलक अभ्युदयक हेतु राजाक पद पर अपन अभिषेक कराउ। जखन हम केकयदेशमे छलहुँ, अइँ वनमे चल अएलहुँ। विविध यज्ञक कर्त्ता ओ सत्पुरुषगण द्वारा सम्मानित महाराज दशरथ सीता तथा लक्ष्मणक सङ्ग अपनेक राज्यसँ विदा होइतहिँ स्वर्गलोक चल गेलाह। तेँ उठू ओ दादाजीकेँ जलाञ्जलि-दान दिऔन्ह, हम ओ शत्रुघ्न ई कर्त्तव्य पहिनहिँ कए चुकलहुँ अछि। कहल जाइत अछि जे प्रिय पुत्रक देल जल पितृलोकमे अक्षय होइत छैक ओ अपने दादाजी परम प्रिय पुत्र थिकिऐन्हि।"

भरतक द्वारा पिताक मृत्युक समाचार सूनि श्रीराम दुःखक कारणेँ अचेत भए गेलाह। शोकक कारणेँ अचेत भेल श्रीरामकेँ सीतासहित तीनू भाइ कनैत-कनैत अश्रु-जलसँ भिजबए लगलाह। किछु कालक पश्चात् होशमे आबि,

नेत्रसँ अश्रु वर्षा करैत श्रीराम अत्यन्त दीन स्वरमे विलाप करए लगलाह, पुनः भरतकेँ धर्मयुक्त विषय कहए लगलथिन्ह-"भरत ! जखन दादाजी स्वर्गवासी भए गेलाह तँ हम अयोध्या जाए की करब ? हा ! पिताजी हमरहि शोकसँ प्राण त्यागल, मुदा हुनक दाह-संस्कार हम नहि कए सकलहुँ ! हमरा सन पुत्र जनमाए महाराजक कोन कार्य सिद्ध भेलैन्हि ? भरत ! अहीँ कृतार्थ छी, अहीँक अहोभाग्य जे शत्रुघ्नक सङ्ग अहाँ हुनक श्राद्ध-कर्म द्वारा पूजा कएल। परंतप भरत ! वनवासक अवधि समाप्त भेलापर यदि हम अयोध्या घुरिकेँ जाएब तँ हमरा के कर्त्तव्यक उपदेश देत ?" भरतकेँ एहि प्रकारक बात कहि शोक-सन्तप्त श्रीराम चन्द्रवदना पत्नी सीता लग जाए बजलाह—"सीते ! अहाँक श्वशुर चल गेलाह। लक्ष्मण ! अहाँ पितृहीन भए गेलहुँ। भरत महाराज दशरथक स्वर्गवासक समाचार अनलैन्हि अछि।" श्रीरामक एहन करुण-कथा कहला पर तीनू भाइक नेत्रसँ प्रबल वेगेँ अश्रु-प्रवाहित भए उठलैन्हि। तदुत्तर सब भाइ मिलि श्रीरामकेँ सान्त्वना दैत कहलथिन्ह—"भाइजी ! आब पृथिवीपति पिताजीकेँ जलाञ्जलि-दान दिऔन्ह।"

अपन श्वशुर महाराज दशरथक स्वर्गवास करबाक समाचार सूनि सीताक नेत्रमे नोर भरि गेलैन्हि। ओ नोर-प्रवाहक कारणेँ अपन प्रियतम रामकेँ देखि नहि सकलीह।

शोकाकुल जनकनन्दिनीकेँ सान्त्वना दए दुःखमग्न श्रीराम अत्यन्त दुःखी लक्ष्मणकेँ श्राद्धकर्मक निमित्त सामग्री अनबाक हेतु कहलथिन्ह। सीता ओ लक्ष्मण सहित श्रीराम मन्दाकिनी नदीक तट पर जाए सविधि पिण्ड ओ जलांजलि दए पिताक श्राद्ध-कर्म कएल, पुनः पर्णकुटीमे आबि भरत ओ लक्ष्मण दूहू भाइकेँ दूहू हाथेँ पकड़ि श्रीराम कानए लगलाह। सीता-सहित कनैत चारू भाइक रुदन-शब्द ओहि पर्वत पर सिंह-गर्जनक समान प्रतिध्वनित भेल।

महर्षि वसिष्ठ महाराज दशरथक रानीसबकेँ आगाँ कए श्रीरामचन्द्रक पर्णकुटी दिसि चललाह। मन्दगतिसँ चलैत रानीसब मन्दाकिनीक तट पर पहुँचि श्रीराम ओ लक्ष्मणक स्नान करबाक घाटकेँ देखलैन्हि, से देखि कौसल्याक मुह पर नोरक धार बहए लागल। ओ सुखाएल उदास मुखसँ दीना सुमित्रा ओ कैकेयीकेँ कहलथिन्ह—"राज्यसँ बहार कए देल गेल हमरालोकनिक बच्चाक ई दुर्गम तीर्थ थिक। सुमित्रे! आलस्यरहित अहाँक पुत्र हमर बेटाक हेतु एतहिसँ जल लए जाइत छथि। अहाँक पुत्र छोटसँ छोट सेवा-कार्य स्वीकार कइओकेँ निन्दित नहि भेलाह अछि। मुदा ओ ओहि क्लेशकेँ सहबाक योग्य नहि छथि जकरा ओ सहन कए रहलाह अछि। आब श्रीरामक एतएसँ घुरला पर एहन कार्य करबाक हुनका अवसरे नहि भेटतैन्हि!"

आगाँ जाए कौसल्या देखलैन्हि जे श्रीराम पृथिवी पर बिछाओल दक्षिणाग्र कुशक ऊपर अपन पिताक हेतु पीसल इंगुदी फलक पिण्ड रखने छथि। रामक द्वारा पिताक हेतु देल गेल पिण्डकेँ देखि कौसल्या दशरथक अन्य रानीसबसँ कहलैन्हि—"बहिन ! देखू, एतए श्रीराम विधिपूर्वक पिण्डदान कएल अछि। जे चारू समुद्र धरिक पृथ्वीक राज्य भोगि भूतल पर इन्द्रक समान प्रतापी छलाह, से महाराज दशरथ इंगुदी फलक पिण्ड कोना खाइत होएताह ? ई लोकोक्ति निश्चय हमरा सत्य बूझि पड़ैत अछि जे मनुष्य स्वयं जे अन्न खाइत अछि, देवता सेहो सएह अन्नकेँ ग्रहण करैत छथि।"

शोकसँ आर्त्त कौसल्याकेँ हुनक सौतिन सब बुझाए-सुझाए आगाँ कए लए गेलथिन्ह। आश्रममे पहुँचि सब केओ रामकेँ देखलैन्हि जे स्वर्गसँ खसल देवता जकाँ लगैत छलाह। भोगक परित्याग कए जे तपस्वी-जीवन व्यतीत करैत छथि, ताहि श्रीरामकेँ हुनक मातालोकनि देखलैन्हि तँ कनैत-कनैत धारा-प्रवाह अश्रु बहबए लगलीह। सत्प्रतिज्ञ नरश्रेष्ठ श्रीराम माता सबहिकेँ देखितहिँ उठि ठाढ़ भए गेलाह ओ सबकेँ चरण-स्पर्श कए कए प्रणाम कएलैन्हि। श्रीरामक पश्चात् लक्ष्मण अपन दुःखी मातासबहुकेँ देखि दुःखी होइत प्रणाम कएल। माता सब सेहो श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ वात्सल्यसँ ओत-प्रोत भए पीठ पोछि पोछि

अपन स्नेह-भावनाकेँ व्यक्त करैत गेलीह। तदुत्तर नोरसँ भरल नेत्र जनिक रहैन्हि से सीता अपन सासुलोकनिक चरण-वन्दना कएलैन्हि तँ कौसल्या हुनका छातीसँ सटाए कहलथिन्ह—"बेटी! विदेहराज जनकक बेटी, राजा दशरथक पुतहु ओ श्रीरामक पत्नी भए एहि निर्जन वनमे किएक दुःख भोगैत छी? अहाँक मुख रौदमे जरैत कमल, धूलिमे ध्वस्त सुवर्ण ओ मेघसँ झाँपल चन्द्रमा जकाँ श्रीहीन लगैत अछि, जकरा देखि हमर हृदय शोकसँ जरि रहल अछि।"

शोकाकुल माता एहि प्रकारक विलाप कए रहलि छलीह, तखनहिँ भरतक अग्रज श्रीराम वसिष्ठक पाएर पर खसि पड़लाह ओ दूहू हाथसँ तकरा पकड़नहिँ हुनका लग बैसि गेलाह। तत्पश्चात भरत सङ्ग आएल सब मन्त्री, प्रधान प्रधान नागरिक, सैनिक तथा परम धर्मज्ञ पुरुषलोकनिक सङ्ग अपन जेठ भाइक पाछाँ बैसि गेलाह। तखन अपन सुहृद-जनसँ घेरल सत्य-प्रतिज्ञ राम, महानुभाव लक्ष्मण ओ धर्मात्मा भरत यज्ञशालामे सदस्य सब द्वारा घेरल त्रिविध अग्निक समान सुशोभित भए रहल छलाह। राति एहिना पिताक मृत्युक दुःखक शोक करैत बितलैन्हि, भोरे उठि भरत आदि तीनू भाइ सुहृदजनक सङ्ग मन्दाकिनीक तट पर गेलाह ओ स्नान, होम एवं जप आदि कए पुनः श्रीराम लग घुरि अएलाह।

राम लग आबि सब चुपचाप बैसि गेलाह, केओ किछु नहि बजैत छलाह। तखन भरत रामसँ कहए लगलथिन्ह—"भाइजी! पिताजी वरदान दए हमर माएकेँ सन्तुष्ट कए देलैन्हि ओ माए ई राज्य हमरा देलैन्हि। आब हम ई राज्य अपनेक सेवामे समर्पित करैत छी, अपने एकर पालन ओ उपभोग करू। एहि विशाल राज्यक पालन अहाँकेँ छोड़ि आन के कए सकैत अछि? दादाजी अपने सन सर्वगुण सम्पन्न पुत्र लोकरक्षाक उद्देश्यें उत्पन्न कएने छलाह, यदि अपने राज्यपालनक भार अपन हाथमे नहि लेब तँ हुनक ओ उद्देश्य व्यर्थ भेलैन्हि। अतः महाराज! विभिन्न जातिक संघ ओ प्रधान-प्रधान पुरुष अपनेकेँ चारू कात तपैत सूर्य जकाँ राज्य-सिंहासन पर विराजमान देखथि।" श्रीरामसँ राज्यग्रहण करबाक भरतक एहि प्रकारक प्रार्थनाकेँ सब केओ नीक जकाँ अनुमोदित करैत गेलाह।

तखन भगवान श्रीराम यशस्वी भरतकेँ सान्त्वना दैत कहलथिन्ह—"भरत! ई जीव ईश्वरक समान स्वतन्त्र नहि अछि, केओ एतए अपन इच्छाक अनुसार किछु नहि कए सकैत अछि, सब केओ कालक प्रेरणासँ एमहर ओमहर खीचल रहैत अछि। लोक जतेक संग्रह करैत अछि ताहि सबहिक विनाश भए जाइत छैक; लौकिक उन्नतिक पतन, संयोगक वियोग ओ जीवनक अन्त मरण निश्चित अछि। जे बीति जाइत अछि से घुरिकेँ नहि अबैछ, दिन-राति

अबाध गतिएँ बीति रहल अछि, एहि संसारक प्राणी सबहिक सेहो तीव्र गतिएँ नाश होइत अछि, ठीक ओहिना जेना सूर्यक किरण ग्रीष्म-ऋतुमे जलकेँ बड़ शीघ्रतासँ सोखि लैत अछि। अहाँ अपन चिन्ता करू, दोसराक हेतु शोक किएक करैत छी? मृत्यु सङ्ग चलैत अछि, सङ्ग बैसैत अछि ओ दीर्घ मार्गक यात्राक मध्य सेहो सङ्ग-सङ्ग रहैत सङ्गहि घुरैत अछि। जेना नदीक प्रवाह पाछाँ नहि घुरैत अछि, तहिना दिन-दिन बितैत अवस्था फेर नहि घुरैत अछि। आयुक क्रमिक नाश भए रहल अछि, तेँ आत्माक कल्याणक हेतु साधना करबाक चाही, कारण, सब केओ अपने कल्याण देखैत अछि। तात! दादाजी धर्मात्मा छलाह, ओ कतेक शुभकारक यज्ञ कएने छलाह। हुनक सबटा पाप नष्ट भए गेलैन्हि ओ तेँ स्वर्गलोक चल गेलाह। ओ अपन कर्तव्य नीक जकाँ कएने छलाह. अतः स्वर्ग पाबि लेलैन्हि अछि; जरा-जीर्ण शरीरक त्याग कए ब्रह्मलोकमे विचरण करैत छथि। तेँ ओ कोनहु बुद्धिमान तथा शास्त्रज्ञान-सम्पन्न व्यक्तिक हेतु शोकक विषय नहि छथि। ई जानि अहाँकेँ शोक नहि करबाक चाही! अहाँ स्वस्थ होउ ओ अयोध्यापुरीमे निवास कए प्रजाक पालन करू, पूज्य दादाजी इएह आदेश दए गेल छथि। ओ पुण्यकर्मा दादाजी हमरहु जे आज्ञा दए गेल छथि, तकर पालन हम करब। भरत! पिताजीक आज्ञाक अवहेलना हमरा हेतु कदापि उचित नहि थिक। ओ

अहूँक हेतु सर्वदा सम्मानक योग्य छथि, कारण, ओ हमरा-लोकनिक हितैषी ओ जन्म-दाता छलाह।" सर्वशक्तिमान भगवान् श्रीराम भरतकेँ पिताक आज्ञापालन करबाक हेतु एहि प्रकारक सार्थक वचन कहलथिन्ह।

एहि पर भरत पुनः श्रीरामकेँ अयोध्या घुरि चलबाक आग्रह करैत कहए लगलथिन्ह—"शत्रुदमन रघुनन्दन! एहि संसारमे जेहन अपने छी, तेहन आन केओ नहि अछि। नरेश्वर! जकरा अपने सन आत्मा-अनात्माक ज्ञान छैक, सएह सङ्कट पड़लहु पर शोक नहि करत। अपने देवता जकाँ सत्वगुण-सम्पन्न, महात्मा, सत्यप्रतिज्ञ, सर्वज्ञ, सभक साक्षी ओ बुद्धिमान थिकहुँ। एहन उत्तम गुणसँ युक्त ओ जन्म-मरणक रहस्यक ज्ञाता अहाँ लग असह्य दुःखो नहि पहुँचि सकैत अछि। जखन हम परदेशमे छलहुँ, तखन नीच विचार रखनिहारि हमर माए हमरा हेतु जे पाप कएलैन्हि, से हमरा अभीष्ट नहि छल, अतः क्षमा कए हमरा पर प्रसन्न होउ। हम धर्मक बन्धनसँ बान्हल छी, तेँ ई पापकर्म कएनिहारि दण्ड-णीय माएकेँ दण्ड दए मारि नहि सकैत छी। जनिक कुल ओ कर्म दूनू शुभ छलैन्हि, ओहि महाराज दशरथसँ हम धर्म-अधर्म जनितहुँ मातृवध-रूप लोकनिन्दित कर्म कोना करू? हमर सर्वगुण-सम्पन्न पिता स्वर्गवासी भए चुकलाह अछि, तेँ हुनक निन्दा नहि करैत छिऐन्हि; मुदा के एहन लोक होएत जे धर्मकेँ जनितहुँ अपन स्त्रीकेँ प्रसन्न करबाक हेतु

एहन धर्म ओ अर्थसँ हीन कुत्सित कर्म करत? दादाजी क्रोध, मोह ओ साहसक कारणेँ ठीक बूझि जे धर्मक उल्लङ्घन कएल, तकरा अपने बदलि दिअ, संशोधन कए दिआ। जे पिताक कएल अनुचित कार्यकेँ सुधारि दैत अछि, सएह लोकमे उत्तम सन्तान मानल जाइत अछि। अतः अपने हुनक अनुचित कर्मक समर्थन नहि कए दादाजीक उत्तम सन्तान बनल रहू। पुरुष-प्रवर! आइ अपने हमर माएक कलङ्ककेँ धो-पोछि पूज्य दादाजीकेँ निन्दासँ बचाउ। हम अपनेक चरण पर माथ रगड़िकेँ याचना करैत छी, हमरा पर दया करू। जेना महादेव सकल प्राणी पर अनुग्रह करैत छथि तहिना अपनहुँ अपन बन्धु-बान्धव पर कृपा करू अथवा यदि अपने हमर प्रार्थनाकेँ ठोकराए वनवासे करब तँ हम सेहो एतए सङ्गहि रहब।" ग्लानिसँ भरल भरत श्रीरामक चरण पर माथ टेकि हुनका प्रसन्न करबाक बारंबार चेष्टा कएलैन्हि, तथापि सत्वगुण-सम्पन्न रघुनाथ श्रीराम अपन पिताक आज्ञा-पालनमे दृढ़ रहलाह ओ अयोध्या घुरबाक विचार नहि कएल।

श्रीरामचन्द्रक अद्भुत दृढ़ताकेँ देखि सब लोक दुःखी, सङ्गहि हर्षित सेहो भेलाह। ई अयोध्या नहि जा रहल छथि, से सोचि दुःखी भेलाह ओ प्रतिज्ञा-पालनमे एतेक दृढ़ छथि, से देखि हर्षित भेलाह। ओहि समय ऋत्विज, पुरवासी, भिन्न-भिन्न समुदायक नेता ओ माता सब अचेत सन भेल

नोर बहबैत अपन-अपन योग्यतानुसार श्रीरामक सम्मुख विनीत भए हुनका अयोध्या घुरि चलबाक हेतु बारंबार याचना करए लगलाह।

भरतक एहि प्रकारक प्रार्थना सुनि अपन कुटुम्बीजनक बीच बैसल श्रीराम हुनका उत्तर देलथिन्ह—"भरत! अहाँ नृपश्रेष्ठ दशरथ द्वारा माता कैकेयीक गर्भसँ उत्पन्न भेल छी, तेँ अहाँक ई उत्तम वचन सर्वथा अहींक योग्य अछि। दादाजी अहाँक माएक विवाहक पहिनहिँ कैकेयी द्वारा उत्पन्न पुत्रकेँ राज्य देबाक वचन अहाँक नानाकेँ देने रहथिन्ह, फेर देवासुरसंग्राममे अहाँक माताक सेवासँ प्रसन्न भए हुनका वरदान देलथिन्ह, जकर अनुसार अहाँक माए अहाँक हेतु राज्य माँगल ओ हमरा हेतु माँगल वनवास! तदनुसार हम सीता ओ लक्ष्मणक सङ्ग एहि निर्जन वनमे चल आएल छी, दादाजीक वचनक पालन कए रहल छी। अहूँ हुनक बात मानि राज्यपद पर शीघ्र अभिषेक करबाए लिअ ओ दादाजीकेँ सत्यवादी सिद्ध करू। अहाँ हमर पूज्य पिताकेँ कैकेयीक ऋणसँ मुक्त करबाए हुनका नरकमे जएबासँ बचाए लिऔन्ह ओ माताकेँ सेहो प्रसन्न करू। नरश्रेष्ठ भरत! अहाँ शत्रुघ्न ओ समस्त ब्राह्मणक सङ्ग अयोध्या घुरि जाउ ओ प्रजाकेँ सुखी बनाउ। भरत! अहाँ मनुष्यक राजा बनू ओ हम वन्य पशुक सम्राट बनब; आब अहाँ हर्षपूर्वक अयोध्या जाउ, हम प्रसन्नतापूर्वक सीता ओ लक्ष्मणक सङ्ग दण्डकारण्यमे प्रवेश

करब; सूर्यक प्रभाकें तिरोहित कएनिहार छत्र अहाँक मस्तक पर शीतल छाया करओ, हम वनक गाछक सघन छायातर आश्रय लेब। भरत! अतुलित बुद्धिसँ सम्पन्न शत्रुघ्न अहाँक सहायक छथि ओ सुविख्यात सुमित्राकुमार लक्ष्मण हमर प्रधान मित्र छथि, हम चारू पुत्र अपन पिता दशरथक सत्यक रक्षा करी। एहि हेतु अहाँ विषाद जुनि करू।"

जखन धर्मज्ञ श्रीराम भरतकें एहि प्रकारें बुझाए रहल छलथिन्ह, तखन ब्राह्मणशिरोमणि जाबालि नास्तिक मतक अवलम्बन कए बुझबए लगलथिन्ह, परन्तु धर्मज्ञ श्रीराम जाबालिक मतक सब तर्कके बड़ कौशलसँ काटि देल ओ हुनक अधर्मकथाक प्रति अपन रोष व्यक्त कएल। हुनका रुष्ट देखि वसिष्ठ कहलथिन्ह—"जगदीश्वर! जाबालि अहाँकें घुरएबाक इच्छासँ नास्तिकतापूर्ण कथा कहल अछि।" तत्पश्चात् ओ लोकक उत्पत्तिक वृत्तान्त कहैत श्रीरामकें बुझओलथिन्ह—"ई कुल-परम्परागत राज्य अहाँक थिक, तें एकरा अहाँ ग्रहण करू। समस्त इक्ष्वाकुवंशीक जेठे पुत्र राजा होइत आएल छथि, जेठक अछैत छोट पुत्र राजा नहि होइत अछि। जेठे पुत्रकें राजाक पद पर अभिषेक होइत अछि। महायशस्वी राम! रघुवंशीक जे सनातन कुलधर्म रहलैन्हि अछि, तकरा अहाँ नष्ट नहि करू ओ एहि रत्नगर्भा पृथ्वीक पिता जकाँ पालन करू।" एतबा कहि राज्य-पुरोहित धर्मयुक्त उपदेश

देबए लगलथिन्ह—"रघुनन्दन ! एहि संसारमे उत्पन्न पुरुषकें सदैव तीनटा गुरु होइत छथिन्ह—आचार्य, पिता ओ माता। पिता शरीरकें उत्पन्न करैत छथि, तें गुरु होइत छथि ओ आचार्य ज्ञान प्रदान करैत छथि, तें गुरु कहबैत छथि। रघुवीर ! हम अहाँक पिताक ओ अहाँक सेहो आचार्य छी। अतः हमर आज्ञाक पालन करब तँ ताहिसँ सत्पथक त्याग कएनिहार नहि कहाएब। अपन धर्मपरायण बूढ़ि मएक आज्ञाकें नहि टारबाक थिक। हिनक आज्ञा-पालन कए अहाँ श्रेष्ठपुरुषक आश्रयभूत धर्मक उल्लंघन कएनिहार नहि मानल जाएब। सत्य, धर्म ओ पराक्रमसँ सम्पन्न रघुनन्दन ! भरत अपन आत्मस्वरूप अहाँकें राज्यग्रहण करबाक ओ अयोध्या घुरबाक प्रार्थना कए रहल छथि, हुनक बात मानि लेलासँ अहाँ धर्मक उल्लंघन करएबला नहि कहाएब।"

गुरु वसिष्ठक सुमधुर वचन सूनि साक्षात् पुरुषोत्तम श्रीराम उत्तर देलथिन्ह—"माता-पिता पुत्रक प्रति सदिखन स्नेहपूर्ण व्यवहार करैत छथि, अपन शक्तिक अनुसार उत्तम खाद्य-पदार्थ दैत छथि, नीक बिछाओन पर सुतबैत छथि, उबटन आदि लगबैत छथि, सदैव मधुर कथा कहैत छथि। माता-पिताक उपकारक बदला नहि चुकाओल जाए सकैत अछि। अतः हमर जन्मदाता दशरथ हमरा जे आज्ञा देलैन्हि अछि, से मिथ्या नहि होअए देब।"

श्रीरामक ई कथा सूनि भरतजी उदास भए गेलाह ओ

लगहिमे बैसल सूत सुमन्त्रकें कहलैन्हि—"सारथे ! एहि वेदी पर शीघ्र पर्याप्त कुश बिछाए दिऔक। जाबत धरि आर्य प्रसन्न नहि होएताह, ताबत धरि एतहि हम धरना देब। जेना महाजनक द्वारा निर्धन कएल गेल ब्राह्मण ओकरहि घरक द्वार पर मुह झाँपि बिना खएने-पीने पड़ल रहैत अछि, तहिना हम उपवास करैत मुख झपने एहि कुटीक सम्मुख पड़ि रहब। जाबत धरि हमर बात मानि ई अयोध्या नहि घुरताह, ताबत धरि एहिना पड़ल रहब।" ई सूनि सुमन्त्र श्रीरामचन्द्रजीक मुह दिसि ताकए लगलाह, से देखि भरतक मनमे बड़ दुःख भेलैन्हि, ओ स्वयं कुशक पटिआ बिछाए भूमि पर बैसि गेलाह। तखन महातेजस्वी राजर्षिशिरोमणि श्रीराम हुनका कहलथिन्ह—"तात भरत ! हम अहाँक कोन अनुचित कएल अछि जे हमर आगाँ धरना देने रहब ? नरश्रेष्ठ रघुनन्दन ! एहि कठोर व्रतकें परित्याग कए उठू ओ अयोध्यापुरी घुरि जाउ।" ई सूनि भरत बैसले-बैसले ओतए बैसल सबलोकक दिसि तकैत बजलाह—"अहाँ सब भैयाकें किएक ने बुझबैत छिऐन्हि ?" तखन नगर ओ जनपदक लोक महात्मा भरतकें कहलथिन्ह—"हम जनैत छी, श्रीरामचन्द्रकें भरत उचिते कहैत छथिन्ह, मुदा महाभाग श्रीरामचन्द्रजी पिताक आज्ञाक पालन करैत छथि, सेहो उचिते थिक। अतएव हमरालोकनि हिनका सहसा घुरएबामे असमर्थ छी।" पुरवासीक वचनक तात्पर्य बूझि श्रीराम भरतसं कहलैन्हि—"भरत ! धर्म पर दृष्टि

रखनिहार सुहृदजनक वचन सुनू ओ बुझू। हमर ओ हिनका-लोकनिक बात पर सम्यक रूपें विचार करू ओ आब शीघ्र उठू, हमरा ओ जलकें स्पर्श करू।"

अपन भाइक ई कथा सूनि भरत उठिकें ठाढ़ भए गेलाह, श्रीराम ओ जलकें स्पर्श करैत बजलाह—"हमर मन्त्री ओ सभासद सबलोक सुनथु—ने तँ हम दादाजीसँ राज्य मँगने छलिऐन्हि आ ने मातासँ सएह कहिओ एहि हेतु कहने छलिऐन्हि, सङ्गहि भाइजीक वनवासहुमे हमर कोनो सम्मति नहि छल। तइओ यदि हिनका हेतु आज्ञाक पालन करब ओ वनमे रहब अनिवार्य अछि तँ हिनक बदलामे हमहि चौदह वर्ष वनमे निवास करब।" भाइ भरतक ई सत्य वचन सूनि श्रीरामकें बड़ विस्मय भेलैन्हि, ओ पुरवासी तथा राज्य-निवासी दिसि देखैत बजलाह—"दादाजी जे वस्तु अपन जीवन-कालमे वेचि देलैन्हि अथवा धरोहर राखि देलैन्हि, अथवा किनवे कएलैन्हि, तकरा हम वा भरत पलटि नहि सकैत छी। सामर्थ्य रहैत प्रतिनिधिसँ काज लेब लोक-निन्दित अछि, अतः वनवासक हेतु ककरहु प्रतिनिधि बनाएब हम उचित नहि बुझैत छी। हम जनैत छी जे भरत बड़ क्षमाशील ओ गुरुजनक सत्कार करएबला छथि, सत्यप्रतिज्ञ महात्मा भरतमे सब कल्याणकारी गुण छैन्हि। अतः हम चौदह वर्षक अवधि काटि जखन वनसँ घूरब, तखन अपन

धर्मशील भाइ भरतक सङ्ग भूमण्डलक श्रेष्ठ राजा बनब। कैकेयी राजासँ वर मँगलैन्हि ओ हम पालन करब स्वीकार कए लेल। अतः भरत! आब अहूँ हमर कहब मानि ओहि वरक पालन द्वारा अपन पिता महाराज दशरथकेँ असत्यक बन्धनसँ मुक्त करू।"

दूहू तेजस्वी भ्राताक ओहि रोमाञ्चकारी समागमकेँ देखि ओतए आएल महर्षिगणकेँ बड़ विस्मय भेलैन्हि। अन्तरिक्षमे अदृश्य भावसँ ठाढ़ मुनि तथा ओतए प्रत्यक्ष बैसल महर्षिलोकनि ओहि महान् भाग्यशील रघुवंशी बन्धुक भूरि-भूरि प्रशंसा करए लगलाह। तदुत्तर दशग्रीव रावणक वधक अभिलाषा रखनिहार ऋषिलोकनि राजर्षि भरतकेँ तुरन्त कहलथिन्ह—"महाप्राज्ञ! अहाँ उत्तम कुलमे उत्पन्न भेल छी। अहाँक आचरण उत्तम ओ यश महान अछि। यदि अहाँ अपन पिताकेँ सुख पहुँचाबए चाहैत छी तँ अहाँकेँ श्रीरामचन्द्रजीक कथा मानि लेबाक चाही। हम सब श्रीरामकेँ पिताक ऋणसँ उऋण देखए चाहैत छिऐन्हि, कैकेयीसँ उऋण होएबाक हेतु महाराज दशरथ स्वर्ग गेलाह अछि।" एतबा कहि ओतए उपस्थित गन्धर्व, महर्षि ओ राजर्षिसब अपन-अपन स्थान पर चल जाइत गेलाह।

श्रीराम महर्षि लोकनिक वचनसँ प्रसन्न भेलाह, हुनक मुख हर्षोल्लाससँ विकसित भए गेलैन्हि। परन्तु भरतक समक्ष

शरीर थर-थर थर-थर काँपए लगलैन्हि । ओ अवरुद्ध स्वरमे श्रीरामचन्द्रजीसँ कहलथिन्ह—"ककुत्स्थकुल-भूषण श्रीराम ! हमरालोकनिक कुलमे ज्येष्ठ पुत्र सएह राज्यग्रहण कए प्रजा-पालन-रूप धर्म करैत अछि, तेँ से बूझि अपने हमर ओ माता सबहिक याचनाकेँ सफल करू। हम एसकरे एहि विशाल राज्यक रक्षा नहि कए सकब । महाप्रज्ञ ! अपने ई राज्य स्वीकार कए ककरहु आनकेँ एकरा पालन कर-बाक भार दए दिऔक।" ई कहि भरत अपन भाइक चरण पर खसि पड़लाह। तखन श्रीरघुनाथजी हुनका अपन अङ्कमे भरि लेल ओ मदमत्त हंसक समान मधुर स्वरमे कहल—"तात ! अहाँकेँ स्वाभाविक विनयशील बुद्धि प्राप्त अछि, एहि बुद्धिक द्वारा समस्त भूमण्डलक रक्षा करबामे अहाँ सर्वथा समर्थ छी। अहाँ अमात्यवर्ग, सुहृदजन तथा मन्त्री-सबहुसँ विचार लए हुनकहिलोकनिक द्वारा पैघसँ पैघ कार्य कराए लेब। हम कोनहुँ प्रकारेँ पिताक आज्ञा भंग नहि कए सकैत छी। तात ! माता कैकेयी कामनासँ अथवा लोभसँ वशीभूत भए अहाँक हेतु जे किछु कएलैन्हि अछि, से मनमे नहि राखब तथा हुनका सङ्ग ओहने व्यवहार करबैन्हि जेहन पूजनीया मातासँ करब उचित थिक।"

सूर्यजकाँ तेजस्वी ओ परीबक चन्द्रमा जकाँ आह्लाद-जनक कौसल्यानन्दन श्रीरामक ई कहला पर भरत बजलाह—"आर्य ! ई दुइगोट सुवर्णभूषित पादुका अपनेक चरणमे अर्पित

अछि, एकरा अपने पहिरि लिअ, इएह सम्पूर्ण जगतक योगक्षेमक निर्वाह करत।" तखन पुरुषसिंह राम ओहि दूनू पादुकाकेँ पहिरि ओ उतारि महात्मा भरतकेँ समर्पित कए देलैन्हि । ओहि पादुकाकेँ प्रणाम कए भरत श्रीरामकेँ कहलथिन्ह—"रघुनन्दन ! हम चौदह वर्ष धरि जटा ओ चीर धारण कए फल-मूलक भोजन करैत अपनेक आगमनक प्रतीक्षा नगरक बहारहिँ करैत रहब। परंतप ! एतबा दिन धरि राज्यक सम्पूर्ण भार एहि चरण-पादुका पर राखि अपनेक बाट तकैत रहब ! रघुकुलशिरोमणि ! यदि चौदह वर्ष पूर्ण भेला पर नूतन वर्षक प्रथमहिँ दिन अपनेक दर्शन नहि होएत तँ जरैत आगिमे प्रवेश कए जाएब ।" श्रीरामचन्द्रजी 'वेश' कहि स्वीकृति दए देल तथा बड़ आदरसँ हुनका अपन हृदयमे लगाए लेल। तत्पश्चात् शत्रुघ्नकेँ छातीमे सटबैत बजलाह-"रघुनन्दन ! अहाँकेँ अपन ओ सीताक शपथ दैत छी, अहाँ कैकेयीक रक्षा करबैन्हि, हुनका पर क्रोध नहि करबैन्हि।" एतबा कहैत-कहैत हुनक आँखि उमड़ि अएलैन्हि। ओ व्यथित हृदयसँ दूहू भाइकेँ विदा कएलैन्हि।

धर्मज्ञ भरत नीक जकाँ अलंकृत ओहिपरम उज्ज्वल चरण-पादुकाकेँ लए अपन जेठ भाइक परिक्रमा कएल तथा ओहि दूनू पादुकाकेँ राजाक सवारीमे प्रयुक्त सर्वश्रेष्ठ गजराजक मस्तक पर स्थापित कए देल। तदुत्तर धर्ममे हिमालय जकाँ अविचल रघुनाथ श्रीराम सबकेँ यथायोग्य सत्कार कए विदा कएल। ओहि समय कौसल्या आदि माता सबहिक

कण्ठ अश्रु-प्रवाहक कारणेँ बाझि गेलैन्हि, दुःखक कारणेँ श्रीरामकेँ किछु कहिओ नहि सकलथिन्ह। श्रीराम सब माताकेँ प्रणाम कए अपन पर्णशालामे चल गेलाह।

अयोध्यापुरीमे पहुँचि दृढ़ प्रतिज्ञ भरत अपन माता-सबहुकेँ महलमे स्थापित कए देलैन्हि। तत्पश्चात् अपन गुरु-जनकेँ कहलथिन्ह—"आब हम नन्दिग्राम जाएब, ओतहि हम श्रीरामक वियोग-जन्य सब दुःख कहुना सहन करब, तेँ आज्ञा दिअ। महाराज तँ स्वर्ग चल गेलाह ओ भाइजी वनवास करैत छथि। हम एहि राज्यक हेतु ओतहि भाइजीक प्रतीक्षा करैत रहब, महायशस्वी राम सएह हमरा-लोकनिक राजा छथि।" महात्मा भरतक एहन शुभ वचन सूनि सब मन्त्री ओ पुरोहित वसिष्ठ हुनक प्रशंसा करैत कहलथिन्ह--"भरत! भ्रातृभक्तिसँ प्रेरित जे कथा अहाँ कहल अछि, से वड़ प्रशंसनीय अछि। अहाँ अपन जेठ भाइक दर्शनक हेतु लालायित रहैत हुनक हित-साधनमे तत्पर छी, श्रेष्ठ-मार्गक अनुसरण करैत छी, अतः एहन के होएत जे अहाँक विचारक अनुमोदन नहि करत?" मन्त्रीलोकनिक सहमति पाबि भरत सारथीकेँ आज्ञा देलैन्हि—"हमर रथ जोतिकेँ तैआर कएल जाए।" तदुत्तर प्रसन्न-वदन ओ मातासबहुसँ आज्ञा लए शत्रुघ्नक सङ्ग रथ पर चढ़ि नन्दि-ग्रामक हेतु विदा भेलाह।

आगाँ-आगाँ वसिष्ठ आदि सब गुरुजन ओ ब्राह्मण जाए रहल छलाह। ओ सब अयोध्याक पूब दिसि भए यात्रा कएल एवं ओहि मार्गक अनुसरण कएल जे नन्दिग्राम जाइत छलैक। भरतक प्रस्थान कएला पर हाथी, घोड़ा ओ रथसँ भरल सम्पूर्ण सेना बिन बजओनहिँ हुनक पाछाँ-पाँछा चलल, समस्त पुरजन सेहो हुनक सङ्ग भए गेलाह। धर्मात्मा भ्रातृ-वत्सल भरत अपन मस्तक पर भगवान् श्रीरामक चरण-पादुका रखने रथ पर बैसल बड़ शीघ्रतासँ नन्दिग्राम दिसि जाए रहल छलाह।

नन्दिग्राममे शीघ्र पहुँचि भरत तुरन्त रथसँ उतरि गेलाह ओ अपन गुरुजनसँ कहलैन्हि—"हमर भाइ ई उत्तम राज्य हमरा धरोहरक रूपमे देने छथि, हुनक ई सुवर्ण-विभूषित पादुका सएह सबक योगक्षेमक निर्वाह करएबला अछि।" तत्पश्चात् भरत माथ नीचाँ कए ओहि दूनू चरण-पादुकाकेँ धरोहर-स्वरूप राज्यकेँ समर्पित कए दुःखसँ सन्तप्त भए मन्त्री, सेनापति ओ प्रजा प्रभृतिकेँ कहल—"अहाँ सब केओ एहि चरणपादुका पर छत्र धारण करू। हम एकरा आर्य रामचन्द्रजीक साक्षात् चरण मानैत छी, एहि चरणपादुकासँ सएह एहि राज्यमे धर्मक स्थापना होएत। भाइजी प्रेमक कारणहिँ ई धरोहर हमरा देलैन्हि अछि। अतः जाबत ओ घुरैत छथि ताबत धरि एकर नीकजकाँ रक्षा करब। तदुत्तर ई श्रेष्ठ पादुका श्रीरामचन्द्रजीक सेवामे समर्पित कए हम सब

प्रकारक पाप-तापसँ मुक्त भए जाएब।" एहि प्रकारेँ दीन-भावेँ विलाप करैत दुःखमग्न महायशस्वी भरत मन्त्री-लोकनिक सङ्ग नन्दिग्राममे रहैत राज्यक शासन करए लगलाह।

भरतजी राज्य-शासनक समस्त कार्य भगवान् श्रीरामक चरणपादुकासँ निवेदित कए करथि तथा चरणपादुका पर स्वयं ओ छत्र लगबथि, चँवर डोलबथि। एहि प्रकारेँ श्री रामक शरणापन्न भेल ओ भ्रातृवत्सल भरत राज्यक शासन करितहुँ वनवासी जकाँ आचरण करैत ओ अपन भाइ भगवान् श्रीरामचन्द्रजीक आगमनक बाट तकैत चौदह वर्षक दीर्घ अवधिकेँ काटए लगलाह।



३

सीता-शरणापन्न

दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्रक विवाह जनकनन्दिनी सीताक सङ्ग सुसम्पन्न भेल। तदुत्तर मिथिलासँ अपन पत्नीक सङ्ग ओलोकनि अपन नगर अयोध्या विदा भए गेलाह। ओतए पितृ-भक्त श्रीराम अपन पिताकेँ राज्य-कार्यमे सहायता करैत सीताक सङ्ग अलौकिक दाम्पत्य-सुखक भोग करए लगलाह।

सीता ओ रामक प्रेम बड़ अद्भुत छल। श्रीराम सदैव सीताक हृदय-मन्दिरमे विराजमान रहैत छलाह ओ सीता सेहो श्रीरामकेँ बड़ प्रिय छलथिन्ह। सीता श्रीरामक पत्नी छलीह ओ तेँ ओ अपन पतिक शरणापन्न रहैत पातिव्रत्य आदि गुणक द्वारा हुनका विमुग्ध कएने रहैत छलीह। श्रेष्ठ राजकुमारी सीता श्रीराम मात्रक कामना करैत छलीह, तहिना श्रीराम सीताकेँ बड़ मानैत छलथिन्ह। जाहि प्रकारेँ लक्ष्मीक सङ्ग देवेश्वर भगवान् विष्णु शोभित होइत छथि, तहिना सीतादेवीक सङ्ग दशरथकुमार श्रीराम परम प्रसन्न रहैत बड़ शोभा पबैत छलाह।

ताबत अपन मन्त्रीलोकनि तथा नगरक प्रमुख-प्रमुख सभ्यसमुदायसँ विचार-विमर्श कए महाराज दशरथ श्रीरामकेँ युवराज-पद पर प्रतिष्ठित करबाक निश्चय कएल ओ तकर प्रबन्ध होअए लागल। परन्तु दुर्बुद्धि मन्थराक बहकओलासँ रानी कैकेयी कोपभवनमे जाए बैसलीह तथा

दशरथसँ प्रतिज्ञा कराए दुइ गोट वर माँगि लेलि जे श्रीराम तपस्वीक वेशमे वल्कल तथा मृगचर्म धारण कए चौदह वर्ष धरि दण्डकारण्यमे वास करथि तथा भरतकेँ निष्कण्टक युवराज-पद प्राप्त होइन्हि। सत्य-प्रतिज्ञ महाराज दशरथ कैकेयी द्वारा ई वर मँगितहि मूर्च्छित सन भए गेलाह ओ 'हा राम' कहि दीर्घ श्वास लैत कटल गाछ जकाँ पृथ्वी पर खसि पड़लाह।

श्रीराम बड़ पितृ-भक्त छलाह। तेँ ओ पितृ-वचनकेँ पालन करब निश्चित कएल। अपन माए कौसल्यासँ विदा लेबाक हेतु रानीलोकनिक अन्तःपुरमे जाए ओ बुझाए-सुझाए हुनकहुँ अपन वनवासक हेतु अनुमति लए लेल। तदुत्तर ओ अपन अन्तःपुरमे गेलाह तँ हुनका उदास देखि शोक-सन्तप्त भए जनकनन्दिनी सीता पुछलथिन्ह—"रघुनन्दन! आइ बृहस्पति देवता सम्बन्धी मङ्गलमय पुष्य नक्षत्र थिक। एही नक्षत्रमे आइ अहाँक अभिषेक होएत, तखन प्रसन्न होएबाक स्थान पर उदास किएक छी? अहाँक मुख-कान्ति मलिन किएक भए गेल अछि? अहाँक मुह पर कनिओ प्रसन्नताक भाव नहि अछि। एकर कारण की अछि?" विदेह-नन्दिनीक आशङ्कासँ युक्त जिज्ञासाकेँ सूनि श्रीराम कहलथिन्ह-"सीते! आइ पूज्य पिताजी हमरा वन पठाए रहल छथि। हमर सत्यप्रतिज्ञ पिता महाराज दशरथ माता कैकेयीकेँ बड़ पैघ उपकार करबाक कारणेँ बहुत दिन पूर्व दुइ गोट वर देने छलथिन्ह। एमहर जखन हमर अभिषेकक प्रबन्ध होअए

लागल तँ ओ ओहि वरदानकें मन पाड़ि हमर चौदह वर्ष धरि दण्डकारण्यमे निवास करब ओ भरतकें युवराज-पद पर नियुक्त करब दुइ गोट वर पिताजीसँ माँगि लेलि। हम एखनहिं निर्जन वनक हेतु प्रस्थान कए रहल छी, तें विदा लेबए आएल छी। हमरा पिताजीक प्रतिज्ञाक अवश्य पालन करबाक अछि। मनस्विनी! अहाँ धैर्य धारण कएने रहब तथा सासु-श्वसुरक आदरपूर्वक सेवा करैत रहब; भरतहुकें अप्रसन्न नहि करबैन्हि, कारण, एहि राज्यक आब ओएह राजा भेलाह।"

श्रीरामक वचन सूनि प्रियवादिनी विदेहकुमारी सीताजी प्रेमसँ भरलि कनेक रोषक सङ्ग अपन शरण-स्थल पतिकें कहलथिन्ह—"नरश्रेष्ठ! हमरा की अहाँ एतेक ओछ बुझैत छी? अहाँ सन ई कथा नहि भेल! आर्यपुत्र! बाप, माए, भाइ, बेटा ओ पुतहु अपन-अपन कर्म ओ भाग्यक अनुसार फल भोगैत छथि, केवल पत्नी सएह पतिक भाग्यक अनुसरण करैत अछि। अतः अहाँक सङ्ग हमरहु वनवासक आज्ञा भेटि गेल। नारीक लेल पति मात्र शरणस्थल होइत छथि। रघुनन्दन! यदि अहाँ दुगम वन जाइत छी तँ हमहुँ मार्गक कुश-काँटकें पिचैत अहाँक आगाँ आगाँ-चलब। हमरासँ तँ कोनो अपराध नहि भेल अछि जे हमरा छोड़ि जाएब। अहाँक आगाँ तीनू लोकक ऐश्वर्य हमरा हेतु तुच्छ अछि। सङ्ग भए हम अहाँकें कोनो कष्ट नहि देब, सदैव अहाँक

सङ्ग रहब ओ प्रतिदिन फल-मूल खाइत पातिव्रत्यक निर्वाह करैत ब्रह्मचर्य्य पूर्वकअहाँक सङ्ग वनमे विचरण करब, हंस-कारण्डव प्रभृतिसँ युक्त नाना प्रकारक सरोवरक शोभा देखब। प्राणनाथ! हम अहाँक चरणमे अनुरक्त रहैत वन-पर्वत पर विचरण करैत परम आनन्दक अनुभव करब। हमर हृदयक सम्पूर्ण प्रेम एक मात्र अहींक चरण पर अर्पित अछि, अहाँक अतिरिक्त हमर मन कतहु नहि जाइत अछि। अहाँसँ वियोग भेल तँ निश्चये हम मरि जाएब। तेँ हमर याचना सफल करु ओ हमरा सङ्गहिँ लए चलू।"

सती साध्वी सीताक एहि प्रकारक प्रार्थना सूनि नरश्रेष्ठ श्रीराम वन चलबासँ निवृत्त करबाक हेतु हुनका वनक कष्टक विस्तृत वर्णन करैत कहलथिन्ह—"सीते! वनमे बाघ, सिंह प्रभृति पशु अगणित संख्यामे बौआइत रहैत छैक तथा बिच्छू, डाँस, मच्छर, सर्प प्रभृति सह-सह करैत रहैत छैक। वनवास करब बड़ कष्टदायक होइत छैक, कारण, ओतए भूमि पर सुतए पड़ैत छैक, स्वयं खसल फल मात्रक आहार करए पड़ैत छैक। वनमे रहि लोक यथाशक्ति उपवास करैत अछि, प्रतिदिन नियमपूर्वक स्नान करब आवश्यक होइत छैक, कुश-काँटसँ भरल भूमिअहिँ पर सुतए पड़ैत छैक। ओतए क्रोध ओ लोभकेँ परित्याग करए पड़ैत छैक। अतः सीते! अहाँ वन चलबाक विचार छोड़ि दिअ ओ हमर बात मानि एतहि रहि धर्मक पालन करैत रहू।',

श्रीरामक वचन सूनि सीताकेँ बड़ दुःख भेलैन्हि, हुनक मुह पर नोरक धार ढबरए लगलैन्हि। अतः ओ कनिएँ-कनिएँ रामकेँ कहए लगलथिन्ह—"प्राणनाथ! अहाँ वन-वासक जे जे कष्टक विषयमे कहलहुँ अछि, से से अहाँक स्नेह-कृपा पाबि सुखमे परिणत भए जाएत।श्रीराम! पति-व्रता स्त्री अपन पतिक वियोग भेलासँ जीवित नहि रहि सकैत अछि। तेँ जँ हमर प्राणक रक्षा करए चाही तँ हमरा सङ्गहि लेने चलू। हमरा नैहरमे एकटा ब्राह्मण हाथ देखि कहने रहथि जे हमरा अवश्य वनमे रहए पड़त। प्रियतम! ओहि ब्राह्मणक कथा अवश्य सत्य होएत। अतः हम अपन शरण-स्थल अहाँक सङ्ग निश्चय वनमे जाएब। अहाँ हमर स्वामी थिकहुँ, अहाँक पाछाँ पाछाँ वन गेलासँ हमर सब पाप दूर भए जाएत, कारण, स्वामी सएह स्त्रीक सबसँ पैघ देवता होइत छथि। स्वामी! हम अहाँक धर्मपत्नी छी, उत्तम व्रतक पालन करैत पतिव्रता छी। तखन कोन कारण अछि जे अहाँ हमरा अपना सङ्ग लए जाएब नहि गछैत छी? ककुत्स्थकुलभूषण! हम अहाँक भक्त छी, अहाँक वियोगक भयसँ दीन भए रहल छी तथा अहाँक सुख-दुःखमे समान रूपसँ हाथ बटाएब हमर धर्म थिक। हमरा सुख भेटत अथवा दुख, हम ताहि हेतु हर्ष अथवा शोकक वशीभूत नहि होएब। तेँ हमरा अपना सङ्ग अवश्य लए चलबाक कृपा करू।"

एहि प्रकारेँ सीता श्रीरामसँ वन लए चलबाक याचना करए

लगलीह, तथापि श्रीराम हुनका अपन संग चलबाक अनुमति नहि देलैन्हि तँ सीता अपन नेत्रसँ गरम गरम नोर बहबैत धरतीकेँ भिजबए लगलीह। पुनः श्री राम हुनका प्रियकथा कहि-कहि बुझओलथिन्ह, परन्तु विदेह-नन्दिनी सीता नहि मानल-थिन्ह। अत्यन्त डेराएलि सन ओ कहए लगलथिन्ह—"प्राणवल्लभ ! जेना फुलबाड़ीमे टहललासँ ओ पलंग पर सुतलासँ कोनो कष्ट नहि होइत छैक, तहिना अहाँक संग वनक मार्ग पर चललासँ हमरा किञ्चितो परिश्रम नहि होएत। प्रचण्ड बिहाड़िसँ ऊड़ि जे हमरा शरीर पर धूलि पड़त, से हम उत्तम चाननक समान बुझब; जखन वनमे रहब तखन अहाँक सङ्ग घासहि पर सूति लेब ओ ओहीमे हमरा परम सुख प्राप्त होएत। अहाँ अपन हाथेँ जे थोड़-बहुत फल-फूल अथवा पात आनिकेँ देब, सएह हमरा हेतु अमृत-रसक समान होएत। अहाँक संग जतए कतहु रहए पड़त, सएह हमरा हेतु स्वर्ग होएत ओ अहाँक बिना जे कोनहु स्थान होएत, से हमरा हेतु नरक थिक। श्रीराम! हमर ई निश्चय बूझि हमरा अपना संग प्रसन्नतापूर्वक वन लए चलू। नाथ! अहाँक विरहक शोक हम दुइओ घड़ी नहि सहि सकैत छी, तखन हमरा चौदह वर्ष धरि कोना सहल जाएत ? तँ यदि हमरा त्यागि अहाँ वन चल जाएब तँ एख-नहि हम प्राण त्यागि देब नीक बुझैत छी।"

एहि प्रकार करुण विलाप करैत शोकसँ संतप्त भेलि सीता

शिथिल भए अपन पतिकेँ जोरसँ पकड़ि आलिङ्गन कए कण्ठ छाड़ि कानए लगलीह। हुनकं दूहू नेत्रसँ स्फटिकक समान संताप-जनित अश्रु-जल झहरए लगलैन्हि, मानू दुइ गोट कमलसँ जलक टघार खसि रहल हो। सीताजी दुःखसँ अचेत भए रहल छलीह, तेँ तीनू लोकक शरण-स्थल श्री राम अपन पत्नीकेँ पकड़ि हृदयसँ लगबैत तथा सान्त्वना दैत कहल—"मिथिलेश-कुमारी! जखन अहाँ हमरा संग वनमे रहबाक हेतु उत्पन्न भेल छी तँ हम अहाँकेँ छोड़ि नहि सकैत छी। अहाँ हमर अनुगामिनी बनू ओ हमरा संग रहि धर्मक आचरण करू।"

वन-गमनक प्रसङ्ग पतिक अनुमति पाबि यशस्विनी ओ मनस्विनी सीताक हर्षक सीमा नहि रहल। ओ धर्मात्मा ब्राह्मण सबहुकेँ अपन समग्र धन ओ रत्नक दान कए वन चलबाक हेतु उद्यत भेलीह। एतबहिमे भ्रातृ-भक्त सुमित्रा-नन्दन लक्ष्मण सेहो ओतए उपस्थित भेलाह तथा श्रीरामक बारंबार मना कएलहुँ पर ओ हुनका संग वन जाएब सएह निश्चित कएल। अन्तमे श्री राम हुनकहु अपना सङ्ग वन चलबाक अनुमति दए देल।

भगवान् राम अपन पत्नी विदेहनन्दिनी सीता ओ भाइ सुमित्रानन्दन लक्ष्मणक संग वल्कल ओ चीर धारण कए तथा अपन पिता-माता एवं गुरु-जनसबहिक परिक्रमा कए घोर निर्जन वन दिसि विदा भेलाह। अनेक वन-पर्वतकेँ

पार करैत, अगणित सर-सरिताकें लँघैत, निर्झरक झर-झर कल-नाद सुनैत, विहगदलक चहकब सूनि विमुग्ध होइत तथा ऋषि-मुनिलोकनिक सत्संग ओ आशीर्वाद लैत मर्यादा-पुरुषोत्तम राम सुमित्रानन्दन लक्ष्मण ओ वैदेही जानकीक संग चित्रकूट पहुँचि ओतए पर्णशाला बनाए रहए लगलाह। सीता अपन पतिक शरणापन्न भेलि कुशल गृहिणी जकाँ हुनक सुख-दुःखमे हाथ बटबए लगलीह ओ अपन भक्ति तथा सेवा-बुद्धिसँ अपन सर्वस्व महात्मा श्री रामकेँ कखनहु कोनो असुविधा नहि होअए देल।

तावत चित्रकूटमे खर-दूषण प्रभृति राक्षसलोकनिक तापस-समूह पर अत्याचार बढ़ए लागल तँ श्रीरामक सान्त्वना देलहुँ पर ओ लोकनि चित्रकूट छोड़ि चल जाइत गेलाह। भरतक सेना-सहित आगमनसँ सेहो चित्रकूटकेँ मलिन देखि तथा अपन बन्धु-बान्धवक स्मृतिसँ मुक्त होएबाक हेतु श्रीराम सेहो चित्रकूटकेँ त्यागि देबाक विचार कएल। तखन वीर-शिरोमणि श्रीराम दण्डकारण्यमे प्रवेश कए अत्रि, अगस्त्य प्रभृति महामुनिक सत्संगक लाभ लैत अगस्त्यक विचारानुसार पञ्चवटी दिसि, जे गोदावरीक तट पर बसल छल तथा जाहिठाम फल-मूल प्रचुर मात्रामे उपलब्ध छलैक, विदा भेलाह। पञ्चवटीक रमणीय प्रदेशमे पहुँचि श्रीराम लक्ष्मणकेँ उचित समतल स्थानकेँ चूनि ओतए पर्णशाला बनएबाक आज्ञा देल। पर्णशाला बनि गेलाक पश्चात् सीता ओ

लक्ष्मणक सेवा प्राप्त करैत श्रीराम ओहि पञ्चवटी-प्रदेशमे ओहिना आनन्दपूर्वक रहए लगलाह जेना स्वर्गलोकमे देवता निवास करैत छथि।

किछु समय सुखपूर्वक बीतल। एक दिन श्रीराम, लक्ष्मण ओ सीता तीनू गोटा गोदावरीमे स्नान कए अपन पर्णशालामे बैसल छलाह। तखनहिं आतए दशमुख राक्षस रावणक बहिन शूर्पणखा आबि उपस्थित भेलि। परम सुकुमार, महान बलशाली, राजोचित लक्षणसँ युक्त नील कमलक समान श्याम-कान्तिसँ सुशोभित, कामदेवक समान सौन्दर्यशाली तथा इन्द्रक समान तेजस्वी श्रीरामकेँ देखितहिँ ओ राक्षसी कामसँ मोहित भए गेलि। ओ श्रीरामकेँ अपन परिचय दैत कहलक—"हम अनुराग ओ बलपराक्रमसँ सम्पन्न छी, अपन इच्छा तथा शक्तिसँ समस्त लोकमे विचरण कए सकैत छी। अतः अहाँ हमर पति बनि जाउ।" एतबा कहि ओ सीताक प्रसंग बाजलि—"ई सीता कुरूप, नीच, विकृत ओ धसल पेटसँ युक्त मानवी अछि। एकरा हम अहाँक भाइक सङ्ग खाए जाएब, तखन हम ओ अहाँ कामभावसँ युक्त भए पर्वत-शिखर ओ नानाप्रकार वनसबक शोभा देखैत विहार करब।"

शूर्पणखा कुरूप छलि—मुख भयानक, पेट पैघ, नेत्र भयप्रद ओ केश तामसन लाल। ओ निशाचरी क्रूर एवं हजारो वर्षक बूढ़ि लगैत छलि। अतः एहन राक्षसीकेँ सीताक रूपक निन्दा तथा प्रेम-निवेदन करैत देखि ककुत्स्थकुलभूषण श्रीराम

ज़ोर-जोरसँ हँसए लगलाह, फेर शूर्पणखाकेँ परिहास करैत कहलथिन्ह—"हम विवाहित छी ओ हमर पत्नी विद्यमान छथि। अहाँ सनि सुन्दरीकेँ सौतिन होएब बड़ दुःखद होइत छैक। हमर छोट भाइ लक्ष्मण अविवाहित छथि तथा बड़ सुन्दर, शीलवान ओ बल-पराक्रमसँ सेहो सम्पन्न छथि। तेँ विशाललोचने! जेना सूर्यक प्रभा मेरुपर्वतकेँ सेवन करैत अछि, तहिना अहाँ हमर छोट भाइ लक्ष्मणकेँ पतिक रूपमे, सौतिनक भयसँ रहित भए, सेवन करू।" श्रीरामक ई कहला पर ओ कामसँ मोहित भेलि राक्षसी हुनका छोड़ि लक्ष्मणकेँ पति बनबाक आग्रह करए लागलि। संभाषण-कलामे कुशल लक्ष्मण सूप सन नहि वाली ओहि राक्षसीकेँ कहलथिन्ह—"हम तँ श्रीरामक अधीन हुनक सेवक थिकहु, तेँ हमर पत्नी भए अहाँ दासी किएक बनए चाहैत छी? हमर भाइ सब ऐश्वर्यसँ सम्पन्न छथि, अतः हुनकर स्त्री बनि गेलासँ अहाँ प्रसन्न रहब। अहाँक रूप-रंग हुनकरे योग्य अछि।" तखन फेर ओ श्रीराम लग पहुँचलि ओ बाजलि—"राम! अहाँ एहि कुरूप, धसल पेटवाली ओ वृद्धा सीताक कारणहिँ हमर आदर नहि करैत छी, तेँ एकरा अहाँक देखैत खाए लैत छी।" ई कहि ओ अत्यन्त क्रोधित भए मृगनयनी सीता दिसि ओहिना झपटलि जेना कोनो भारी उल्का रोहिणी नामक तारा पर टूटि पड़ैत अछि।

महाबली श्रीराम काल-पाशसन सीता दिसि अबैत

ओहि राक्षसीकेँ अपन हुंकारसँ रोकल ओ कुपित भए लक्ष्मणसँ कहल—"सुमित्रानन्दन ! क्रूरकर्मी अनार्यसबहिसँ परिहासो करब अनुचित थिक। सौम्य ! देखू ने, कतेक कठिनतासँ सीता बाँचि सकलीह अछि ! पुरुषसिंह ! अहाँकेँ एहि कुरूपा कुलटाक कोनो अङ्ग-भङ्ग कए देबाक चाही।" श्रीरामक एहि प्रकारक आदेश पाबि कुपित भेल महाबली लक्ष्मण लगले अपन म्यानसँ तरुआरि खीचि लेल ओ शूर्पणखाक नाक-कान काटि लेल। नाक-कान कटितहिँ राक्षसी शूर्पणखा बड़ जोरसँ चिचिआ उठलि ओ जेमहरसँ आएल छलि, ओही वन दिसि भागि गेलि।

आततायी राक्षस समूहक संहारेक हेतु श्रीरामक अवतार एहि पृथिवी पर भेल छल। सीता स्वयं जगदम्बा छलीह, जनिक जन्मक उद्देश्ये छल घोर अत्याचारी पापी रावणक राक्षससमूहक सङ्ग वधक हेतु निमित्त बनब। से समय आब उपस्थित छल। शूर्पणखा नाक-कान कटबाए, रक्तसँ भोजलि, भय तथा मोहसँ अचेत आर्त्तनाद करैत राक्षस-समूहसँ घेरल भयङ्कर तेजस्वो भाइ खर लग गेलि तथा जेना आकाशसँ बिजुली खसैत अछि, तहिना ओतए पृथिवो पर खसि पड़लि एवं लक्ष्मण द्वारा अपन नाक-कान कटबाक वृत्तान्त कहि सुनओलक।

तत्पश्चात् शूर्पणखाक अपमानसँ उत्तेजित राक्षससबक आक्रमण दशरथनन्दन राम, लक्ष्मण ओ सीता पर प्रारम्भ

भेल । श्रीरामक अपन अक्षय बल, अद्भुत पराक्रम आ अपरिमित शौर्यक दृढ़तापूर्वक प्रदर्शन करैत जनस्थानक खर-दूषण-सहित चौदह सहस्र राक्षससैन्य-समूहकेँ अपन अग्निबाणक ज्वालामे जराकेँ भस्म कए देलैन्हि। कहुना अकम्पन नामक एकटा राक्षस मात्र अपन जान बचाए बड़ वेगेँ लङ्काकेँ विदा भेल ओ रावणसँ कहलक—"राजन्! जनस्थानमे जे अगणित राक्षस रहैत छल, से सब मारल गेल। खर सेहो मारल गेलाह। हम कहुना प्राण बचओने अपनेकेँ सूचना देबाक हेतु आबि सकलहुँ अछि।" अकम्पन द्वारा समाचार अवगत कए दशमुख राक्षस तामसेँ जरि गेल, लाल लाल आँखि कए बाजल—"ओ के थिक जे जनस्थानक विनाश कए मृत्युक मुखमे जाए चाहैत अछि? हम कालहुक काल छी, आगिओहुकेँ जराए सकैत छी ओ मृत्युकेँ सेहो मारि सकैत छी! हमर अपराध कए इन्द्र, जम, कुबेर ओ विष्णु सेहो शान्तिसँ नहि रहि सकैत छथि, तखन ओ दुस्साहसी के थिक जे जनस्थानकेँ नष्ट करबाक घोर अपराध कएलक अछि?" अकम्पन भयभीत भेल श्रीरामक शौर्यक वर्णन करैत हुनक परिचय राक्षसराजकेँ कहि सुनओलक। दशानन रावण उत्तेजित भए लक्ष्मण-सहित रामकेँ वध करबाक हेतु विदा भेलाह तँ अकम्पन हुनका कहलकैन्हि—"राजन्! श्रीरामक पराक्रम अद्भुत अछि, ओ अपन बाणसँ भरल नदीक प्रवाहकेँ

पलटि सकैत छथि, समुद्रमे डुबैत पृथिवीकेँ ऊपर उठाए सकैत छथि तथा महासागरक मर्यादाक भेदन कए समस्त लोककेँ ओकर जलसँ डुबाए सकैत छथि। दशग्रीव! जेना पापी पुरुष स्वर्ग पर अधिकार नहि पाबि सकैत अछि, तहिना अपने समस्त राक्षस मिलि युद्धमे श्रीरामकेँ नहि जीति सकैत छिऐन्हि। हुनक वधक एकटा उपाय हमरा सूझल अछि, से सुनल जाओ। श्रीरामक पत्नी सीता संसारक सर्वोत्तम सुन्दरी थिकीह, हुनक अङ्ग-प्रत्यङ्ग एहन सुन्दर छैन्हि जे सुन्दरतामे देवकन्या, गन्धर्वकन्या, अप्सरा अथवा नागकन्या हुनक समता नहि कए सकैत छथि। श्रीरामक ओ प्राणहुसँ बढ़िकेँ प्रिय छथिन्ह। तेँ कोनहु उपायसँ श्रीरामसँ छल कए यदि हुनकर अपहरण कए लिऐन्हि तँ सीताक वियोगमे ओ निश्चये प्राण दए देताह।"

अकम्पनक कुमन्त्रणा दुर्बुद्धि लंकेशकेँ बड़ पसिन्द भेलैन्हि, सीताक अपहरण करबाक विचार कए ओ गधासँ जोतल सूर्यतुल्य तेजस्वी रथ पर चढ़ि विदा भेलाह। किछु दूर जाए एक आश्रममे रावणकेँ मारीचसँ भेँट भेलैन्हि। दशानन रावण मायावी मारीचसँ राम द्वारा खरदूषणादिक वधक उल्लेख करैत बदला लेबाक हेतु सीताक अपहरण करबाक अपन निश्चयकेँ कहि सहायताक याचना कएल तँ मारीच ई कार्य नहि करबाक विचार दैत कहलथिन्ह—

"निशाचरपति! अहाँक एहन के शत्रु अछि जे सीताकेँ

हरि लेबाक विचार देलक अछि? रावण! राघवेन्द्र श्रीराम ओहन गन्धयुक्त गजराज छथि जकर गन्ध सुँघितहिँ गजरूपी योद्धा दूर भागि जाइत अछि। विशुद्ध कुलमे जन्मग्रहण करबे ओहि राघवरूपी गजराजक सूढ़ थिकैन्हि, प्रताप मद थिकैन्हि एवं सुगठित बाँहि हुनक दूनू दाँत थिकैन्हि। श्रीराम मनुष्यक रूपमे एक सिंह छथि; ओ सिंह चतुर राक्षस रूपी मृगक वध करएबला अछि, बाण रूपी अङ्गसँ परिपूर्ण अछि तथा तरुआरि ओकर बड़ चोख दाँत छैक। एहन सूतल सिंहकेँ जगाएब उचित नहि थिक। अतः लंकेश! हुनकासँ शत्रुता नहि ठानि सकुशल लंका घुरि जाउ ओ अपन स्त्रीक सङ्ग रमण करू; भगवान् श्रीराम सेहो वनमे अपन पत्नीक सङ्ग विहार करथु"

मारीचक एहि प्रकारेँ बुझओलासँ दशमुख रावण ओतएसँ लङ्का घुरि अपन महलमे चल गेल।

ओमहर शूर्पणखा एकसरे श्रीराम द्वारा चौदह हजार राक्षसकेँ संहार होइत देखि चकित भए गेलि। युद्धमे खर, दूषण ओ त्रिशिराक वध भेल देखि तँ ओ शोकक कारणेँ मेघ-गर्जनाक समान जोर-जोरसँ घोर चीत्कार करए लागलि। अत्यन्त उद्विग्न भए ओ लङ्का विदा भेलि तथा मन्त्रीसबहुसँ घेरल शत्रुहन्ता भाइ रावणकेँ लक्ष्मण द्वारा काटल गेल अपन नाक-कानकेँ देखाए अत्यन्त कुपित भए कहए लागलि— "राक्षसराज! अहाँ स्वेच्छाचारी ओ निरङ्कुश भए विषय-

भोगमे मत्त छी ओ अहाँ अपरिचित छी जे अहाँक हेतु घोर भय उत्पन्न भए गेल अछि। राक्षस ! अहाँक स्वभाव बालक जकाँ अछि, अहाँ नितान्त बुद्धिहीन छी। अहाँकेँ बुझबा योग्य विषयक ज्ञान नहि अछि। एहना दशामे अहाँ कोना राजा बनल रहि सकब ? हम बुझैत छी, अहाँ मूर्ख सबसँ सेवित छी, तेँ तँ अहाँ राज्यक भीतर गुप्तचर नियुक्त नहि कएल अछि। अहाँक स्वजन मारल गेलाह तथा जनस्थान उजड़ि गेल, मुदा अहाँकेँ तकर पता नहि अछि। एकसरे श्रीराम चौदह सहस्र सेनाकेँ यमलोक पठाए देलैन्हि, खर ओ दूषणक प्राण लए लेलैन्हि, ऋषि-मुनिकेँ अभयदान दए देलथिन्ह ओ अहाँकेँ से बुझल नहि अछि। रावण ! अहाँक बुद्धि दूषित भए गेल अछि। अतः अहाँक राज्य नष्ट भए जाएत आ अहाँ अपनहुँ स्वयं विपत्तिमे पड़ि जाएब।"

शूर्पणखा द्वारा वर्णित दोषसबहि पर विचार कए ओ निशाचर बहुत काल धरि चुपचाप चिन्तामे पड़ल रहल, पुनः अत्यन्त कुपित भए शूर्पणखासँ पुछलैन्हि—"राम के थिकाह ? हुनक बल केहन छैन्हि, रूप ओ पराक्रम केहन छैन्हि ? ओ कोना दुस्तर दण्डकारण्यमे प्रवेश कएल ? रामकेँ एहन कोन अस्त्र छैन्हि जे युद्धमे खर-दूषणकेँ संहार कए सकलाह ? मनोहर अङ्गवाली शूर्पणखे ! हमरा ठीक-ठीक कहू, के अहाँकेँ नाक-कान काटि कुरूप बनाए देलक ?" राक्षसराज रावणक एहि प्रकारक पुछलासँ राक्षसी क्रोधेँ अचेत भए कहए

लागलि—"भाइ ! श्रीरामचन्द्र राजा दशरथक पुत्र छथि; हुनक बाँहि दीर्घ, आँखि पैघ-पैघ ओ रूप-रंग कामदेवक समान छैन्हि। ओ चीर ओ कारी मृगचर्म धारण कएने छथि। महाबली राम युद्धस्थलमे कखन धनुष खीचैत छलाह,कखन भयङ्कर बाण हाथमे लैत छलाह ओ ओकरा कखन छोड़ैत छलाह, ई हम नहि देखैत छलहुँ, खाली राक्षस-सेनाकेँ मरैतटा देखैत छलहुँ। आत्मज्ञानी महात्मा श्रीराम अपन स्त्री-वधक भयसँ एकमात्र हमरहिटा अपमानित कए छोड़ि देलैन्हि। गुण ओ पराक्रममे हुनकहि सन लक्ष्मण नामक भाइ सेहो सङ्ग छथिन्ह जे हुनक प्रेमी ओ भक्त छथि। ओ श्रीरामक दहिना हाथ जकाँ छथि। श्रीरामक धर्मपत्नी सेहो हुनकर सङ्ग छथिन्ह! हुनक आँखि विशाल तथा मुख चन्द्रमाक समान मनोहर छैन्हि। हुनक केश, नाक ओ जाँघक वर्णन नहि हो। हुनक तन-कान्ति तप्त-सुवर्ण जकाँ छैन्हि। ओ विदेहराज जनकक कन्या थिकीह, हुनक नाम सीता थिकैन्हि। सीता जकर भार्या होथि तथा ओ हर्षपूर्वक जकर आलिङ्गन करथि, से निश्चये समस्त लोकमे इन्द्रहुसँ बढ़ि भाग्यशाली थिक। महाबाहु! विस्तृत जघन ओ सुपुष्ट कुचसँ युक्त ओहि सुमुखी स्त्रीकेँ देखि जखन अहाँक भार्या बनएबाक हेतु आनए लगलहुँ तँ क्रूर लक्ष्मण हमर नाक-कान काटि कुरूप बनाए देल। राक्षसराज रावण! यदि अहाँ सीताकेँ अपन भार्या बनाए अलौकिक काम-सुख भोगए

चाहैत छी तँ ओहि सर्वाङ्ग-सुन्दरी सीताकेँ हरि कए लए आनू। श्रीराम हमर नाक-कान कटबाए लेल तथा खर-दूषणकेँ सेहो वध कएल, तेँ हुनकासँ बदला लेब सेहो कर्त्तव्ये थिक।"

लंकेश रावण शूर्पणखाक कथा सूनि पहिने मन्त्री सबहिक संग विचार कएल। अन्ततः सीताकेँ अपहरण करबाक निश्चय कए लेल। जखन ई निश्चय पूर्ण रूपेँ जमि गेलैन्हि तखन इच्छानुसार चलएबला सुवर्णमय रथ पर ओ आसीन भए आकाश-मार्गसँ चलल। आकाशमे ओ निशाचर-पति विद्युन्मण्डलसँ आवृत तथा वक-पंक्तिसँ सुशोभित मेघ जकाँ शोभा पाबि रहल छलाह। समुद्रक तटवर्ती प्रान्तक शोभाकेँ देखैत राक्षसपति रावण अपन द्रुतगामी रथसँ शीघ्र समुद्रक दोसर तट पर पहुँचि गेलाह जतए रमणीय वनमे पवित्र ओ एकान्त स्थल पर एकटा आश्रम देखल। एतहि शरीरमे कारी मृगचर्म धारण कएने नियमित आहार करैत मारीच नामक राक्षस निवास करैत छल। रावण ओतए जाए मारीचसँ भेट कएल। मारीच विधिपूर्वक रावणक आतिथ्य-सत्कार कए ओतए फेर अएबाक कारण पूछल तँ रावण पहिनें रामक द्वारा जनस्थानमे राक्षससमूहक संहारक वृतान्त कहि सुनाओल, पश्चात् शूर्पणखाक नाक-कान काटल जएबाक कथा कहैत मारीचकेँ कहल—"जे विना कोनो वैर-विरोधक केवल अपन बलक आश्रय लए हमर बहिनक नाक-कान

काटि लेलक अछि, कुरूप कए देलक अछि, ताहि पापीसँ बदला लेबाक हेतु हम ओकर देवकन्या सन सुन्दरी पत्नी सीताकेँ जनस्थानसँ बलपूर्वक हरि आनब। अहाँ पैघ-पैघ मायाक प्रयोगमे विशेष कुशल छी, तेँ एहि कार्यमे हमर सहायता करू। अहाँ सुवर्ण-मृगक रूप धारण कए रजत-मय बिन्दुसँ युक्त चितकाबर बनि जाउ ओ रामक आश्रममे सीताक सम्मुख विचरण करू। अहाँक विचित्र मृगक रूप देखि सीता अवश्य अपन पति रामसं तथा लक्ष्मणसँ अहाँकेँ पकड़बाक हेतु कहथिन्ह। जखन दुहू गोटा अहाँकेँ पकड़बाक हेतु ओतएसँ दूर चल जएताह तँ हम बिना कोनहुँ विघ्न-बाधाक सीताकेँ ओहिना हरण कए लए जाएब जेना राहु चन्द्रमाक प्रकाशकेँ अपहरण कए लैत अछि। सीताक अपहरण भेला पर जखन राम अत्यन्त दुःखी ओ दुर्बल भए जएताह, तखन हम हुनका ऊपर कृतार्थ-चित्त भए प्रहार करब।"

रावणक मुखसँ श्रीरामक चर्चा सूनि महात्मा मारीचक शोणित सूखि गेल, ओ भयसँ काँपए लागल। ओ अपलक विस्फारित नेत्रेँ देखैत अपन सूखल ठोढ़केँ चाटए लागल। ओकरा श्रीरामक पराक्रमक ज्ञान छलैक, अतः अत्यधिक भयभीत ओ दुःखी भए गेल छल। एहनहि अवस्थामे ओ हाथ जोड़ि दशानन रावणकेँ हितकर वचन कहए लागल—

"राजन्! सदैव प्रिय बजनिहार व्यक्ति सर्वत्र सुलभ छथि,

दुर्लभ छथि हितकर अप्रिय बजनिहार ओ तकरा सुननिहार ! अपने गुप्तचर तँ रखैत नहि छी, तेँ तँ अपनेकेँ श्रीरामचन्द्रजीक बल-पराक्रमक ज्ञान नहि अछि। जनकनन्दिनी सीता अपनेक जीवनक अन्त करबहिक निमित्त तँ ने उत्पन्न भेलि छथि ? कदाचित् एहन नहि हो जे सीताक कारणेँ अपनेक ऊपर पैघ सङ्कट उपस्थित हो। जे राजा अपने सन दुराचारी, स्वेच्छाचारी, पापपूर्ण विचार ओ नीच बुद्धिसँ युक्त होइत छथि, से अपन कुकर्मसँ अपन स्वजन तथा सम्पूर्ण राष्ट्रक विनाश कए दैत छथि। तात ! श्रीराम क्रूर नहि छथि, मूर्ख अजितेन्द्रिय नहि छथि; ओ धर्मक मूर्त्तिमान स्वरूप छथि, साधु ओ सत्य-पराक्रमी छथि। जेना इन्द्र देवतासबहि अधिपति छथि, तहिना राम सम्पूर्ण जगतक राजा छथि। हुनक पत्नी विदेहराजकुमारी सीता पातिव्रत्य-तेजसँ सुरक्षित छथि। जेना सूर्यक प्रभा हुनकासँ अलग नहि कएल जाए सकैछ, तहिना सीताकेँ श्रीरामसँ अलग करब असम्भव अछि। तइओ की अपने बलपूर्वक हुनक अपहरण करए चाहैत छी ? श्रीराम प्रज्वलित अग्निक समान छथि। हुनक बाण ओहि अग्निक ज्वाला थिक, धनुष ओ खड्ग जारनिक कार्य करैत अछि। की तइओ अपने हुनकासँ युद्ध कए ओहि अग्निमे प्रवेश करए चाहैत छी ? मिथिलेशकुमारी सीता ओजस्वी श्रीरामक प्रिय पत्नी थिकीह जे प्रज्वलित आगिक धाह जकाँ असह्य छथि, तेँ हुनका सङ्ग बलात्कार नहि कएल जाए सकैत

अछि। राक्षसराज! एहि व्यर्थ उद्योगसँ किछु लाभ नहि होएत। जाहि दिन युद्धमे अपने पर श्रीरामक दृष्टि पड़त तहिए अपनेक जीवनक अन्त भए जाएत। अतः यदि अपने जीवनक, सुखक ओ परम दुर्लभ राज्यक चिर काल धरि भोग करए चाहैत छी तँ श्रीरामक अपराध नहि करू।" तत्पश्चात् महात्मा मारीच श्रीरामक अलौकिक पराक्रमक व्यक्तिगत अनुभवक वर्णन करैत दुर्मति रावणकेँ कएक तरहेँ बुझा-ओल, परन्तु तकर उत्तरमे रावण ओकरा कठोर ओ अनु-चित वचन कहल—"नीच मारीच! अहाँ जे हमरा विषयमे अनुचित ओ असङ्गत कथा कहल अछि, से ऊसर भूमिमे रोपल बीजक समान निष्फल अछि। हम श्रीरामक प्राण-हुसँ अधिक प्रिय भार्या सीताकेँ अहाँक सम्मुख अवश्य हरण करब। हमर एहि निर्णयकेँ तीनू लोकमे केओ बदलि नहि सकैछ। हम अहाँसँ गुण-दोषक विषयमे विचार नहि पुछल अछि। हम राजा छी, अतः हमर सम्मान ओ पूजन अहाँक कर्तव्य अछि, हमर आज्ञाक पालन करब सेहो अहाँक कर्तव्य अछि। जखन अहाँ मायामय काञ्चन-मृग बनि रामक आश्रममे जाएब तँ सीताक आग्रहसँ राम अहाँकेँ पकड़बाक चेष्टा करताह। अहाँ हुनका दूर लए जाएब ओ हुनकर स्वरक अनुकरण करैत 'हा सीते! हा लक्ष्मण!' कहि शोर करब। जखन लक्ष्मण श्रीरामकेँ तकबाक हेतु आश्रमसँ दूर चल जएताह तँ हम सीताकेँ ओहिना हरण कए लए

जाएब जेना इन्द्र शचीकेँ हरणे छलाह। एहि कार्यक हेतु अहाँ विदा होउ, हम रथ पर चढ़ि अहाँक पाछाँ-पाछाँ अबैत छी। मारीच! यदि अहाँ अस्वीकार करब तँ एखनहि अहाँकेँ मारि देब। हमर ई कार्य अहाँकेँ अवश्य करए पड़त। हम बलक प्रयोगहुसँ अहाँसँ ई कार्य अवश्यं कराएब। राजाक प्रतिकूल चललासँ लोक कहिओ सुखी नहि होइत अछि।"

रावण जखन राजा जकाँ मारीचकेँ आज्ञा देल तँ मारीच कठोर वाणीमे बाजल—"निशाचर! आइ हमरा ई बात स्पष्ट भए गेल जे अहाँक कोनो दुर्बल शत्रु अहाँकेँ बलवानसँ भिड़ा कए नष्ट करए चाहैत अछि। ओ पापी के थिक जे अहाँकेँ पुत्र, राज्य ओ मन्त्री-सहित विनाशक मार्ग पर चलबाक विचार देलक अछि? अहाँक मन्त्री सब केहन छथि जे एहि कुकर्ममे अहाँक समर्थन कए रहलाह अछि? हम आबहु कहैत छी जे एहन कार्य नहि करू। यदि नहि मानब तँ श्रीराम हमरा मारि अहूँक वध कए देताह। यदि दूहू तरहेँ हमर मृत्यु निश्चिते अछि, तखन श्रीरामक हाथसँ मारल जाएब सएह हमरा हेतु उत्तम अछि। राजन! ई निश्चित बुझू जे श्रीरामक सम्मुख पहुँचि हम मारल जाएब ओ यदि अपने सीताक हरण करब तँ अपनहुँकेँ अहाँ अपन बन्धु-बान्धवक संग मरले बुझू।" एतबा कहि ओ अनिच्छा-पूर्वक रावणक कार्य करबाक हेतु विदा भेल तथा दशानन रावणक कथनानुसार स्वर्ण-मृगक रूप धारण कए श्रीरामक आश्रममे विचरण करए लागल।

विदेह-नन्दिनी सीता नीक-नीक फूलकें बीछि-बीछि तोड़बामे लागलि छलीह। ओ फूलकें तोड़ैत-तोड़ैत कनैल, अशोक ओ आमक गाछकें नङ्घैत कदली-वनक कुञ्जमे पहुँचलीह। तखनहिँ हुनक दृष्टि रजतमय विन्दुसँ युक्त विचित्र स्वर्ण-मृग पर पड़लैन्हि। ओहि मृगक पृष्ठभाग कमलक केसरि जकाँ स्वर्णिम रंगक होएबाक कारणेँ बड़ सुन्दर लगैत छल, ओकर अङ्ग-अङ्ग मुक्तामणिसँ चित्रित बूझि पड़ैत छलैक। ओकर दाँत ओ ठोढ़ बड़ सुन्दर छलैक तथा शरीरक रोइआँ चानी ओ ताम आदि धातुसँ बनल लगैत छलैक। ओहि मृग पर दृष्टि पड़ितहिँ सीताजीक आँखि आश्चर्यसँ पसरि गैलैन्हि, ओ ओकरा दिसि निहारए लगलीह। ओ मायामय मृग सेहो श्रीरामक प्राणवल्लभ सीताकें देखैत छल तथा ओहि वनकें प्रकाशित करैत ओतहि विचरण करैत छल।

सीता ओहन मृगकें पहिने कहिओ नहि देखने छलीह। अतः विस्मयसँ भरलि शुद्ध सुवर्णक समान कान्तिसँ सब तरहेँ निर्दोष अङ्गक कारणेँ सुन्दरताक अद्वितीय मूर्त्ति सीता फूल तोड़ैत तोड़ैत बड़ प्रसन्न भेलीह तथा अपन पति श्रीराम तथा देओर लक्ष्मणकें अस्त्र-शस्त्रक सङ्ग ओतए बजबैत शोर करए लगलथिन्ह—आर्यपुत्र! अपन भाइक सङ्ग आउ, जल्दीसँ आउ।"

विदेहकुमारी सीताकें शोर कए बजबैत सूनि नरश्रेष्ठ

श्रीराम श्रो लक्ष्मण ओतए गेलाह ओ ओतए पहुँचितहिँ हुनकालोकनिक दृष्टि मायामय स्वर्ण-मृगपर पड़लैन्हि। ओकरा देखि लक्ष्मणके सन्देह भेलैन्हि, ओ बजलाह— "भाइजी! हमरा जनितेँ एहि मृगक रूपमे मारीच नामक राक्षस अएह थिक, कारण, स्वेच्छानुसार रूप धारण करबामे ओएह बड़ कुशल अछि। पृथिवीनाथ! एहि पृथिवी पर कतहु एहन मृग नहि पाओल जाइत अछि, तेँ निश्चय ई मायाक मृग थिक।"

मारीचक छलसँ जनिक विचारशक्ति मारल गेल छलैन्हि, से पवित्र मुदितवदना सीता लक्ष्मणक बात काटि स्वयं बड़ हर्षक सङ्ग बजलीह—" आर्यपुत्र। ई मृग बड़ सुन्दर अछि। ई हमर मनकेँ हरि लेलक अछि। महाबाहु! एकरा लए आनू। यदि ई मृग जीविति पकड़ल जाए सकए तँ एक गोट आश्चर्यक वस्तु होएत। जखन हमरालोकनिक वनवासक अवधि पूरि जाएत ओ अहाँ फेरसँ राज्य प्राप्त कए लेब, तखन ई मृग हमर अन्तपुरक शोभा बढ़ाओत। यदि कदाचित् ई जीवित पकड़ल नहि जाए सकला तँ एकर चाम बड़ सुन्दर होएत। घासक पटिया पर एहि मृगक स्वर्णमय चामकेँ बिछाए अहाँक सङ्ग हम बैसए चाहैत छी। यद्यपि स्वेच्छासँ प्रेरित भए एहन काजमे अपन पतिकेँ लगाएब भयङ्कर स्वेच्छाचार थिक ओ से साध्वी स्त्रीक हेतु उचित नहि मानल गेल अछि, तथापि एहि जन्तुक शरीर एतेक विस्मय

उत्पन्न कए देलक अछि जे हम अहाँकेँ एकरा पकड़ि अनबाक हेतु अनुरोध करैत छी।"

ओहि मृगक अद्भुत स्वर्ण-मणिमय रूपकेँ देखि श्रीरामचन्द्रजी सेहो विस्मित भए गेल छलाह। सीताक वचन सूनि ओ मृगक अद्भुत रूपकेँ देखि, ओहि रूप पर मोहित भए तथा सीता द्वारा प्रेरित भेला पर श्रीराम लक्ष्मणकेँ कहलथिन्ह—"लक्ष्मण! देखु तँ, विदेहनन्दिनी सीताक मनमे एहि मृगक हेतु कतेक प्रबल इच्छा जाग्रत भए गेल अछि? वास्तवमे एकर रूपो तेहने अछि ओ एही रूपक कारणेँ ई आइ जीवित नहि बँचि सकत।" तत्पश्चात् भगवान् श्रीराम ओहि मृगक सुन्दरताक वर्णन करैत लक्ष्मणकेँ पुनः कहलथिन्ह—"लक्ष्मण! अहाँ जेना हमरा कहलहुँ अछि यदि ई राक्षसक माया थिक तँ तइओ एकर वध करब हमरा उचित अछि, कारण, ई मृगयाक समय प्रकट भए अनेक महाधनुर्धर नरेशक वध कएल अछि। सुमित्राकुमार लक्ष्मण! देखू, एहि मृगक चामकेँ हस्तगत करबाक हेतु विदेहनन्दनीकेँ कतेक उत्कण्ठा भए रहल छैन्हि। अतः हम एहि मृगकेँ अनबाक हेतु तुरन्त जाए रहल छी। अहाँ आश्रमहिमे रहि सीताक रक्षा करैत रहब जाबत धरि एहि चितकबरा मृगकेँ मारि एकर चाम लए हम घुरि नहि आबी। सीताकेँ अपन संरक्षणमे रखने राक्षस सबहिसँ निरन्तर सावधान रहब।"

लक्ष्मणकेँ एहि प्रकारक आदेश दए महातेजस्वी श्रीराम धनुष-बाण हाथमे लए तथा तरुआरि डाँरमे बान्हि मायामय स्वर्ण-मृगकेँ पकड़बाक अथवा वध करबाक हेतु विदा भेलाह। जनकनन्दिनी वैदेही सीता अपन सर्वस्व श्रीरामकेँ जाइत देखैत रहलीह एवं हुनक अपलक नेत्र बहुत काल धरि तीनू लोकक शरणस्थल हुनक दूहू परम तेजस्वी चरण पर केन्द्रित रहल, जकरहि शरणापन्न भए ओ करुना पति-वियोगक असीम दुःख-वारिधिकेँ पार करैत अपन सतीत्वक रक्षा कए सकलीह।

सती सीता लक्ष्मणक सङ्ग बड़ उत्सुकतासँ अपन एक मात्र शरण-स्थल तथा सर्वस्व नरेश्वर श्रीरामचन्द्रजीक घुरबाक बाट तकैत छलीह, तखनहिँ 'हा सीते, हा लक्ष्मण'क करुण आर्त्तनाद सीता ओ लक्ष्मणकेँ कर्णगोचर भेलैन्हि। ओ आर्त्त-नाद श्रीरामक स्वरसँ मिलैत-जुलैत छल, तेँ अत्यन्त विह्वल भए सीताजी लक्ष्मणसँ बजलीह—"ओ बड़ आर्त्तस्वरसँ हमरासबकेँ बजाए रहल छथि। हम हुनके बाजब सुनलहुँ अछि, तेँ हमर मन विचलित भए गेल अछि। ओ सहायता चाहैत छथि, तेँ जल्दीसँ दौड़ू, हुनक सहायता करिऔन्ह, विलम्ब नहि करू।" मुदा श्रीरामक आदेशक विचार कए लक्ष्मण हुनका छोड़ि नहि गेलाह। लक्ष्मणक एहि व्यवहार पर सीता क्षुब्ध भए गेलीह तथा बजलीह—"सुमित्राकुमार!

अहाँ हुनक भाइ छिऐन्हि अथवा शत्रु जे एहनँहु अवस्थामे अहाँ हुनक सहायता करए नहि जाइत छिऐन्हि ? बूझि पड़ैत अछि जे हमरा हेतु अहाँक मनमे लोभ भए गेल अछि। अहाँकेँ अपन भाइ हेतु कनिओं स्नेह नहि अछि !"

विदेहकुमारी सीताक दशा अपन शरण-स्थल भगवान श्रीरामक अनिष्टक आशङ्कासँ भयभीत हरिणीक समान भए गेल छलैन्हि, अतः शोकमग्न भए अश्रु बहबैत एहन कठोर कथा कहलथिन्ह तँ लक्ष्मण हुनका बुझबैत बजलाह—"विदेह-नन्दिनी ! अहाँ विश्वास राखू, अहाँक पतिकेँ तीनू लोकमे केओ परास्त नहि कए सकैछ। श्रीराम युद्धमे अवध्य छथि, तेँ अहाँकेँ एहन कथा नहि बजबाक चाही। श्रीरामचन्द्रजीक अनुपस्थितिमे एहि वनक भीतर अहाँकेँ एकसरे नहि छोड़ि सकैत छी। अहाँक पति ओहि मृगकेँ मारि शीघ्र घुरि अओताह। जे शब्द अहाँ सुनलहुँ अछि, से निश्चय हुनक बाजल नहि छैन्हि। ई तँ कोनहु राक्षसक गन्धर्वनगरक समान मिथ्या माया थिक। विदेहनन्दिनी ! महात्मा श्रीराम अहाँक रक्षाक भार हमरा दए गेल छथि ओ खरक वधक कारणेँ राक्षस समुदाय वैर ठानि लेलक अछि। तेँ अहाँकेँ छोड़ि हम नहि जाएब।"

लक्ष्मणक वचन सूनि सीताकेँ बड़ क्रोध भेलैन्हि, आँखि लाल भए गेलैन्हि। ओ सत्यवादी लक्ष्मणकेँ पुनः कठोर कथा कहए लगलथिन्ह—"आर्य ! निर्दयी ! क्रूर ! कुलाङ्गार !

हम अहाँकें खूब बुझलहुँ। श्रीराम विपत्तिमे पड़ि जाथि, सएह अहाँकें प्रिय अछि। अहाँक मनोरथ सिद्ध नहि होएत। नीलकमलक समान श्यामसुन्दर कमलनयन श्रीरामकें पति-रूपमे पाबि हम कोनो दोसर पुरुषक कामना कोना कए सकैत छी? सुमित्राकुमार! हम अहींक सम्मुख निस्सन्देह प्राण त्यागि देब, मुदा श्रीरामक बिना एकहु क्षण एहि भूतल पर जीवित नहि रहि सकब।" सीताक एहि प्रकारक कठोर कथा सूनि जितेन्द्रिय लक्ष्मणक रोइआँ ठाढ़ भए गेलैन्हि, ओ हाथ जोड़ि अपन भाउजकें कहलैन्हि—"देवि! हम अहाँक कथाक उत्तर नहि दए सकैत छी, कारण, हमरा हेतु अहाँ आराधनीया देवीक समान थिकहुँ। मिथिलेशकुमारी! अनुचित ओ प्रतिकूल कथा बाजब स्त्रीक स्वभाव थिक, स्त्री विनय आदि धर्मसँ रहित, चञ्चल, कठोर ओ घरमे विभेद उत्पन्न कएनिहारि होइत अछि। विदेहकुमारी जानकी! अहाँ जे हमरा कहलहुँ, से हमरा ओहिना लागल जेना लोहाकें पघिला कए हमर कानमे ढारि देने होइ। एहन बात हमरा असह्य अछि। एहि वनक प्राणी साक्षी रहथु, हमर न्याय-युक्त बात कहला पर अहाँ एहन कठोर गप्प कहल अछि। अहाँक बुद्धि भ्रष्ट भए गेल अछि, अहाँ विपत्तिमे पड़ए चाहैत छी। धिक्कार अहाँकें जे हमरा पर सन्देह करैत छी। हम अपन जेठ भाइक आज्ञाक पालन करबाक हेतु दृढ़तापूर्वक तत्पर छी तँ अहाँ साधारण स्त्री जकाँ हमरा पर

सन्देह करैत छी। बेश, आब हम ओतहि जाइत छी जतए भाइजी गेलाह अछि। विशाल-लोचने! वनक देवता-लोकनि अहाँक रक्षा करथु, अहाँक कल्याण हो। भयङ्कर अपशकुन भए रहल अछि। नहि जानि श्री रामक सङ्ग जखन हम घुरब तँ फेर अहाँकेँ देखि सकब अथवा नहि!''

लक्ष्मणक वचन सूनि जनककिशोरी सीता कानए लगलीह, हुनक नेत्रसँ नोरक तीव्र धारा बहि चलल। विशाललोचना सीताकेँ आर्त्त भेलि देखि सुमित्राकुमार लक्ष्मण हुनका सान्त्वना देल, मुदा सीता अपन देओरसँ किछु नहि बज-लीह। तखन ओ अपन मनकेँ वशमे रखने दूहू हाथ जोड़ि तथा विनम्र भेल हुनक प्रणाम कएल एवं बारंबार हुनका दिसि देखैत अपन जेठ भाइ लग चलबाक हेतु विदा भेलाह। मुदा चलबासँ पूर्व ओ सीताक चारूकात अपन धनुषसँ रेखा खीचि ओहि रेखासँ बहार नहि होएबाक हेतु कहि तखन गेलाह।

लक्ष्मणक चल गेलाक पश्चात् रावणक इच्छानुसार अवसर प्राप्त भए गेलैक। ओ प्रवञ्चक लंकेश दशानन रावण संन्यासीक भेष धारण कए श्रीरामचन्द्रजीक आश्रममे पहुँचि गेल एवं विदेहकुमारीसँ भिक्षाक याचना कएल। ओहि समय सीता अपन पतिक हेतु शोक ओ चिन्तामे डूबलि छलीह। तखनहिँ ओ अपना सम्मुख शरीर पर स्वच्छ गेरुआ वस्त्र धारण कएने, माथ पर पैघ टीक रखने, हाथमे

छाता ओ पाएर मे खड़ाम पहिरने तथा कान्ह पर डंडा राखि ओहिमे कमण्डल लटकओने संन्यासीक रूपमे निशाचरपति रावणके ठाढ़ देखलैन्हि। रावण सेहो ठाढ़ भेल रामपत्नी सीताके, जनिक दन्तावली ओ अधरोष्ठ बड़ सुन्दर ओ मुख एहन जे पूर्ण चन्द्रमहुक शोभाकें मातु करैत हो, निहारए लागल तथा कामदेवक बाणसँ आहत भए वेदमन्त्रक उच्चारण करए लागल।

पर्णशालामे बैसलि जनकनन्दिनी सीता जखन द्वार पर आएल संन्यासीके देखलैन्हि, तँ ओ उचित आतिथ्य-सत्कार करब निश्चय कएल, मुदा लक्ष्मणक आदेशके स्मरण करैत ओहि रेखाके पार नहि कएल ओ ओतहि महात्मा-वेष-धारी प्रवञ्चक रावणके ब्राह्मण-योग्य सत्कारक हेतु आमन्त्रित कएल। पापी दशाननकें ओ रेखा पार कए मैथिलीक निकट जाएब असम्भव छलैक। तें ओ छल करैत बाजल—"भद्रे! हम सन्यासी छी, बान्हल भीख नहि लैत छी, तें अपनहि आबि भिक्षा दए जाइ।" एहि प्रकारें कहलासँ सीता भवितव्यसँ प्रेरित भए ओहि रेखाके पार कए भीख देबाक हेतु आगाँ बढ़लीह। संसारक पालन, पापसमूहक दलन एवं देवतालोकनिक कार्य-सम्पादन कएनिहारि परम शक्ति-स्वरूपा सीता वञ्चक संन्यासीक छलकें नहि बूझि सकलीह। तखन भीख दैत सीताकें अन्यायी राक्षसराज रावण अपन संन्यासीक छद्मवेष त्यागि दश मुख तथा बीस भुजासँ युक्त

विशाल ओ भयानक रूप धारण कए बाम हाथ सबसँ केश-सहित मस्तकके पकड़ि लेलक एवं दहिना हाथसबहुकेँ हुनक दूहु जाँघक नीचाँ दए हुनका उठा लेलक तथा हुनका लेने अपन विशाल सुवर्णमय माया-निर्मित रथ पर चढ़ि गेल। अतिशय हताश ओ भयभीत भेलि सीता माया-मृगकेँ पकड़बाक हेतु गेल अपन पति श्रीराम ओ अपन देओर लक्ष्मणक हेतु चारू कात तकलैन्हि, मुदा दूर दूर धरि हरिअर हरिअर वनटा दृष्टिगोचर भेलैन्हि, श्रीराम ओ लक्ष्मणक कतहु पता नहि छल। तावत रथ आकाश-मार्ग पकड़ि लंका दिसि बढ़ए लागल।

रावण द्वारा पकड़लि गेलि सीता दुःखसँ व्याकुल भए गेलीह ओ श्रीरामचन्द्रजीकेँ 'हे राम हे राम!' कहि कहि बारंबार आर्त्त-भावेँ शोर करए लगलीह। सीताक मनमे रावणक हेतु कामना नहि छलैन्हि, ओ ओकरासँ सर्वथा विरक्त छलीह तथा अपनाकेँ छोड़एबाक हेतु चोटाएल नागिन जकाँ छट-पटाए रहल छलीह! राक्षसराज जखन सीताकेँ अपहरण कए आकाशमार्गसँ लए भागल तँ हुनक चित्त भ्रमित भए गेलैन्हि, बताहि जकाँ भए गेलीह तथा दुःखसँ आतुर भेलि जोर जोरसँ विलाप करए लगलीह—"महाबाहु लक्ष्मण! अहाँ गुरुजन सबहिक मनकेँ सदैव प्रसन्न करबामे सचेष्ट रहैत छी। एखन मायावी राक्षस हमरा अपहरण कए लेने जाए रहल अछि, मुदा अहाँकेँ तकर पता नहि अछि। शत्रुसन्तापक

आर्यपुत्र ! अहाँ तँ कुमार्गगामी उद्दण्ड पुरुषकेँ दण्ड दए ओकरा सुपथ पर अनैत छी, फेर एहि पापी रावणकेँ दण्ड किएक ने दैत छिऐक ? रावण ! तोहर माथपर काल नाचि रहल छौक, ओएह तोहर विचार-शक्ति नष्ट कए देलकौक अछि, तेँ तँ तोँ एहन पापकर्म करैत छेँ ! तोरा श्रीरामसँ एहन सङ्कट प्राप्त हौक जे तोहर प्राण लए लौक। हम जन-स्थानमे फुलाएल कनैलक गाछ सबसँ, हंस ओ सारससभक कलरवसँ मुखरित गोदावरी नदीसँ, वनक गाछ सबहु पर निवास करैत देवतासँ, पशु-पक्षी आदि नाना प्रकार प्राणीसँ हाथ जोड़ि प्रार्थना करैत छी जे हमर स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकेँ कहबैन्हि जे अहाँक प्राणहुसँ अधिक प्रिय सीताकेँ असहाय अवस्थामे रावण हरिकेँ लए गेल। महाबाहु श्रीराम बड़ बल-वान छथि, ओ हमरा यमराज द्वारा अपहृत भेलहु पर परा-क्रमपूर्वक घुराए अनताह।"

जटायु तखन सूतल छलाह। सीताक करुण आर्त्त-नाद सूनि हुनक आँखि खुजि गेलैन्हि तँ देखलैन्हि जे जगज्जननी सीताकेँ निशाचर रावण हरण कए लेने जा रहल छैन्हि। ओ रावणकेँ हितकर नीति-वचन कहि कहि बुझएबाक चेष्टा कएल, विदेहकुमारी सीताकेँ छोड़ि देबाक प्रार्थना कएल। मुदा पापी दशानन, जकर शिर पर मृत्यु अपन जाल पसारि देने छलैक, नहि मानलक, प्रत्युत क्रोधसँ आँखि लाल कए जटायुकेँ मारबाक हेतु दौड़ल। दूनूमे भयङ्कर युद्ध भेल

ओ अन्तमे रावण जटायुक दूनू पाँखिकेँ तरुआरिसँ काटि देलक।

रावण द्वारा गृध्रराज जटायुकेँ आहत देखि चन्द्रमुखी सीता धराशायी जटायुकेँ पकड़ि अत्यन्त दुःखित भए पुनः विलाप करए लगलीह—"हा राम! हम केहन अभागलि छी; कृपा कए जे हमर रक्षा करबाक हेतु आएल छलाह, से पक्षिवर जटायु एहि निशाचर द्वारा आहत भए पृथिवी पर पड़ल छथि। हे राम! हे लक्ष्मण! आब अहीँ दूहू गोटा हमर रक्षा करू।" एना बाजि अत्यन्त भयभीत सीता जोरसँ क्रन्दन करए लगलीह, जाहिसँ निकटवर्ती देवता ओ मनुष्य हुनक कानब सूनि सकथि।

विदेहनन्दिनी सीताक पुष्पहार ओ आभूषण मोचड़ा गेलाक कारणे छिन्न-भिन्न भए गेल छलैन्हि, ओ अनाथ जकाँ विलाप कए रहल छलीह। ओही अवस्थामे निष्ठुर पापी राक्षसराज हुनका फेर पकड़बाक हेतु लपकल। सीता पैघ-पैघ गाछकेँ लपेटल लता जकाँ पकड़ि बारंबार बाजथि—"हमरा एहि संकटसँ रक्षा करू, रक्षा करू।" ताबत रावण हुनका लग पहुँचि रामसँ रहित राम-राम करैत ओहि सीताक केशकेँ पकड़ि लेलक ओ अपन विनाशक मार्गकेँ प्रशस्त करए लागल। जगदम्बा सीताक एहि प्रकारक अपमान देखि वायुक गति रुद्ध ओ सूर्यक प्रभा मलिन भए गेल। पितामह ब्रह्माजी दिव्य दृष्टिसँ राक्षसक द्वारा जगदम्बा जानकीक

केशाकर्षणरूप अपमान देखि बजलाह—"बस, आब कार्य सिद्ध भेल!"

सीता 'हा राम! हा राम' कहि-कहि कानि रहल छलीह, लक्ष्मणके शोर कए रहल छलीह। ओही अवस्थामे निशाचरपति हुनका लए अकाश-मार्गसँ विदा भेल। तप्त स्वर्ण-आभूषणसँ हुनक समग्र अङ्ग विभूषित छल। ओ पीअर रङ्गक रेशमी नूआ पहिरने छलीह। अतः सीता सुदाम-पर्वतसँ प्रकट भेल विद्युतक समान प्रकाशित भए रहल छलीह। आकाशमे उड़ैत हुनक सुवर्ण-सदृश कान्तिमान् रेशमी पीताम्बर सन्ध्याकालमे सूर्यक किरणसँ रङ्गल ताम्र-वर्णक मेघखण्डक समान शोभित भए रहल छल। मिथिलेशकुमारी सीताक अङ्ग सुवर्णक समान दीप्तिमान् ओ राक्षस-राज रावणक शरीर कारी छल। ओकर अंकमे ओ बूझि पड़ैत छलीह जेना हाथीकेँ सोनाक करधनी पहिरा देल गेल हो। विदेहनन्दिनीक रत्नजटित नूपुर हुनक एकटा चरणसँ ससरि विद्युन्मालाक समान पृथिवी पर खसि पड़लैन्हि। रोष ओ रोदनक कारणेँ सीताक आँखि लाल भए गेल छलैन्हि। अपहृत होइत ओ राक्षसराजके धिक्कारए लगलीह—"दुष्टात्मा! तोँ बड़ नीच, डरपोक ओ कुकर्मी छेँ जे हमरा स्वामी-रहित असहाय बूझि चोराकेँ अपहरण कएने जाइत छेँ, तोँ हमरा श्रीराम-लक्ष्मणक संग युद्धमे जीतिकेँ नहि लेने जाइत छेँ! तोँ अपनाकेँ बड़ शूर-वीर मानैत छेँ,

मुदा संसारक सभ वीर पुरुष तोहर एहि कर्मकें घृणित आ क्रूरतापूर्ण सएह कहथुन्ह । तोहर शौर्य ओ बलकें धिक्कार छौक! तों बड़ वेगसँ आगल जा रहलेँह अछि, दू घड़ी तँ थम्ह, फेर एतएसँ जीवित नहि घुरि सकबें। निशाचर! हम देखैत छी, तोहरा गरामे कालक फँसरी पड़ि चुकलौक अछि, तें तँ अपन कल्याण ओ हितक विचार नहि कए एहि कुकर्म-जनित भयक स्थान पर निर्भय बनल छें। रावण! अवश्य तों सुवर्णमय वृक्षकें देखि रहल छें, शोणितक स्रोत प्रवाहित कएनिहार भयङ्कर वैतरणी नदीक दर्शन कए रहल छें, भयानक असिपत्र-वनकें सेहो देखए चाहैत छें तथा जाहिमे तपाओल सुवर्णक समान फूल तथा वैदूर्यमणिक समान पात अछि, ताहि तीक्ष्ण शाल्मलिकाक आब तों शीघ्र दर्शन करबें। निर्दयी निशाचर! तों महात्मा श्रीरामक एहन महान् अपराध कए विषपान कएने मनुष्यक भाँति अधिक काल धरि जीवन धारण नहि कए सकबें। रावण! तों अटल काल-पाशमे बान्हल भए गेलेँह अछि।" एहि प्रकारक कठोर वचन सुनबैत विदेह-राजकुमारी सीता भय ओ शोकसँ व्याकुल भेलि थर-थर काँपि रहल छलीह।

ताबत रावणक मायामय स्वर्णनिर्मित रथ आकाशमार्गे होइत एकटा पर्वतकें पार करए लागल तँ विदेहनन्दिनी सीताक दृष्टि ओकर शिखर पर पड़ल जाहि पर पाँच गोट

श्रेष्ठ वानर बैसल छल। सर्वाङ्ग-सुन्दरी विशाल-लोचना भामिनी सीता ई विचारि जे कदाचित् ओ सब श्रीरामकें किछु समाचार कहि सकए, अपन स्वर्ण-वर्णक रेशमी ओढ़नी उतारि, ओहिमे आभूषण राखि ओतए खसाए देलि। दुर्मति निशाचरराज रावणक चित्त चिन्तित ओ चञ्चल छलैक, तें ओ सीताक एहि कार्यकें नहि बूझि सकल। अनेकानेक वन, नदी, पर्वत ओ सरोवरकें पार करैत वरुणा-लय समुद्रकें लाँघि छटपटाइत सीता रूपी साकार मृत्युकें अपन अङ्कमे लपेटने लंकेश दशानन अपन लंकापुरीमे प्रवेश कएल। जनिक नेत्रप्रान्तमे काजर लागल छलैन्हि, से सीता शोक ओ मोहमे डूबलि छलीह। रावण हुनका अन्तः पुरमे राखि देलक जेना मायासुर अपन मूर्तिमयी आसुरी मायाकें सएह ओतए स्थापित कए देने हो। तदुत्तर ओ भयङ्कर निशाचरीसबकें हुनक रक्षाक हेतु नियुक्त कए अपन राज्य-कार्यक हेतु विदा भेल।

छल-बलक आश्रय लए अपहरणक द्वारा श्रीरामक पत्नी जानकीकें पाबि भ्रष्टबुद्धि रावण बड़ प्रसन्न भेल, मोहवश कृत-कृत्य भए आनन्द मनबए लागल। विदेहकुमारी सीताक रूप-माधुरीक स्मरण कए काम-बाणसँ अत्यन्त पीड़ित भेल पुनः ओ आतुरताक सङ्ग अन्तःपुरमे प्रवेश कएल। सीता राक्षसी-सबहुक बीच दुःखमे डूबलि छलीह, हुनक मुख पर नोरक धार टघरि रहल छलैन्हि। ओ शोकक दुस्सह भारसँ

पीड़ित एवं दीन भेलि वायु-वेगसँ आक्रान्त समुद्रमे डुबैत नाओ जकाँ बूझि पड़ैत छलीह, मृग-यूथसँ बिछुड़ि कुकूरसँ घेरलि हरिणीक समान लगैत छलीह! एहन दीना एवं विवशा सीताकेँ निशाचर रावण बलपूर्वक अपन देवगृहक समान सुन्दर भवनक दर्शन करबए लागल। अपन देवगृहक समान सुन्दर भवन देखाए पापात्मा रावण जगदम्बा जानकीकेँ अपन भार्या बनबाक आग्रह करैत बाजल–"मिथिलेशकुमारी! अहाँ आब हमरा सङ्ग एतए रहि विभिन्न प्रकारक पुष्पहार, दिव्य गन्ध ओ श्रेष्ठ आभूषण आदिक सेवन करू, हमरा अपना योग्य पति बनाए हमरा सङ्ग रमण करू। सीते! आब अहाँ रामक दर्शनक विचार छोड़ि दिअ। राज्य-भ्रष्ट दीन तपस्वी राममे एतेक शक्ति नहि छैन्हि जे एहिठाम धरि पहुँचिओ सकथि। तेँ अपन शोकक परित्याग कए हमर बात मानि लिअ ओ अपन कमलक समान सुन्दर, निर्मल ओ मनोहर मुखकेँ शोकसँ पीड़ित नहि करू।"

लङ्केश रावणक कठोर कथा सूनि विदेह-राजकुमारी सीता खढ़क अढ़ कए निर्भय स्वरमे उत्तर देल—"दशरथ-नन्दन श्रीरामक जन्म इक्ष्वाकुकुलमे भेल छैन्हि, ओ बड़ बल-शाली छथि, हुनक तेज बड़ महान छैन्हि। ओ अपन भाइ लक्ष्मणक सङ्ग एतए आबि निश्चय तोहर विनाश कए देथुन्ह। यदि तोँ बलपूर्वक हुनकर सम्मुख हमर अपहरण करितेँ तँ तोहूँ जनस्थानक युद्धस्थलमे अपन भाइ खर जकाँ मारल

लइतें। रावण! तों असुर अथवा देवता सबहुसँ अवध्य भए सकैत छें, मुदा भगवान् श्रीरामक सङ्ग महान शत्रुता कए तों कोनहुँ तरहें जीवित नहि बँचि सकैत छें। तों बूझि ले जे तोहर प्राण आब गेलौ, तोहर राजलक्ष्मी नष्ट भए गेलौ, तोहर बल ओ इन्द्रियक सेहो नाश भेलौं तथा तोहर पापक कारणें ई लङ्का शीघ्र विधवा भए जेतौ। हम धर्मपरायण दृढ़प्रतिज्ञ श्रीरामक धर्मपत्नी छी, दृढ़तापूर्वक पातिव्रत्यधर्मक पालन करैत छी ओ तों राक्षसाधम महापापी छें। अतः तों हमर स्पर्श नहि कए सकैत छें। जे सदैव कमलक समूहमे राजहंसक सङ्ग क्रीड़ा करैत अछि, से हंसी सेवारमे रहनिहार जलकाक दिसि कोनाकें दृष्टिपात कए सकैत अछि? हम एहि भूतल पर एहन कोनहु कार्य नहि कए सकैत छी जे निन्दनीय ओ कलङ्कनीय हो।" एतबा कहि अत्यधिक तामसक कारणें विदेहकुमारी जानकी किछु नहि बजलीह।

सीताक एहन कठोर एवं रोइआँकें ठाढ़ करएबला वचनकें सूनि रावण हुनका भयभीत करैत बाजल—"मिथिलेशकुमारी! हमर बात सुनि लिअ। हम अहाँकें बारह मासक समय दैत। एतबा समयमे यदि अहाँ स्वेच्छासँ हमरा लग नहि चल आएब तँ हमर भनसीआ भिनुसरका पनिपिआइ करबाक हेतु अहाँक शरीरकें टुकड़ी-टुकड़ी काटि देत।" सीताकें एतबा कहि कुपित भेल रावण विकराल राक्षसी सबहिकें कहलक—"निशाचरी! अहाँ सब मिथिलेशकुमारी सीताकें अशोकवाटिकामे लए जइऔन्ह ओ ओतए

चारूकातसँ घेरने हिनक रक्षा करैत रहिऔन्ह। ओतए भयङ्कर गर्जन-तर्जन कए पहिने हिनका डेराएब, पुनः मीठ-मीठ वचनसँ बुझबैत-सुझबैत जङ्गली हाथी जकाँ वशमे करबाक चेष्टा करब।"

रावणक एहि प्रकारक आदेश पाबि निशाचरी सब मैथिलीकेँ लए अशोक-वाटिका दिसि चललि। ओ वाटिका समस्त कामनाकेँ फलरूपमे प्रदान कएनिहार कल्पवृक्ष तथा भाँति-भाँतिक अन्यान्य फल-फूलक गाछ सबसँ भरल छल तथा जतए सदैव मदमत्त भेल पक्षी निवास करैत छल। मुदा ओतए पहुँचि मिथिलेशकुमारी जानकी जालमे फँसलि मृगी जकाँ भयभीत भेलि रहए लगलीह। भय ओ शोकसँ पीड़ित ओ प्रियतम पति ओ देओरक स्मरण करैत अचेतवत् भेलि, खीन-दुर्बलि भेलि ओतए रहए लगलीह ओ एक-एक क्षणकेँ पहाड़ जकाँ काटए लगलीह। सान्त्वना दैत छलैन्हि हुनका शरण-वत्सल श्रीरामक ओ दूहू चरण जकर अन्तिम दर्शन ओ तखन कएने छलीह जखन मायामृगकेँ पकड़बाक हेतु ओ जाइत छलाह, ओएह दूनू चरणक स्मृति-आलोक हुनक अवसादक अन्हारकेँ मेटबैत छल ओ ओही चरणक शरणापन्न भए सती सीता निशाचरीगणक माया-जालक बीच अपन सतीत्वक रक्षा करबामे समर्थ भए समग्र राक्षस समुदायक सङ्ग रावणक वधक पश्चात् अपन पतिकेँ प्राप्त कए सकलीह।



४

सुग्रीव-शरणापन्न

४

जनकनन्दिनी सीताकें दशग्रीव लंकेश रावण हरण कए लए गेल। श्रीराम ओ लक्ष्मण हुनक अन्वेषण करैत वन-वन बौआए लगलाह, परन्तु कतहु पता नहि चलैत छलैन्हि। वनमे विचरण करैत-करैत हुनका पक्षिराज जटायुसँ भेँट भेलैन्हि जे रावण द्वारा आहत भेल अपन मृत्युक बाट तकैत छलाह। श्रीरामकें देखि पक्षिराज जटायु बड़ कष्टसँ बजलाह—"रघुनन्दन! दुरात्मा राक्षसराज रावण विपुल मायाक आश्रय लए बिहाड़ि-पानिक सृष्टि कए सीताक हरण कए लेलक। जखन ओकरासँ लड़ैत-लड़ैत हम थाकि गेलहुँ तँ ओ हमर दूनू पाँखि काटि देलक तथा विदेहनन्दिनी सीताकें लए दक्षिण दिसि चल गेल।" एतबा कहि जटायु मरि गेलाह तँ श्रीराम हुनक दाह-संस्कार प्रभृति अन्तिम-क्रिया कए लक्ष्मणक सङ्ग सीताकें तकबाक हेतु आगाँ बढ़लाह।

जाइत-जाइत दूहू भाइ श्रीराम ओ लक्ष्मण क्रौञ्चारण्य पार कए मतङ्ग मुनिक आश्रमक समीप पहुँचि गेलाह। ओतए विकराल-काय राक्षसीसँ भेँट भेलैन्हि जकर नाम छलैक अयोमुखी। अयोमुखी राक्षसीक प्रणय-प्रस्ताव सूनि शत्रुसूदन लक्ष्मण ओकर नाक-कान काटि लेलैन्हि। विकलाङ्ग

भए ओ जेमहरसँ आएल छलि तेमहरे भागि गेलि। दूहू भाइ फेर आगाँ बढ़लाह, सीताक खोज करए लगलाह। तखनहिँ ज़ोर-ज़ोरसँ बिहाड़ि बहवैत ओ भयानक शब्द करैत कबन्ध नामक राक्षस श्रीराम ओ लक्ष्मणक सम्मुखमे आबि ठाढ़ भए गेल, रास्ता छेकि लेलक। ओ महाबाहु राक्षस अपन विशाल भुजा पसारि दूहू रघुवंशी राजकुमारकेँ पकड़ि लेलक ओ अपन भयंकर मुह बाबि खएबाक हेतु उद्योग करए लागल। मुदा दूहू भाइ श्रीराम ओ लक्ष्मण ओकर दूहू बाँहिकेँ काटि देलैन्हि। बाँहि कटितहिँ ओहि राक्षसकेँ पूर्वक कथा स्मरण भए गेलैक। ओ दैत्य छल, ओकर भयङ्कर शरीर पहिने सूर्य, चन्द्रमा ओ इन्द्रक शरीर जकाँ तेजस्वी छलैक। मुदा ओ भयङ्कर राक्षसक रूप धारण कए वनवासी ऋषि-मुनिकेँ भयभीत करैत रहैत छल। एक दिन स्थूलशिरा नामक महर्षिकेँ डेरबए लागल तँ ओ कुपित भए शाप दए देल जे ओ ताबत धरि ओहने विकट रूप धारण कएने रहत, जाबत धरि श्रीराम ओ लक्ष्मण आबि ओकर दूहू बाँहिकेँ काटि नहि खसओताह तथा ओहि निर्जन वनमे ओकर शरीरक दाह-संस्कार नहि करताह। ई सब कथा कबन्ध भगवान् श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ कहि सुनओलक। ई सब कथा अवगत कए श्रीराम ओकरासँ सीताक पता पुछलथिन्ह, मुदा ओ कहलक—"प्रभो! जाबत धरि हमर शरीरक दाह नहि होएत, ताबत धरि हमरा ई कहबाक शक्ति नहि आओत जे ओ

पराक्रमी राक्षस के छल जे सीताक अपहरण कए लए गेल तथा वैदेहीकेँ फेरसँ प्राप्त करबाक हेतु कोन उपायक अवलम्बन कर्तव्य थिक।" कबन्धक वचन सूनि श्रीराम ओ लक्ष्मण ओकर विशाल शरीरकेँ जरैत चितामे दए देलैन्हि। ओहि शरीरक जरितहिँ कबन्ध निर्मल वस्त्रसँ विभूषित भए दिव्य रूपमे प्रकट भेल तथा श्रीरामसँ सीताकेँ फेरसँ प्राप्त करबाक उपायक विषयमे अपन युक्तिसङ्गत विचार कहए लागल—"दशरथनन्दन राम! अहाँ ओहन व्यक्तिकेँ अपन मित्र ओ सहायक बनाउ जे अहीँ सन दुर्दशाग्रस्त होथि। इएह समाश्रयक नीति पर चललासँ अहाँकेँ सफलता भेटि सकैत अछि। सुग्रीव एहने व्यक्ति छथि जे जातिक वानर छथि ओ जे अपन जेठ भाइ वालिक द्वारा घरसँ भगाए देल गेल छथि। ओ मनस्वी वीर सुग्रीव चारि गोट वानरक सङ्ग सम्प्रति ऋष्यमूक नामक पर्वत पर रहैत छथि जे पम्पासुर धरि पसरल अछि। ओ सीताकेँ तकबामे अहाँक मित्र ओ सहायक बनताह। अतः वीर रघुनाथ! अहाँ एतएसँ शीघ्र महाबली सुग्रीवक ओतए जाउ ओ प्रज्वलित अग्निकेँ साक्षी बनाए मैत्री स्थापित कए लिअ! ओ इच्छानुसार रूप धारण कए सकैत छथि, पराक्रमी ओ कृतज्ञ छथि तथा स्वयं अपनहु हेतु एकटा प्रबल सहायक ताकि रहल छथि। अहाँ दूहू भाइ हुनक कार्य करबामे सर्वथा समर्थ छी। शत्रुसूदन रघुनन्दन! कपिश्रेष्ठ सुग्रीव संसारमे नरमांसभक्षी

राक्षसक जे जे स्थान छैक, से सबकेँ नीक जकाँ जनैत छथि; यदि कदाचित् कोनहु स्थानकेँ नहिओ जनैत छथि, तथापि ओ वानरलोकनिक सहायतासँ नद-नदीकेँ पार कए, पैघ-पैघ पहाड़ पर जा कए तथा दुर्गम कन्दरामे प्रवेश कए अहाँक पत्नीक अवश्य पता लगाए देताह। तेँ अहाँ ओतए जाए हुनकासँ शीघ्र मित्रता कए लिअ।" ई कहि कबन्ध ऋष्यमूक ओ पम्पासरोवर जएबाक मार्गकेँ विस्तारपूर्वक कहि सुनओलकैन्हि।

कबन्ध द्वारा वर्णित मार्गक अनुसरण करैत श्रीराम ओ लक्ष्मण शीघ्र पम्पा सरोवरक तट पर पहुँचि गेलाह, जतएसँ थोड़बहि दूर पर सूर्यपुत्र सुग्रीवक निवासस्थल छल। अरविन्द ओ उत्पलसँ पूर्ण ओहि मनोरम पम्पा सरोवरमे पैसि दूहू भाइ स्नान कएल, तत्पश्चात् ऋष्यमूक पर्वत दिसि विदा भेलाह।

ऋष्यमूक पर्वतक समीप विचरण करैत बलवान वानरराज सुग्रीव पम्पाक निकट भ्रमण कए रहल छलाह। तखनहिँ ओ अद्भुत दर्शनीय श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ ऋष्यमूक पर्वत दिसि अबैत देखि चिन्तित भए उठलाह। भयक भारी भार पड़बाक कारणेँ हुनक उत्साह नष्ट भए गेलैन्हि। ओ उद्विग्न-चित्त भेल चारू कात ताकए लगलाह।

सुग्रीव बड़ धर्मात्मा छलाह, हुनका राजधर्मक गम्भीर

ज्ञान छलैन्हि। अतः ओ अपन मन्त्रीसबहिक संग विचार कए अपन दुर्बलता ओ शत्रुपक्षक प्रबलताक निश्चय कएल, तदुत्तर ओ समस्त वानरक संग परम चिन्तित भए उठलाह। वानरराज सुग्रीव उद्वेगसँ विचलित हृदय भए श्रीराम ओ लक्ष्मण दिसि देखैत अपन मन्त्री सबकेँ कहलथिन्ह— "निश्चय ई दूनू वीर वालिक पठाओल आबि रहल छथि, छल करबाक हेतु वल्कल ओ चीर धारण कए लेने छथि, जाहिसँ हमरालोकनि चीन्हि नहि सकिऐन्हि।" ओम्हर सुग्रीवक सहायक दोसर-दोसर वानर महाधनुर्धर श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ देखि ओहि पर्वतसँ भागि-भागि दोसर सुरक्षित पर्वत-शिखर पर पहुँचि गेल तथा यूथपति वानर सब शीघ्रता-पूर्वक आबि यूथपतिसबहिक नेता वानरशिरोमणि सुग्रीवकेँ चारू कातसँ घेरि ठाढ़ भए गेल। एहि प्रकारेँ सुग्रीवक सब सचिव पर्वतराज ऋष्यमूक पर आबि एकाग्रचित्त भए हुनक सम्मुख आदेशक प्रतीक्षा करए लगलाह। तदुत्तर वालिसँ अपकारक अशङ्का करैत सुग्रीवकेँ भयभीत देखि सम्भाषण-कलामे कुशल श्री हनुमानजी बजलाह—"अहाँ सब केओ वालिक भयक आशङ्का नहि करू। ई मलय नामक श्रेष्ठ पर्वत थिक, एतए वालिक कोनो भय नहि अछि। वानर-प्रवर! भयक कारणेँ अहाँक चित्त चञ्चल भए गेल अछि। अतः अहाँ उचित रूपेँ विचार नहि कए रहल छी। बुद्धि ओ विज्ञानसँ सम्पन्न भए अहाँ दोसराक चेष्टा द्वारा ओकर

मनोभाव बुझबाक यत्न करू; कारण, जे राजा बुद्धि-बलक आश्रय नहि लैत छथि, से निश्चय प्रजा पर शासन नहि कए सकैत छथि।"

हनुमानजीक श्रेष्ठ युक्तिसंगत वचन सूनि सुग्रीव बजलाह—"एहि दूहू वीरक भुजा दीर्घ ओ नेत्र पैघ-पैघ छैन्हि। ओ दूहू गोटा धनुष-बाण धारण कएने देवकुमार जकाँ लगैत छथि। हिनका देखि ककर मनमे भयक सञ्चार नहि होएत? हमरा सन्देह अछि जे ई दूनू श्रेष्ठ पुरुष वालिक द्वारा पठाओल छथि। राजा सबकेँ कतेक मित्र होइत छैन्हि, तेँ हिनका पर सहजहिँ विश्वास कए लेब उचित नहि। वालि वञ्चना द्वारा एहि प्रकारक कार्यकेँ सिद्ध करबामे बड़ कुशल छथि। अतः कपिश्रेष्ठ! अहाँ साधारण पुरुषक रूप धारण कए जाउ ओ हुनक चेष्टा, रूप ओ गप्प करबाक भावक अध्ययन कए हुनक यथार्थ परिचय प्राप्त करू। हुनक मनोभावकेँ नीक जकाँ लक्ष्य करब, यदि ओ प्रसन्न-चित्त बूझि पड़थि तँ हुनका लग बारंबार हमर प्रशंसा करब, हमर अभिप्राय चेष्टा द्वारा सूचित कए हुनकामे विश्वास उत्पन्न करबाक यत्न करब। वानर-शिरोमणि! अहाँ हमरहि दिसि मुह कए ठाढ़ भए ओहि दूहू धनुर्धर वीरसँ एहि वनमे प्रवेश करबाक कारण पुछबैन्हि। यदि ओलोकनि शुद्ध हृदयक बूझि पड़थि तँ हुनकासँ चतुरतापूर्वक पता लगाएब जे ओ कोनो दुर्भावना लए तँ एतए नहि अबैत छथि।"

वानरराज सुग्रीवक आदेश पाबि पवनकुमार हनुमानजी अत्यन्त बलशाली श्रीराम ओ लक्ष्मण जतए छलाह, ताहि दिसि तखनहिँ विदा भए गेलाह।

हनुमान जी ऋष्यमूक पर्वतसँ ओहि दिसि कुदैत-छरपैत विदा भेलाह जतए दूहू रघुवंशी-बन्धु विराजमान छलाह। पवन-कुमार वानरवीर हनुमानजी ई सोचि जे हुनका लोकनिकेँ हुनक कपिरूप पर विश्वास नहि होएतैन्हि, अपन वानररूपकेँ त्यागि सामान्य तपस्वीक रूप धारण कए लेल। तदुत्तर हनुमानजी विनीत भावेँ दूहू रघुवंशी वीर लग जाए प्रणाम कए अत्यन्त प्रिय ओ मधुर वाणीमे वार्तालाप आरम्भ कए देल। ओ आदरपूर्वक दूहू भाइकेँ कहए लगलथिन्ह—"वीर ! अहाँ दूहू गोटा सत्यपराक्रमी, राजर्षि, देवताक समान प्रभावशाली, तपस्वी ओ कठोर व्रतक पालन करएबला बूझि पड़ैत छी। अहाँ-लोकनिक शरीरक कान्ति बड़ सुन्दर अछि। अहाँ दूहू गोटा एहि वन्य प्रदेशमे किएक आएल छी ? अहाँक अङ्गक कान्ति सुवर्णक समान प्रकाशित अछि, जाहि पर चीर वस्त्र बड़ शोभा पाबि रहल अछि। अहाँ स्वभावहिसँ धैर्यशाली बूझि पड़ैत छी। कहू, अहाँ के थिकहुँ ? अहाँ दूहू गोटा कान्तिवान ओ रूपवान छी, अहाँ लोकनिक नेत्र कमलदलक शोभा पाबि रहल अछि, अहाँ दूहू गोटा मस्तक पर जटा धारण कएने छी ओ दूहूक आकृति समान अछि। की अहाँलोकनि देवलोकसँ एतए आएल छी ? मानू

चन्द्रमा ओ सूर्य स्वेच्छासँ भूतल पर उपस्थित होथि, तेहने अहाँ दूहू गोटा प्रतीत होइत छी। अहाँक वक्षस्थल विशाल ओ स्कन्ध सिंहक समान लगैत अछि, अहाँक भुजा दीर्घ, सुन्दर, गोल-गोल ओ परिघ जकाँ सुदृढ़ अछि। अहाँ तँ समुद्र ओ वनसँ युक्त तथा विन्ध्य ओ मेरु-पर्वत प्रभृतिसँ विभूषित समग्र पृथिवीक रक्षा करबामे समर्थ छी। अहाँ दूनू गोटाक धनुष जेहन विचित्र, चिक्कन ओ अद्भुत तथा इन्द्रक वज्रक समान प्रकाशित भए रहल अछि, तेहने अहाँ-लोकनिक तूणीरमे सूर्यक समान भयङ्कर ओ प्रकाशवान वाण सेहो भरल अछि। अहाँ दूहूक खड्ग सेहो बड़ पैघ ओ विस्तृत अछि। हे वीर-युगल! अहाँलोकनि अपन परिचय किएक ने कहैत छी? एतए सुग्रीव नामक एक श्रेष्ठ वानर रहैत छथि, ओ बड़ धर्मात्मा तथा वीर छथि। हुनक भाइ वालि हुनका घरसँ बैलाए देलथिन्ह अछि। अतः ओ अत्यन्त दुःखी भेल समग्र संसारमे बौआए रहलाह अछि। ओएह वानरशिरोमणिक पठाओल हम एतए आएल छी। हमर नाम हनुमान थिक, हमहुँ वानर-जातिक थिकहुँ। धर्मात्मा सुग्रीव अहाँ दूहू वीरसँ मित्रता चाहैत छथि। हम हुनक मन्त्री छी। हम वायु देवताक वानरजातीय पुत्र थिकहुँ। हम इच्छानुसार कोनहु ठाम जाए सकैत छी ओ इच्छानुसार रूप धारण कए सकैत छी। एहि समय सुग्रीवक प्रिय करबाक इच्छासँ तपस्वीक रूप धारण कए एतए उपस्थित

भेल छी।" एतबा कहि पवनकुमार हनुमान चुप भए गेलाह।

पवनकुमार हनुमानजीक वचन सूनि श्रीरामक मुख प्रसन्नतासँ प्रफुल्लित भए उठलैन्हि। ओ एक कात ठाढ़ लक्ष्मणसँ कहलैन्हि—"सुमित्रानन्दन लक्ष्मण! शत्रुदमन सुग्रीवक सचिव कपिवर हनुमानजीसँ, जे विषय बुझबामे मर्मज्ञ छथि, अहाँ स्नेहपूर्ण मधुर वाणीमे गप्प करू। जकरा ऋग्वेदक शिक्षा नहि भेटलैक अछि, जे यजुर्वेदक अभ्यास नहि कएने अछि तथा जे सामवेदक विद्वान नहि अछि, से एतेक सुन्दर भाषामे गप्प नहि कए सकैत अछि। निश्चये ई व्याकरणक स्वाध्याय कएने छथि, कारण, एतेक बाजि गेलाह, मुदा एकहुटा शब्द अशुद्ध नहि बजलाह। सम्भाषणक समय हिनक मुख, नेत्र, ललाट, भओँह प्रभृति अङ्गमे कोनहु प्रकारक दोष प्रकट नहि भेलैन्हि। ई कनिएँमे बड़ स्पष्टताक सङ्ग अपन गूढ़ अभिप्राय प्रकट कए देल, सेहो सदैव मध्यम स्वरमे। निष्पाप लक्ष्मण! जाहि राजाकेँ हिनका समान दूत नहि रहैत छैन्हि, तनिक कार्य सिद्ध होएब कठिन होइत छैन्हि।" श्रीरामक ई कहला पर सम्भाषण-कलामे पटु सुमित्रानन्दन लक्ष्मण विषयक मर्म बुझनिहार सुग्रीवक सचिव कपिवर हनुमानजीसँ कहलैन्हि—"विद्वन! महामना सुग्रीवक गुण हमरा बुझल अछि। हम दूहू भाइ हुनकहिसँ भेँट करबाक हेतु एतए आएल छी। अहाँ सुग्रीवक कथनानुसार मैत्रीक जे गप्प कए

रहल छी, से हमरा स्वीकार अछि। अहाँक कहलासँ हम-
सब हुनकासँ मैत्री क सकैत छी।"

लक्ष्मणक स्वीकृतिसूचक निपुणतायुक्त वचन सूनि कपि-
वर हनुमान बड़ प्रसन्न भेलाह। ओ सुग्रीवक विजयक इच्छासँ
रघुवंशी दूहू भाइक सङ्ग मित्रता कए लेब निश्चय कएल।
ओ मन-हि-मन प्रसन्न भेल विचार करए लगलाह—"आब
निश्चय महामना सुग्रीवक प्रयोजन सिद्ध भेलन्हि, हुनका
निश्चय आब राज्य प्राप्त होएतैन्हि।" तत्पश्चात् वानरश्रेष्ठ
हनुमानजी अत्यन्त हर्षित भेल श्रीरामचन्द्रजीसँ पुछलथिन्ह—
"नाना प्रकारक हिंसक जन्तुसँ भरल अत्यन्त भयङ्कर ओ
दुर्गम पम्पातटवर्त्ती काननमे अपने अपन छोट भाइक सङ्ग
किएक आएल छी?" हनुमानजीक वचनसूनि श्रीरामक
आज्ञासँ लक्ष्मण हुनक परिचय दैत बजलाह—"विद्वन्! एहि
पृथिवी पर दशरथ नामक प्रसिद्ध धर्मानुरागी राजा छलाह।
ई ओएह महाराजक ज्येष्ठ पुत्र थिकाह, हिनक नाम श्रीराम
छैन्हि। सब प्राणीक शरणदाता श्रीराम एहि वनमे पिताक
आज्ञाक पालन करबाक हेतु आएल छथि। महाराज दशरथक
चारि बालक सबहुमे सबसँ अधिक गुणवान इएह छथि।
किछु विशेष कारणें राज्यसँ वञ्चित भए वनमे निवास कर-
बाक हेतु अपन पत्नी सीताक सङ्ग एतए आएल छलाह।
हम हिनक छोट भाइ थिकहु, लक्ष्मण हमर नाम अछि ओ
हिनक गुणसबसँ आकृष्ट भए हिनक सेवा करबाक हेतु हिन-

कहि सङ्ग आएल छी। हमर एहि गुणवान भाइक पत्नी सीताकेँ एकटा मायावी राक्षस अपहरण कए लए गेल। ओ राक्षस के छल, कतए रहैत अछि, तकर पता नहि लागि रहल अछि। दनु नामक दैत्यक कहलासँ हमसब सुग्रीवक शरणमे आएल छी। हमर धर्मात्मा जेठ भाइ, जे सम्पूर्ण जगतकेँ शरण दए सकैत छथि तथा जे सदैव शरणवत्सल रहलाह अछि, सएह सम्प्रति सुग्रीवक शरणमे आएल छथि। श्रीराम शोकसँ अभिभूत ओ आर्त्त भए शरणमे आएल छथि, तेँ यूथपति-सहित सुग्रीवकेँ हिनका पर कृपा करबाक चाहिऐन्हि।"

अत्यन्त करुणाजनक स्वरमे सुमित्राकुमार लक्ष्मणक वचन सूनि कुशलवक्ता हनुमानजी उत्तर देलथिन्ह—"राजकुमारद्वय! वानरराज सुग्रीवकेँ अहीँ दूनू गोटासन बुद्धिमान, क्रोधविजयी ओ जितेन्द्रिय पुरुषसँ भेँटक आवश्यकता छलैन्हि। हुनक सौभाग्य जे अहाँलोकनि अपनहि दर्शन दए देलिऐन्हि। ओ सेहो राज्यभ्रष्ट छथि, वालिक संग हुनका शत्रुता भए गेलैन्हि अछि, वालि हुनक स्त्रीक अपहरण कए लेलकैन्हि अछि तथा घरसँ बैलाए देलकैन्हि अछि। अतः जेठ भाइसँ अत्यन्त भयभीत भेल ओ एहि वनमे निवास करैत छथि। सूर्यनन्दन सुग्रीव सीताक पता लगएबाकमे अपने दूहू गोटाकेँ पूर्ण सहायता करताह।" एतबा कहि हनुमानजी श्रीरघुनाथजीसँ सुग्रीवक लग चल-

बाक हेतु स्निग्ध मधुर वाणीमे निवेदन कएल। हुनक चेष्टा ओ बजबाक ढङ्गसँ दूहू भाइकेँ बुझबा योग्य भए गेलैन्हि जे सुग्रीवकेँ सेहो हिनका दूहू गोटासँ प्रयोजन छैन्हि, अतः अपन कार्य सिद्ध भेल बूझि प्रसन्न भए गेलाह। तदुत्तर हनुमानजी अपन तपस्वी-रूपकेँ त्यागि वानर-रूपमे भए गेलाह तथा दूनू वीरकेँ पीठ पर बैसाए शीघ्र ऋष्यमूक गिरिवर पर पहुँचि गेलाह।

श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ ऋष्यमूक पर्वतपर सुग्रीवक वासस्थानमे बैसाए हनुमानजी मलयपर्वत पर गेलाह ओ ओतए सुग्रीवकेँ दुहू रघुवंशी वीरक परिचय दैत कहल—"महाप्राज्ञ! जनिक पराक्रम अत्यन्त दृढ़ ओ अमोघ छैन्हि, से श्रीरामचन्द्रजी अपन भाइ लक्ष्मणक सङ्ग आएल छथि। श्रीराम सुप्रसिद्ध इक्ष्वाकुकुलक महाराज दशरथक पुत्र थिकाह जे पिताक आज्ञा पालन करबाक निमित्त वनमे निवास कए रहलाह अछि। जखन ओ दण्डकारण्यमे निवास करैत छलाह, तखन निर्जन आश्रममे रावण आबि हिनक पत्नी सीताक अपहरण कए लेलक। सीताकेँ तकबाक हेतु अहाँसँ सहायताक लेल अहाँक शरणमे आएल छथि। ई दूहू भाइ श्रीराम ओ लक्ष्मण अहाँसँ मित्रता करबाक इच्छुक छथि। अतः अहाँ चलू ओ हिनक सत्कार करू।"

हनुमानजीक वचन सूनि वानरराज सुग्रीव अत्यन्त दर्श-

नीय रूप धारण कए श्रीराम ओ लक्ष्मण लग उपस्थित भेलाह ओ प्रेमसँ बजलाह—"प्रभो! अहाँ धर्मक विषयमे सुशिक्षित, परम तपस्वी ओ दयालु थिकहुँ। अहाँक यथार्थ गुणक वर्णन हनुमानजी कए चुकलाह अछि। भगवन्! हम वानर छी ओ अहाँ नर छी, हमरासँ जे मैत्री करए चाहैत छी, ताहिसँ हमरे सत्कार होइत अछि ओ हमरे उत्तम लाभ प्राप्त भए रहल अछि। हमर मित्रताक हाथ आगाँ बढ़ल अछि, एकरा अपन हाथमे लए ली ओ मैत्रीक अटूट सम्बन्ध स्थापित कए ली, एकरा स्थिर मर्यादासँ बान्हि दी।"

सुग्रीवक सुन्दर वचन सूनि भगवान् श्रीरामक मन प्रसन्न भए गेलैन्हि। ओ अपन हाथसँ हुनक हाथकेँ पकड़ि दबाए देलैन्हि ओ बड़ सौहार्दसँ हर्षित भेल शोकपीड़ित वानर-राज सुग्रीवकेँ अपन छातीसँ लगाए लेलैन्हि। तखनहिँ हनुमानजी दुइ गोट काठकेँ रगड़ि आगि उत्पन्न कएल, आगिकेँ प्रज्वलित कए अग्निदेवताक सादर पूजन कएल, पुनः एकाग्र-चित्त भए श्रीराम ओ सुग्रीवक बीचमे साक्षीक रूपमे ओहि अग्निकेँ प्रसन्नतापूर्वक स्थापित कएल। तत्पश्चात् सुग्रीव ओ श्रीराम ओहि प्रज्वलित अग्निक प्रदक्षिणा कएल एवं एक दोसराक अभिन्न मित्र भए गेलाह। एहिसँ वानरराज ओ श्रीरघुनाथजी दूहूक अन्तरमे बड़ प्रसन्नता भेलैन्हि, परस्पर एक दोसराकेँ कतेक काल धरि स्नेहपूर्वक देखैत रहलाह, मुदा देखबासँ तृप्ति नहि होइत छलैन्हि।

तत्पश्चात् सुग्रीव श्रीरामकें प्रसन्नतापूर्वक कहल-थिन्ह—"अहाँ हमर प्रिय मित्र भेलहुँ, आइसँ हमर-अहाँक सुख-दुःख एक भेल।" एतबा कहि ओ एकटा शाल-वृक्षक शाखा तोड़ि बिछाए देल तथा श्रीरामचन्द्रजीक सङ्ग ओहि पर बैसि गेलाह। तदुत्तर पवन-पुत्र हनुमान अत्यन्त प्रसन्न मनें चानन गाछक एकटा डारिकें तोड़ि लक्ष्मणकें बैसबाक हेतु देलैन्हि। वानरराज सुग्रीव, जनिक नेत्र हर्षसँ विकसित छल, भगवान श्रीरामकें स्निग्ध वाणीमे कहल-थिन्ह—"श्रीराम! हमर जेठ भाइ वालि हमरा घरसँ बैलाए देलैन्हि, हमर पत्नीकें छीनि लेलैन्हि तथा हमरासँ शत्रुता कए रहल छथि। हुनकहि भयसँ आतङ्कित भए हम एहि दुर्गम वनमे आश्रय लेने छी। महाभाग! वालिक भयसँ पीड़ित भेल हमरा अभय दान दिअ, एहन उपाय करू जे हमरा कोनहु प्रकारक भय नहि रहए।" सुग्रीवक एना कहला पर धर्मक ज्ञाता शरण-वत्सल ककुत्स्थकुलभूषण तेजस्वी श्रीराम हँसैत सुग्रीवकें अश्वासन दैत उत्तर देलथिन्ह—"महाकपे! हमरा बुझल अछि जे मित्र उपकार रूपी फल देनिहार होइत छथि। हम अहाँक पत्नीक अपहरणकर्त्ता वालिक वध कए देब। हमर तूणीरमे भरल सूर्यतुल्य तेजस्वी बाण अमोघ अछि, एकर प्रहार व्यर्थ नहि जाइत छैक। ई रोषसँ भरल सर्प जकाँ छुटैत अछि ओ इन्द्रक वज्र जकाँ भयङ्कर चोट करैत अछि। हम विषधर सर्प सन अपन एहि बाणसँ मारि वालिकें पृथिवी पर खसाए देबैन्हि।"

अपना हेतु श्रीरामचन्द्रजीक परम हितकर वचनकें सूनि सुग्रीव कें बड़ प्रसन्नता भेलैन्हि। ओ उत्तम वाणीमे बजलाह—"वीर पुरुषसिंह! हम अहाँक कृपासँ अपन प्रिया पत्नी तथा राज्यकें प्राप्त कए सकी, तेहन यत्न करू। नरदेव! हमर जेठ भाइ हमर जानक वैरी भए गेलाह अछि, तेँ अहाँ हुनक तेहन अवस्था कए दिऔन्ह, जाहिसँ ओ हमरा मारि नहि सकथि।" एमहर सुग्रीव ओ श्रीरामक एहि प्रकार मैत्रीपूर्ण वार्तालाप भए रहल छल, ओमहर सीताक प्रफुल्लित कमल सन, कपिराज वालिक सुवर्ण सन ओ निशाचर रावणक प्रज्वलित अग्निक समान वाम नेत्र एक सङ्ग फड़कए लगलैन्हि।

सुग्रीव पुनः प्रसन्नतापूर्वक श्रीरामचन्द्रजीसँ कहलथिन्ह—"श्रीराम! हमर मन्त्रीलोकनिमे श्रेष्ठ हनुमानजी अहाँक विषयमे सबटा वृत्तान्त कहि चुकल छथि, जाहि कारणेँ अहाँकें एहि निर्जन वनमे आबए पड़ल। अहाँ ओ लक्ष्मणक अनुपस्थितिमे राक्षसराज रावण अहाँक पत्नी मिथिलेशकुमारी जनकनन्दिनी सीताकें अपहरण कए लए गेल ओ अहाँकें पत्नी-वियोगमे दए गेल। परन्तु अपन पत्नी-वियोगक दुःखसँ अहाँ शीघ्र मुक्त भए जाएब। शत्रुदमन श्रीराम! अहाँक भार्या सीता पातालमे होथु अथवा आकाशमे, हम हुनका ताकि अहाँक सेवामे समर्पित कए देब। रघुनन्दन! हमर बात सत्य मानू, अहाँक पत्नी

विष-मिश्रित भोजन जकाँ दोसराक हेतु अग्राह्य थिकीह, हुनका पचएबाक सामर्थ्य ककरहुमे नहि छैक। अहाँ शोक करब छोड़ि दिअ, हम अहाँक प्राणवल्लभाकेँ अवश्य आनि देब। एक दिन हम देखलहुँ—एकटा भयङ्कर राक्षस कोनो स्त्रीकेँ लेने जाए रहल अछि, आब अनुमान करैत छी जे ओ सीते रहल होइतीह। ओ कँपैत स्वरमे 'हा राम, हा राम, हा लक्ष्मण' कहैत कनैत छलीह ओ नागराजक वधू जकाँ छट-पटाइत प्रकाशित भए रहल छलीह। हम चारू मन्त्रीक सङ्ग एही शैल-शिखर पर बैसल रही। हमरा देखि देवी सीता अपन ओढ़नी ओ कएक गोट आभूषण नीचाँ खसाए देलैन्हि। रघुनन्दन। ओ वस्तु सब हम रखने छी लगले अनैत छी, अहाँ ओकरा चीन्हि सकैत छी।"

एतबा कहि सुग्रीव पर्वतक एक गहन गुफामे गेलाह तथा वस्त्र ओ आभूषण आनि श्रीरामकेँ देखए देलैन्हि, जकरा देखितहिं श्रीरामचन्द्रजी मेघसँ झाँपल चन्द्रमा जकाँ नोरसँ झाँपल भए गेलाह। ओ 'हा प्रिये, हा प्रिये' कहि कानए लगलाह, अपना लग ठाढ़ सुमित्राकुमार लक्ष्मण दिसि देखैत विलाप करए लगलाह—"लक्ष्मण! ई आभूषण निश्चये जन्मल घाससँ भरल भूमि पर खसल होएत, तेँ तँ ओहिनाक ओहिना अछि, टूटल-फूटल नहि अछि।" लक्ष्मण उत्तर देलथिन्ह—"हम एहि बाजूबन्द ओ कुण्डलकेँ तँ नहि चिन्हैत छिऐन्हि, परन्तु प्रतिदिन भौजीक पाएरकेँ प्रणाम करैत छलहुँ, तेँ एहि

नूपुरकेँ अवश्य चिन्हैत छी।" तखन श्रीरघुनन्दनजी सुग्रीवसँ पुछलथिन्ह—"सुग्रीव! अहाँ तँ अवश्य देखने होएब जे ओ भयङ्कर रूपधारी राक्षस हमर प्राणहुसँ प्रिय सीताकेँ कोन दिसि लए गेल? कहू, ओ राक्षस कतए रहैत अछि, हम ओकर अपराधक कारणेँ पृथिवीसँ समस्त राक्षस-जातिकेँ निर्मूल कए देब। वानरराज! जे निशाचर छल-पूर्वक हमर प्रियतमाक अपहरण कए हमरा अपमानित कएलक अछि, से हमर घोर शत्रु थिक। हमरा ओकर पता कहू, हम एखनहिँ ओकरा यमराजक ओहि ठाम पठबैत छी।"

श्रीरामकेँ शोकसँ पीड़ित देखि वानरराज सुग्रीवक आँखिमे नोर भरि आएल। ओ हाथ जोड़ि अश्रुसिक्त स्वरमे बजलाह—"प्रभो! ओहि पापात्मा राक्षसक गुप्त निवासस्थान कतए अछि, ओकरामे कतेक शक्ति ओ पराक्रम छैक तथा ओ कोन कुलमे उत्पन्न अछि, से हम नहि जनैत छी। मुदा हम प्रतिज्ञा करैत छी जे जनकनन्दिनी सीता कतहु होइतीह, अहाँकेँ अवश्य भेटतीह। हम यत्नपूर्वक हुनक पता लगाएब ओ सैनिक-सहित रावणक वध करबामे एहन पुरुषार्थ देखाएब जे अहाँ प्रसन्न भए जाएब। दशरथनन्दन राम! अहाँ शोक जुनि करू; जखन एक साधारण वानर होइतहुँ हम अपन पत्नीक हेतु शोक नहि करैत छी तखन अहाँ सन महात्मा, सुशिक्षित एवं धैर्यवान महापुरुषक शोक करब उचित नहि अछि। हम हाथ जोड़ि प्रेमपूर्वक अनुरोध करैत छी जे अहाँ

पुरुषार्थक आश्रय लिअ, शोकके अपना ऊपर प्रभाव नहि देबए दिऔक, कारण, शोकाक्रान्त मनुष्यकें सुख नहि भेटैत छैन्हि ओ स्वाभाविक तेज नष्ट भए जाइत छैन्हि। हम उपदेश नहि दैत छी, मित्र होएबाक कारणें विचार दैत छी—अहाँ शोकक त्याग कए धैर्यक आश्रय लिअ।"

सुग्रीवक मधुर वाणीसँ आश्वस्त भए श्रीराम अपन नोर पोछि लेलैन्हि तथा स्वस्थचित्त भए मित्रवर सुग्रीवकें हृदयसँ लगबैत कहलथिन्ह—"सुग्रीव! एक स्नेही ओ हितैषी मित्रक कर्त्तव्य कए अहाँ सर्वथा उचित कएल; अहाँक आश्वासनसँ हमर चिन्ता मेटाए गेल, आब हम पूर्ण स्वस्थ छी। मुदा अहाँके मिथिलेशकुमारी सीता तथा दुरात्मा रावणक पता लगएबामे शीघ्र प्रयत्न करबाक चाही। हमरहु एहि समय अहाँक हेतु किछु कर्त्तव्य अछि। निस्सङ्कोच कहू जे अहाँकें की मनोरथ अछि? वानरश्रेष्ठ! हम वालिक वध करबाक विषयमे जे कहने छलहुँ, से सत्ये कहने छलहुँ। हम आइ धरि कहिओ मिथ्या नहि बजलहुँ अछि आ ने भविष्यमे कहिओ बाजब। अतः हम जे बजलहुँ से हम पूर्ण करब, अहाँकें विश्वास दिअएबाक हेतु हम शपथ खाइत छी।" श्रीरघुनाथजीक प्रतिज्ञा सूनि अपन वानर-मन्त्रीक सङ्ग सुग्रीव बड़ प्रसन्न भेलाह।

श्रीरामचन्द्रक वचन सूनि सुग्रीव अत्यन्त सन्तुष्ट भेल

हर्षपूर्वक लक्ष्मणक अग्रज शूरवीर श्रीरामसँ कहलथिन्ह—"भगवन्! एहिमे सन्देह नहि जे देवताकेँ हमरा पर कृपा छैन्हि जे अहाँ सन महापुरुष हमर सखा भेलाह अछि। अहाँ अग्निक साक्षी बनाए हमरा सङ्ग मैत्री कए हमरा विशेष सम्मानक पात्र बनाए देलहुँ अछि। आब अहाँक सहायतासँ अपन राज्य पुनः प्राप्त कए लेब, ताहिमे कोनो सन्देह नहि अछि। हमहूँ अहाँक योग्य मित्र थिकहुँ, से अहूँकेँ क्रमिक बुझबा योग्य भए जाएत। हम अपनहिँ मुहेँ अपन गुणक वर्णन कोना करू? मित्र धनिक होथि अथवा दरिद्र, सुखी होथि वा दुखी, निर्दोष होथि वा सदोष, ओ मित्रक हेतु सबसँ पैघ सहायक होइत छथि। अनघ! साधुपुरुष अपन मित्रक उत्कृष्ट प्रेम देखि आवश्यकता पड़ला पर धन, सुख ओ देशहुक त्याग करबामे पाछाँ नहि रहैत छथि।" ई वचन सूनि दिव्य कान्तिसँ युक्त श्रीराम इन्द्रतुल्य तेजस्वी बुद्धिमान लक्ष्मण लग प्रिय विषय बजनिहार सुग्रीवक बातक मुक्त-कण्ठेँ समर्थन कएल।"

दोसर दिन महाबली श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ ठाढ़ देखि सुग्रीव शाल-वृक्षक एकटा फूल ओ पातसँ भरल शाखा तोड़ि राखि देलैन्हि ओ श्रीरामक सङ्ग ओहि पर बैसि गेलाह। हनुमानजी सेहो एकटा डारि तोड़ि ओहि पर लक्ष्मणकेँ बैसाओल। तदुत्तर प्रसन्न मनेँ सुग्रीव श्रीरामकेँ कहलथिन्ह—"प्रभो! हमर भाइ हमरा घरसँ बहार कए देलैन्हि, हमर

पत्नीकेँ छीनि लेलैन्हि, हुनक भयसँ त्रस्त भेल हम वने वने बौआइत छी। प्रभो! अहाँ समस्त लोकके अभय देबामे समर्थ छी। अतः वालिक भयसँ दुखी ओ अनाथ हमरहु पर कृपा करी।" सुग्रीवक ई कहला पर तेजस्वी, धर्मज्ञ ओ शरणावत्सल श्रीराम मन्द-मन्द हँसैत उत्तर देल-थिन्ह—"मित्र! उपकारे मित्रताक फल थिक ओ अपकार शत्रुताक लक्षण। अतः अहाँक पत्नीक अपहरणकर्त्ता वालिक हम अवश्य वध करब। हमर बाणक तेज प्रचण्ड अछि, ई रोषसँ भरल भुजङ्ग जकाँ भयंकर अछि, इन्द्रक वज्रक समान अमोघ अछि। एहि बाणसँ जेठ भाइ होइतहुँ अपन अपकारकर्त्ता वालिकेँ मरल पर्वतक समान पृथिवी पर पड़ल अहाँ देखब।"

श्री रघुनाथजीक बात सूनि वानरसेनापति सुग्रीव अत्यन्त प्रसन्न भए हुनका बारंबार साधुवाद देबए लगलथिन्ह ओ कहलथिन्ह—"श्रीराम! अहाँ हमर मित्र थिकहुँ, तेँ पूर्ण विश्वास कए अपन आन्तरिक दुख निवेदन करैत छी।" एतबा कहैत-कहैत सुग्रीवक आँखि नोरसँ भरि गेलैन्हि; वाणी अश्रु गद्गद भए गेलैन्ह। अतः जोरसँ बजबामे ओ अस-मर्थ भए गेलाह। अपन अश्रु प्रवाहकेँ कहुना धैर्यपूर्वक रोकि संक्षेपमे वालिक सङ्ग अपन शत्रुताक वर्णन करैत बजलाह—"श्रीराम! केवल हनुमान आदि किछु वानर हमर सहायक छथि, हिनकालोकनिकेँ हमरा पर स्नेह छैन्हि

ओ ई सब हमर रक्षा करैत रहैत छथि। यद्यपि वालि हमर जेठ भाइ थिकाह, तथापि आब ओ हमर शत्रु भए गेलाह अछि। अतः हमर सुख ओ जीवन हुनकहि विनाश पर निर्भर करैत अछि। रघुनन्दन! हम अपन शोकक नाशक उपाय अहाँके कहलहुँ, कारण, मित्र दुःखमे रहथु अथवा सुखमे, ओ अपन मित्रक सदैव सहायता करैत छथि।"

सुग्रीवक वचन सूनि श्री राम पुछलथिन्ह—"अहाँ दूहू भाइमे शत्रुता किएक भेल, से हम विस्तारसँ सुनए चाहैत छी? अहाँ दूहूक शत्रुताक कारण बूझि अहाँ दूहू गोटाक प्रबलता ओ निर्बलताक निश्चय कए हम तुरन्त अहाँके सुखी बनएबाक उपाय करब।" महात्मा श्रीरामक प्रश्न सूनि सुग्रीवके अपन चारू वानरक सङ्ग अपार हर्ष भेलैन्हि। तदुत्तर सुग्रीवक मुह पर प्रसन्नता व्याप्त भए गेलैन्हि, ओ श्रीरामके वालिक सङ्ग वैर होएबाक यथार्थ कारणक वर्णन करब आरम्भ कए देलैन्हि।

सुग्रीव श्रीरामके कहए लगलथिन्ह—"रघुनन्दन! हमरा-लोकनिक पिता छलाह ऋक्षरजा, जे शत्रुके संहार करबाक शक्ति देखि वालिके बड़ मानैत छलथिन्ह, हम सेहो हिनक बड़ आदर करैत छलिऐन्हि। पिताजीक मृत्युक पश्चात् वालि वानर सबहिक राजा भेलाह ओ हम विनीत भावें हुनक सेवामे तत्पर रहैत छलहुँ। ओहि समय मय दानवक पुत्र ओ

दुन्दुभीक जेठ भाइ मायावी नामक एक तेजस्वी दानव रहैत छल। एक दिन आधा राति बितला पर ओ किष्किन्धापुरीमे आएल ओ वालिकेँ युद्धक हेतु ललकारए लागल। ओकर भैरवनाद सूनि हमर सूतल भाइक नीन टूटि गेलैन्हि, ओ लगले वेगपूर्वक घरसँ बहार भेलाह। लोक कतबो रोकलकैन्हि, ओ नहि रुकलाह। हम स्नेहवश भाइक सङ्ग भए गेलिऐन्हि। ओ असुर वालिकेँ ओ किछु दूर पर सहायकक रूपमे हमरा देखलक तँ भयभीत भए भागि गेल। भयभीत भए भगैत ओहि दानवकेँ हम दूहू भाइ खेहारए लगलहुँ। आगाँ किछु दूर पर धरतीमे एकटा पैघ बिल छलैक, असुर बड़ वेगसँ ओहि बिलमे पैसि गेल। हम दूनू गोटा ओतए पहुँचि थम्हि गेलहुँ।

शत्रुकेँ बिलमे भागि गेल देखि वालिक तामसक सीमा नहि रहल। ओ हमरा कहलैन्हि—'सुग्रीव! अहाँ एतहि सावधान भए ठाढ़ रहू, हम बिलमे पैसि शत्रुकेँ मारैत छी!" हमहुँ हुनकर सङ्गहि बिलमे जाए चाहलहुँ, मुदा हमरा शपथ दए ओ एसकरे बिलमे पैसि गेलाह। हमर बिलक द्वार पर ठाढ़ रहैत-रहैत एक वर्ष बीति गेल। तदुत्तर दीर्घ कालक पश्चात् बिलसँ सहसा फेन-सहित शोणितक धारा प्रवाहित होअए लागल, असुरलोकनिक गर्जन सेहो सुनल, मुदा अपन भाइक बाजब नहि सूनि सकलहुँ। ई सब देखि ओ विचारि इएह निश्चय कएल जे वालि मारल गेलाह। तखन

ओहि बिलक द्वार पर एकटा शिला-खण्ड राखि तथा अपन भाइकेँ जलाञ्जलि दए किष्किन्धापुरी घुरि गेलहुँ।

जखन मन्त्रीलोकनिकेँ ई विषय ज्ञात भेलैन्हि तँ हमरा ओलोकनि राजाक पद पर प्रतिष्ठित कए देलैन्हि ओ हम न्यायपूर्वक राज्यक संचालन करए लगलहुँ। किछु समयक पश्चात् बालि दानवकेँ मारिकेँ घुरलाह ओ हमरा राजा भेल देखि तामसेँ लाल-पिअर होअए लगलाह। प्रभो! हम अपन मस्तकक मुकुटकेँ हुनक चरण पर समर्पित कए देल, मुदा तइओ प्रसन्न नहि भेलाह। पुनः प्रसन्न करबाक इच्छासँ हुनका निवेदन करैत कहलिऐन्हि जे कोना हम एक वर्ष धरि ओहि बिलक द्वार पर रहलहुँ ओ कोना फेन-सहित शोणितक धारा देखि ओ असुरक गर्जन सूनि हुनक मृत्यु बूझि ओतएसँ किष्किन्धापुरी पहुँचलहुँ, तखन कोना मन्त्री लोकनि राज्यपद पर अभिषिक्त कए देलैन्हि, पुनः अन्तमे निवेदन कएल—'वानरराज ! अहाँक बिना हम अनाथ भए गेल छलहुँ। ईश्वरक कृपाजँ अहाँ सकुशल घुरि अएलहुँ। अहीँ एहिठामक सम्मानीय राजा थिकहुँ ओ हम पूर्ववत् सेवक भए अहाँक सेवा कएल करब। अहाँक राज्य हमरा लग धरोहरक स्वरूप छल, एकरा ग्रहण करू ओ हमरा पर क्रोध नहि करू।' एतेक प्रेमपूर्वक विनय कएलहुँ पर हुनक क्रोध शान्त नहि भेलैन्हि। ओ हमर अपमान करैत मन्त्री सबहिकेँ कहलथिन्ह—'जखन हम ओहि दानवकेँ मारि

बहार होअए लगलहुँ तँ बिलक द्वारकेँ बन्द देखलहुँ। हम 'सुग्रीव-सुग्रीव' कहि शोर करए लगलहुँ, परन्तु उत्तर नहि भेटल तँ हमरा बड़ दुःख भेल। कहुना लात मारि-मारि ओहि पाथरकेँ पाछाँ धकेलि बिलसँ बहार भए नगरमे घुरलहुँ अछि। ई सुग्रीव एहन क्रूर ओ निर्दयी अछि जे भ्रातृ-प्रेमकेँ बिसरि राज्यकेँ हथिअएबाक हेतु हमरा ओहि गुफामे बन्द कए देने छल।' एतबा कहि वालि हमरा घरसँ बहार कए देलैन्हि। ओ घरहिटासँ बैलाए नहि देलैन्हि, हमर स्त्रीकेँ सेहो छीनि लेलैन्हि। तखन रने-वने बौआइत एहि ऋष्यमूक पर्वत पर रहए लगलहुँ, कारण, एहि पर्वत पर आक्रमण करब बड़ कठिन छैक। रघुनाथजी! इएह वालिक सङ्ग हमर वैरक विस्तृत कथा थिक। आब वालिक दमन कए हमरा निर्भय करू।"

सुग्रीवक द्वारा सबटा कथा बूझि धर्मज्ञ परम तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी हँसैत-हँसैत बजलाह—"मित्र! अहाँक भार्याक अपहरण-कर्त्ता ओ वानर जावत धरि हमर दृष्टिमे नहि अबैत अछि, तावते धरि जीवित अछि। हम जनैत छी जे अहाँ शोकक समुद्रमे डूबल छी, हम निश्चय अहाँकेँ ओहिसँ उद्धार करब ओ अहाँ अपन पत्नी तथा राज्यकेँ शीघ्र प्राप्त कए लेब।"

श्रीरामचन्द्रजीक वचन हर्ष ओ पुरुषार्थकेँ बढ़बएबला छल, जकरा सूनि सुग्रीव आदर प्रकट करैत कहल—"प्रभो!

अहाँक बाण प्रज्वलित, तीक्ष्ण एवं मर्मभेदी अछि। यदि अहाँ कुपित भए जाइ तँ प्रलय-कालक सूर्य जकाँ समस्त लोककेँ भस्म कए सकैत छी। एहिमे संशय नहि अछि। परन्तु वालिकेँ जेहन पुरुषार्थ, बल ओ धैर्य छैन्हि, से सूनू ओ तदुत्तर जे उचित हो, से करब। वालि सूर्योदयसँ पहिनहिँ पश्चिम समुद्रसँ पूब समुद्र धरि तथा उत्तर समुद्रसँ दक्षिण समुद्र धरि घूमि अबैत छथि, तइओ थकैत नहि छथि; ओ पैघ-पैघ पहाड़क शिखरकेँ उपाड़ि ऊपर फेकि ऊपरहि लोकि लैत छथि। एकटा दुन्दुभी नामक राक्षस छल, जे कैलास पर्वत एतेक ऊँच छल ओ जकर शरीरमे एक हजार हाथीक बल छलैक तथा जे महान् जलराशिसँ पूर्ण समुद्रकेँ लाँघि जाइत छल, तकरा वालि अपन शरीरसँ दबाकए पीसि देलैन्हि तथा हाथसँ उठाए एक योजन दूर फेकि देलैन्हि। ओएह अछि दुन्दुभीक हड्डीक ढेर, जे एक महान् पर्वतक शिखर जकाँ बूझि पड़ैत अछि। श्रीराम! अहाँ एहन पराक्रमी वालिकेँ युद्ध-क्षेत्रमे कोना मारि सकबैक ?"

सुग्रीवक एहि कथा पर लक्ष्मणकेँ बड़ हँसी लगलैन्हि। ओ हँसितहि बजलाह—"कोन कार्य कए देलासँ अहाँकेँ विश्वास होएत जे श्रीराम वालिक वध कए सकताह ?" तखन सुग्रीव हुनका कहलैन्हि—"पूर्वकालमे वालि शालक एहि सातोटा वृक्षकेँ एक-एकटा बाण चलाए एक-एककेँ छेद

कए देने रहथि। यदि श्रीराम एहि सबमेसँ एकहुटा वृक्षकेँ एकहि बाणसँ छेदि देथि तँ हम मानि लेब जे हिनक हाथसँ वालिक वध भए सकत।" जनिक नेत्र किछु-किछु लाल छलैन्हि, ताहि श्रीरामसँ ई कहि सुग्रीव दुइ घड़ी धरि गुन-धुनमे पड़ल रहलाह, तदुत्तर ककुत्स्थकुलभूषण श्रीरामसँ कहल —"वालि शूर अछि, ओकर बल ओ पुरुषार्थ विख्यात छैक, ओ बलवान वानर एखन धरि ककरहुसँ पराजित नहि भेल अछि। रघुनन्दन! अपन बलशाली दुष्ट भ्राताक बल-पराक्रम हम जनैत छी ओ समरभूमिमे अहाँक पराक्रम हम नहि देखल अछि। प्रभो! हम अहाँक सङ्ग ने तँ तुलना करैत छी आ ने डेरबैत छी अथवा अपमान करैत छी। वालिक भयानक कर्मक कारणेँ हमर हृदयमे कातरता उत्पन्न भए रहल अछि। मित्र! निश्चय अहाँक वाणी हमरा हेतु विश्वसनीय अछि, कारण, अहाँक धैर्य ओ दिव्य आकृति आदि गुण छाउरमे झाँपल आगिक समान अहाँक उत्कृष्ट गुणकेँ सूचित करैत अछि।"

महात्मा सुग्रीवक वचन सूनि भगवान् श्रीराम मन्द-मन्द हँसैत उत्तर दैत कहलथिन्ह—"वानर! यदि अहाँकेँ एखन हमर पराक्रमक विषयमे विश्वास नहि होइत अछि तँ युद्धक समयमे विश्वास भए जाएत।" एतबा कहि सुग्रीवकेँ सान्त्वना दैत महाबाहु बलवान श्रीराम कौतुक करैत दुन्दुभीक शरीरकेँ अपन पाएरक अङ्गुठासँ टाङि लेल ओ पाएरक

अउँठहिँसँ ओहि कङ्कालकेँ दस योजन दूर फेकि देल। कंकालकेँ ओतेक दूर फेकल जाइत देखि सुग्रीव पुनः श्रीरामसँ अर्थपूर्ण वचन कहल—"मित्र! हमर भाइ तखन मदमत्त ओ युद्धसँ थाकल छलाह तथा दुन्दुभीक शरीर रक्तसँ भीजल ओ मांसयुक्त छलैक। एहना दशामे ओ एकरा ओतेक दूर फेकि देने छलाह। श्रीराम! एखन मांसहीन भए ई कङ्काल खर सन हल्लुक अछि तथा अहाँ हर्ष ओ उत्साहसँ युक्त भए फेकल अछि। अतः एकरा एतेक दूर फेकलहुसँ ई नहि कहल जाए सकैत अछि जे अहाँकेँ बल अधिक अछि अथवा हुनकर। तात! अहाँक ओ हुनक बलक प्रसङ्ग हमरा संशय बनले अछि। तेँ आब एक गोट शाल वृक्षकेँ विदीर्ण कए देला पर बलाबलक स्पष्टीकरण भए जाएत। अहाँ अपन धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाउ ओ कान धरि तकरा खीचि शाल वृक्षकेँ लक्ष्य कए एकटा विशाल बाण छोड़ू। हम अहाँकेँ शपथ दैत कहैत छी, अहाँ हमर ई कार्य अवश्य कए दिअ।"

सुग्रीव द्वारा सुन्दर रीतिसँ कहल गेल वचनकेँ सूनि महातेजस्वी श्रीराम हुनकामे विश्वास उत्पन्न करबाक निमित्त धनुष हाथमे लए लेल तथा एकटा बाण लए धनुषक टंकारसँ सम्पूर्ण दिशाकेँ गुञ्जित करैत बाणकेँ शाल वृक्ष दिसि छोड़ि देल। वीर-शिरोमणि श्रीरामक छोड़ल ओ सुवर्ण भूषित बाण ओहि सातो शालवृक्षकेँ एकहि सङ्ग छेदि पर्वत तथा पृथिवीक सातो तलकेँ छेदैत पातालमे चल गेल ओ ओतएसँ बहार भए हुनक तूणीरमे प्रविष्ट भए गेल।

श्रीरामक बाणक वेगसँ सातो शाल वृक्षकेँ विदीर्ण भेल देखि सुग्रीवकेँ बड़ विस्मय भेलैन्हि, मनहि मन प्रसन्न होइत ओ हाथ जोड़ि अपन माथ धरती पर टेकि देलैन्हि ओ श्रीरघुनाथजीकेँ साष्टाङ्ग प्रणाम कएल, तदुत्तर गद्गद स्वरमे कहए लगलाह—"पुरुषप्रवर ! भगवन् ! अहाँ तँ अपन बाणाखँ समराङ्गणमे इन्द्रसहित सम्पूर्ण देवताक वध कए सकैत छी, तखन वालिकेँ मारब अहाँक हेतु कोन पैघ बात अछि ! जे पैघ-पैघ सातटा शाल वृक्षकेँ तथा पर्वत ओ पृथिवीकेँ एकहि बाणसँ विदीर्ण कए देल, तनिका सम्मुख युद्धमे के थम्हि सकैत अछि ? महेन्द्र ओ वरुणक समान पराक्रमी अहाँकेँ मित्रक रूपेँ पाबि हमर सब शोक दूर भए गेल। हम हाथ जोड़ैत छी, हमर प्रिय करबाक हेतु ओहि वालिक, जे भाइक रूपमे हमर शत्रु छथि, वध कए हमरा शीघ्र निर्भय कए दिअ।"

सुग्रीव श्रीरामकेँ लक्ष्मण जकाँ प्रिय भए गेल छलथिन्ह, हुनक बात सूनि श्रीराम अपन ओहि प्रिय सुहृद सुग्रीवकेँ हृदयसँ लगाए लेलैन्हि ओ कहलैन्हि-"सुग्रीव ! हम आब शीघ्र एतएसँ किष्किन्धापुरी चलब। अहाँ आगाँ जाउ ओ वालिकेँ युद्धक हेतु ललकारू गए।" तदनन्तर ओ सब केओ वालिक राजधानी किष्किन्धापुरी गेलाह ओ ओतए गहन वनक भीतर वृक्ष सब-हिक इरोतमे अपनाकेँ नुकओने ठाढ़ भए गेलाह।

सुग्रीव सब तरहेँ प्रस्तुत भए वालिकेँ बजएबाक हेतु भयङ्कर गर्जना कएल। भाइक सिंहनाद सूनि महाबली वालिकेँ

बड़ क्रोध भेलैक। ओ अमर्षसँ भरि अस्ताचलसँ नीचाँ जाइत सूर्य जकाँ घरसँ बहार भए गेल। फेर तँ सुग्रीव ओ वालिमे भयङ्कर युद्ध प्रारम्भ भेल; बूझि पड़ैत छल जेना मङ्गल ओ बुद्धमे संग्राम भए रहल हो। दूहू भाइ एक दोसराकेँ वज्रक समान अपन-अपन थापर-मुक्कासँ प्रहार करए लगलाह। तखन श्रीराम धनुष हाथमे लेने दूनू गोटा दिसि तकलैन्हि तँ दूनू वीर अश्विनीकुमार जकाँ एक-रूपक लगलथिन्ह, बुझबा योग्य नहि होइत छलैन्हि जे एहिमे के सुग्रीव ओ के वालि थिकाह। अतः ओ अपन प्राणान्तकारी बाण छोड़बाक विचार स्थगित कए देलैन्हि। एतबहिमे वालि सुग्रीवकेँ पराजित करए लगलाह तँ सुग्रीव अपन रक्षक श्रीरघुनाथजीकेँ नहि देखि ऋष्यमूक पर्वत दिस भागि गेलाह।

सुग्रीव बड़ थाकि गेल छलाह। हुनक समग्र शरीर शोणितसँ सानल ओ प्रहारसँ निर्बल भए गेल छलैन्हि। तइओ वालि हुनका खेहारि रहल छलथिन्ह, किन्तु ओ मतंगमुनिक सुरक्षित वनमे पैसि गेलाह, तँ वालि हुनका 'तोँ बाँचि गेलेँह' कहि ओतएसँ घुरि गेलाह।

एमहर रघुनाथजी सेहो अपन भाइ लक्ष्मण ओ हनुमानजीक सङ्ग ओहि वनमे पहुँचलाह तँ ओतए सुग्रीव पहिनहिसँ विद्यमान छलाह। लक्ष्मण-सहित श्रीरामकेँ आएल देखि सुग्रीवकेँ बड़ लाज भेलैन्हि; ओ मूड़ी झुकओने दीनवाणीमे श्रीरामकेँ कहलथिन्ह—"रघुनन्दन! अहाँ अपन पराक्रम

देखाए वालिकेँ युद्धक हेतु ललकारबाक हेतु हमरा पठाओल; ई सब भए गेलापर अहाँ हमरा शत्रुसँ पिटबओलहुँ ओ अपने नुकाए रहलहुँ। कहू, एना अहाँ किएक कएलहुँ ? अहाँके पहिनहिँ सत्य-सत्य कहि देब चाहैत छल जे हम वालिकेँ नहि मारब। एहि दशामे हम वालि लग जएबे नहि करितहुँ।"

महामना सुग्रीव जखन दीन-वाणीमे एहि प्रकारक करुणा-जनक वचन कहए लगलाह तँ श्रीराम हुनका कहलथिन्ह—"तात सुग्रीव ! हमर बात सूनू, क्रोध नहि करू। हम बाण नहि चलाओल, तकर कारण कहैत छी। सुग्रीव ! वेष-भूषा, आकार प्रभृतिमे अहाँ ओ वालि बड़ मिलैत-जुलैत छी; कान्ति, दृष्टि, पराक्रम ओ वाजवमे सेहो अहाँ दूहू भाइमे अन्तर नहि अछि। वानर-श्रेष्ठ ! अहाँ दूहू गोटाक रूपमे एतेक समानता देखि अहाँकेँ हम नहि चीन्हि सकलहुँ ओ अपन महान् वेगशाली शत्रु-संहारक बाणकेँ नहि छोड़लहुँ। विचारलहुँ जे एहन ने भए जाए जे हमरा दूनू गोटाक मूल-उद्देश्यहिक विनाश भए जाए। वानरराज ! यदि हमर बाणसँ अहाँ मारल जएतहुँ तँ से हमर बालोचित चपलता ओ मूढ़ता सिद्ध भए जाइत। जकरा अभय-दान देल, तकर वधसँ हमरा बड़ पैघ पाप होइत। एहि समय लक्ष्मण, सीता ओ स्वयं हम अहीँक अधीन थिकहुँ, एहि वनमे अहीँ हमरालोकनिक आश्रय छी। अतः वानरराज ! शङ्का नहि करू ओ फेर जा कए युद्ध आरम्भ करू। वानरेश्वर !

अहाँ कोनो चिह्न धारण कए लिअ जाहिसँ हम चीन्हि जाइ।" सुग्रीवकेँ एतबा कहि श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणकेँ कहल—"लक्ष्मण! उत्तम लक्षणसँ युक्त ओ गजपुष्पी-लता फुलाएल अछि। एकरा उखाड़ि अहाँ महामना सुग्रीवक गरामे पहिराए दिऔन्ह।"

श्रीरामक आज्ञा पाबि लक्ष्मण पर्वतक कातमे उत्पन्न फूलसँ भरल गजपुष्पी-लता उखाड़ि सुग्रीवक गरामे पहि-रए देलथिन्ह। ओहि लतासँ अलंकृत भए सुग्रीव बक-पंक्तिसँ अलंकृत सन्ध्याकालक मेघ जकाँ सुशोभित होअए लगलाह।

श्रीरामसँ आश्वासन पाबि अपन सुन्दर शरीरसँ शोभा पबैत सुग्रीव श्रीरघुनाथजीक सङ्ग फेर किष्किन्धापुरीमे पहुँचि गेलाह।

ओलोकनि शीघ्रतापूर्वक किष्किन्धापुरी पहुँचि एक गहन वनक वृक्षक अढ़मे अपनाकेँ नुकाकेँ ठाढ़ भए गेलाह। वनक प्रेमी सुग्रीव वनमे चारू कात देखैत अत्यन्त क्रोधेँ अपन सिंहनादसँ आकाशकेँ फाड़ैत घोर गर्जना कएल ओ वालिकेँ युद्धक हेतु ललकारल। हुनक सिंहनादसँ भय-भीत भए बड़का-बड़का साँढ़ भागए लागल, मृग युद्धस्थलमे अस्त्र-शस्त्रसँ आहत घोड़ा जकाँ पड़ाएल ओ पक्षी, जनिक पुण्य नष्ट भए गेल छैन्हि, एहन ग्रहक समान आकाशसँ पृथिवी पर खसए लागल। तदुत्तर जनिक सिंहनाद मेघक

गर्जनाक समान गम्भीर छलैन्हि तथा शौर्यक द्वारा जनिक तेज बढ़ल छलैन्हि, से सुग्रीव बारंबार गर्जन करए लगलाह। एहन बूझि पड़ैत छल जेना वायुक वेगसँ चञ्चल भेल उत्ताल तरङ्ग-मालासँ सुशोभित सरितासबहिक स्वामी सागर कोलाहल कए रहल होथि।

तखन वालि अन्तःपुरमे छलाह, ओतहि ओ अपन भाइ सुग्रीवक सिंहनाद सुनलैन्हि। सुवर्णक समान पीअर रङ्गक हुनक शरीर क्रोधसँ तमतमा उठलैन्हि। वालिक दाढ़ी विकराल छल ओ नेत्र क्रोधक कारणेँ अग्निक समान उद्दीप्त भए रहल छलैन्हि। सुग्रीवक दुःसह सिंहनाद सूनि अपन पाएरक पटकबसँ पृथिवीकेँ डोलबैत ओ बड़ वेगसँ बहार भेलाह। मुदा वालिक पत्नी तारा भयभीत भए हुनका भरि पाँजकेँ पकड़ि कहए लगलीह—"वीर! नदीक वेगक भाँति प्रबल अपन वेगकेँ त्यागि दिअ। कालिह प्रातः काल सुग्रीवसँ युद्ध करब, एखन थम्हि जाउ। एखन अहाँक सहसा घरसँ बहार जाएब हमरा नीक नहि लगैत अछि। सुग्रीव पहि-नहुँ आबि युद्धक हेतु ललकारने छलाह ओ पराजित भए भागि गेल छलाह। अहाँसँ पराजित ओ पीड़ित भए फेर लगले ओ एतए आबि ललकारि रहल छथि। अतः हुनक फेरसँ आएब हमरा शंकित करैत अछि। ओ एतेक उत्तेजित भए दर्पपूर्वक जे बारंबार गर्जन करैत छथि, तकर किछु कारण अवश्य अछि। हमरा बूझि पड़ैत अछि

जे कोनहु प्रबल सहायकके सङ्ग अनने छथि ओ तेँ एतेक दर्पपूर्ण गर्जन-तर्जन कए रहल छथि। हमरा कुमार अंगदसँ ज्ञात भेल अछि जे इक्ष्वाकुकुलमे उत्पन्न दशरथनन्दन श्रीराम ओ लक्ष्मण, जे प्रज्वलित अग्निक समान तेजस्वी छथि ओ जनिका पर विजय पाएब बड़ कठिन अछि, से सुग्रीवक सहायक भए गेलाह अछि। तेँ हे वीरवानरराज! अहाँ शत्रुता त्यागि अपन छोट भाइकेँ युवराजक पद पर अभिषेक कए दिऔन्ह, दूहू भाइ मेलसँ रहू ओ युद्ध नहि करू। यदि अहाँ हमर हित करए चाहैत छी अथवा हमरा अपन हितकारिणी बुझैत छी तँ हमर बात मानि लिअ।"

तखन तारा वालिकेँ जे लाभदायक हितक बात कहलथिन्ह, से हुनका नीक नहि लगलैन्हि, कारण, हुनक विनाशक समय निकट आबि गेल छलैन्हि तथा ओ काल-पाशसँ बान्हल भए चुकल छलाह।

चन्द्रमुखी ताराकेँ एहन लाभप्रद कथा कहैत सूनि वालि हुनका पर खिसिआइत बजलाह—"वरानने! गर्जन करैत अपन भाइक, जे हमर शत्रु थिक, उत्तेजनापूर्ण चेष्टाकेँ हम कोना सहि सकैत छी? जे कहिओ परास्त नहि भेल, जे कहिओ युद्धमे अपन पीठ नहि देखओलक, तकरा हेतु शत्रुक ललकारब सहि लेब मृत्युसँ बढ़िकेँ दुःखदायी होइत छैक। अतः हम गर्जन-तर्जन करैत अपन दुष्ट भाइ सुग्रीवक युद्ध करबाक दुस्साहसपूर्ण चेष्टाकेँ

सहन करबामे असमर्थ छी। श्रीराम धर्म ओ कर्त्तव्यक ज्ञाता छथि, ओ पाप-कर्म नहि 'कए सकैत छथि। तेँ हुनका दिसिसँ विषाद नहि करबाक थिक। अहाँ हमरा पर अपन स्नेह देखा चुकलहुँ, भक्तिक परिचय दए देलहुँ। आब घुरि जाउ, हमर पाछाँ-पाछाँ नहि आउ। हम आगाँ बढ़ि सुग्रीवसँ लड़ब, ओकर घमण्डकेँ चूर-चूरकए देबैक, मुदा प्राण नहि लेबैक।" ई सूनि अत्यन्त उदार स्वभावक तारा वालिक आलिङ्गन कए कनिएँ-कनिएँ कनैत अपन पतिक परिक्रमा कएल ओ उदास मनेँ अन्तःपुर चल गेलीह।

वालि आगाँ बढ़लाह। एतबहिमे हुनक दृष्टि सुवर्णक समान पीअर वर्णक सुग्रीव दिसि गेलैन्हि जे लंगोटी बन्हने युद्धक हेतु ठाढ़ प्रज्वलित अग्निक समान प्रकाशित भए रहल छलाह। सुग्रीवकेँ देखि महाबली वालि बड़ क्रोधित भए अपन लंगोटी कसिकेँ बान्हि लेल तथा प्रहारक अवसर तकैत मुक्का तानि बड़ आवेगसँ आगाँ चललाह। फेर एक दोसराकेँ मुक्कासँ प्रहार करए लगलाह। तदुत्तर सुग्रीव बलपूर्वक एकटा शालवृक्षकेँ उखाड़ि वालिक शरीर पर दए मारलैन्हि, जकर आघातसँ वालिक शरीरमे घाओ भए गेलैन्हि। एहि प्रहारसँ ओ आओर अधिक कुपित भए उठलाह।

दूहू भाइक बल-पराक्रम भयङ्कर छल, दूहु गोटाक वेग गरुड़क समान छल। एहन ओ दूहू शत्रुसूदन वीर अपन

सम्पूर्ण शक्ति लगा कए युद्ध करैत एक दोसराकें वध करबाक अवसर तकैत छलाह। मुदा क्रमिक वालिक बल-विक्रम बढ़ए लागल ओ सुग्रीवक शक्ति क्षीण होइत गेल। वालि सुग्रीवक घमण्डकें चूर्ण कए देल। तखन सुग्रीव श्रीरामचन्द्रकें अपन अवस्थाक इशारा करए लगलाह।

श्रीरघुनाथजी देखलैन्हि जे वानरराज सुग्रीव निर्बल भए एमहरहि ताकि रहल छथि, तखन वालिक वध करबाक इच्छासँ ओ अपन धनुष पर विषधर सर्पक समान भयङ्कर बाण राखि प्रत्यञ्चाकें जोरसँ खिचलैन्हि तथा प्रज्वलित वज्रक समान प्रकाशित अपन महान बाणकें छोड़ि देलैन्हि जे वालिक छातीमे लागल। ओहि बाणसँ आहत भए महातेजस्वी पराक्रमी वानरराज वालि पृथिवी पर खसि पड़लाह ओ आर्त्तनाद करए लगलाह। हुनक शरीरसँ पानि जकाँ रक्तक धारा बहए लागल।

लक्ष्मण-सहित श्रीराम वालिकें एहि अवस्थामे देखि ओहि वीरकें सम्मान करबाक इच्छासँ हुनक समीप गेलाह। वालि हिनकालोकनि दिसि ज्वालारहित अग्निक समान निस्तेज दृष्टिसँ तकैत धर्मसँ युक्त विनयपूर्वक कठोर कथा बजलाह—"रघुनन्दन! अहाँ राजा दशरथक विख्यात पुत्र थिकहुँ, तइओ छलसँ मारि अहाँ कोन यश उपार्जन कएल? हम बुझैत छलहुँ जे अहाँ धर्मात्मा छी; इन्द्रियनिग्रह, मनक संयम, क्षमा, धर्म, धैर्य, सत्य ओ पराक्रमसँ युक्त छी तथा

अपराधीकेँ दण्ड देब जे राजाक गुण कहल गेलैक अछि, से अहाँमे अछि। मुदा आब बुझलहुँ जे अहाँ अधर्मी थिकहुँ, आचार-व्यवहार अहाँक पापपूर्ण अछि। हम अहाँक कोनो अनुचित नहि कएने छलहु, तखन अहाँ हमरासन निरपराधकेँ किएक मारल?" एहि तरहक नीतिपूर्ण कथा कहैत महा-मनस्वी वालि चुप भए गेलाह!

वालिक कठोर वचन सूनि श्रीराम हुनका बुझबैत हुनक वधक कारण कहए लगलथिन्ह—"वानर! अहाँ धर्म, अर्थ, काम ओ लौकिक सदाचारक मर्मकेँ नहि जनैत छी, तखन हमर निन्दा किएक करैत छी? अहाँ अपन जीवनमे कामकेँ प्रधानता देने छलहुँ, राजोचित मार्ग पर कखनहुँ स्थिर नहि रहलहु, कुकर्मक कारणेँ सत्पुरुष द्वारा सदैव अहाँक निन्दा भेल। अहाँ सनातन-धर्मक त्याग कए अपन छोट भाइक स्त्रीक सङ्ग सहवास कए बड़ अधर्मक कार्य कएल ओ तेँ हम अहाँक वध कए देलहुँ। महामना सुग्रीवक अछैत हुनक स्त्री रुमाकाक, जे अहाँक पुतहुक सदृश छथि, उपभोग कए अहाँ घोर पापाचार कएल। हम उत्तम कुलमे उत्पन्न क्षत्रिय थिकहुँ, अतः हम अहाँक पापकेँ क्षमा नहि कए सकैत छी। जे पुरुष अपन कन्या, बहिन अथवा भावहुक सङ्ग कामाचार करैत अछि, तकर वध कए देब उचित दण्ड मानल गेलैक अछि।" एतबा कहि भगवान् श्रीराम मरणासन्न वालिक सब शङ्काक निवारण कए देलैन्हि।

वालिक मृत्युक समाचार सूनि तारा अपन पुत्र कुमार अङ्गदक सङ्ग ओतए उपस्थित भए करुण विलाप करए लगलीह, परन्तु श्रीराम ओ लक्ष्मण हुनका बुझाए-सुझाए शान्त कएल। वालिक दाह-संस्कार ओ जलाञ्जलि सेहो सम्पन्न भेल। तत्पश्चात् वानरसेनाक प्रधान-प्रधान वीर शोक-सन्तप्त सुग्रीवकें चारू कातसँ घेरने श्रीरामक सेवामे उपस्थित होइत गेलाह। सुवर्णमय मेरु-पर्वतक समान सुन्दर एवं विशाल-शरीर वायुपुत्र हनुमान दूनू हाथ जोड़ि निवेदन कएल—"भगवन्! अहाँक कृपासँ सुग्रीवकें वानरक विशाल साम्राज्य प्राप्त भेलैन्हि। आब यदि अहाँ आज्ञा दिऐन्हि तँ अपन सुन्दर नगरमे प्रवेश कए अपन मित्रसबहिक सङ्ग अपन राज्य-कार्य देखथि। ई राज्याभिषिक्त भए अहाँकें विधिपूर्वक विशेष पूजा करए चाहैत छथि, तें किष्किन्धापुरी चलबाक कृपा करी।" श्रीराम हुनका उत्तर देल—"हनुमान! हम पिताक आज्ञाक पालन करैत चौदह वर्ष धरि कोनहु ग्राम ओ नगरमे प्रवेश नहि करब। तें वानरश्रेष्ठ वीर सुग्रीव अपन दिव्य नगरमे प्रवेश करथु ओ हुनक राज्याभिषेक कए देल जाइन्ह।" पुनः ओ सुग्रीवकें कहलथिन्ह—"मित्र! अहाँ सब लौकिक ओ शास्त्रीय व्यवहार जनैत छी। कुमार अङ्गद सदाचार-सम्पन्न ओ महान बल-पराक्रमसँ परिपूर्ण छथि, ई पैघ शूर-वीर सेहो छथि। तें हिनकहु युवराजक पद पर अभिषिक्त कए दिऔन्ह। सौम्य! एखन चतुर्मास

आरम्भे भेल अछि, अतः ककरहु पर आक्रमण करबाक ई समय नहि थिक। तेँ अहाँ अपन नगर जाउ, हम लक्ष्मणक सङ्ग तावत एतहि निवास करैत छी। मित्र! कार्तिक-मासमे अहाँ सीताक अन्वेषण ओ रावणक वध करबाक प्रयत्न करब।" एहि प्रकारेँ अग्रिम कार्य-क्रम जखन निश्चित भए गेल, तखन भक्तवत्सल श्रीरामक आज्ञा पाबि वानरश्रेष्ठ सुग्रीव अपन परम रमणीय किष्किन्धापुरीकेँ विदा भए गेलाह ओ ओतए अभिषिक्त भए राज्य-कार्य करए लगलाह।

वानरराज सुग्रीव श्रीरामक कृपासँ अपन राज्य, सङ्गहि अपन मनोवांछित पत्नी रूमाकाक अतिरिक्त परम सुन्दरी ताराकेँ सेहो प्राप्त कए लेल! मुदा अपन अभीष्ट सिद्ध भेला पर ओ दिन-राति भोग-विलासमे लीन रहए लगलाह, श्रीरामक प्रति अपन वचनकेँ बिसरि गेलाह। तखन विविध शास्त्रक महाविद्वान हनुमान हुनका अपन मित्र भग-वान् श्रीरामक प्रत्युपकार करबाक कर्त्तव्यक स्मरण दिआए देलथिन्ह। तदुत्तर शत्रुसूदन सुग्रीव अपन विशाल वानर-सेनाक संगठन कए श्रीरामक सेवामे उपस्थित भेलाह। सुग्रीवहिक चुनल-चुनल वीर-योद्धा ओ विशाल वानर-सेनाक सहायतासँ दशरथनन्दन श्रीराम अनेक राक्षस-योद्धाक सङ्ग राक्षसराज रावणक वध कए अपन प्राणहुसँ

अधिक प्रिया पत्नी सीताकेँ प्राप्त कए लेल तथा वनवासक अवधि समाप्त कए अयोध्या घुरि गेलाह।

शरणापन्न भेल वानर-श्रेष्ठ सुग्रीव आजीवन अपन मित्र-वत्सल भगवान् श्रीरामक सेवामे तत्पर रहलाह। जखन दशरथ-नन्दन श्रीराम अपन मर्त्यलीला समाप्त कए परम धाम चलबाक निश्चय कएल तँ ओ लक्ष्मणक समान अपन परम प्रिय सुहृद ओ शरणापन्न सुग्रीवहुकेँ सङ्ग लेने गेलाह। भक्त-वत्सल श्रीरामक शरणापन्न भेला पर लोक सुग्रीवहि जकाँ हुनक कृपा-भाजन होइत परम-पद प्राप्त कए लैत अछि!



५

काकभुशुण्डी शरणापन्न

५

वालिपुत्र अङ्गदसँ पराजित भए रावणपुत्र मेघनाद क्रोधसँ अचेत मन भए गेल तथा अन्तर्धान-विद्याक आश्रय लए अदृश्य भए वज्रक समान तेजस्वी ओ तीक्ष्ण बाणक वर्षा करए लागल। श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ सेहो ओ सर्पमय बाणक आघातसँ क्षत-विक्षत कए कूट-युद्ध करैत मोहमे दए सर्पाकार बाणक बन्धनमे बान्हि देलक।

दूहू भाइ श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ नागपाशमे बान्हल ओ अचेत भेल देखि वानर-सैन्य-समुदाय विचलित भए उठल, तखनहिँ नारदक पठाओल गरुड़जीक आगमन होअए लागल तँ बड़ जोरसँ बिहाड़ि उठए लागल, घन–घटा उमड़ि आएल तथा बिजलोका सेहो चमकए लागल। गरुड़क पाँखिसँ उत्पन्न वायु-वेगसँ सम्पूर्ण द्वीपक बड़का-बड़का गाछक डारि टूटि-टूटि खसए लागल। लङ्कावासी साँप सब गरुड़जीक भयसँ काँपि उठल ओ जतेक जलजन्तु जलसँ बहार भेल वायुसेवन कए रहल छल, से सब जल्दी-जल्दी जलमे पैसि गेल। तदुत्तर दुइ घड़ीमे प्रज्वलित अग्निक समान विनतानन्दन गरुड़ ओतए उपस्थित भए गेलाह। हुनका उपस्थित देखि जे जे

महाबली नागसब बाणक रूपमे दुहू महापुरुष भाइ श्रीराम ओ लक्ष्मणके बन्हने छल, से सब ओतएसँ भागि गेल। तत्पश्चात् पक्षिराज गरुड़ ओहि दुहू रघुवंशी बन्धुक स्पर्श करैत अभिनन्दन कएल तथा अपन हाथसँ हुनक चन्द्रमाक समान मुखकेँ पोछि देल ! गरुड़जीक स्पर्श पबितहिँ श्रीराम ओ लक्ष्मणक सबटा घाओ छूटि गेलैन्हि तथा हुनकालोकनिक शरीर सुन्दर कान्तिसँ युक्त एवं स्निग्ध भए गेलैन्हि। स्वस्थ देखि दुहू भाइकेँ गरुड़जी हृदयसँ लगाए लेल। तखन श्रीराम प्रसन्न भए हुनका कहलथिन्ह— "इन्द्रजितक कारणेँ हमरालोकनि बड़ पैघ सङ्कटमे पड़ि गेल छलहुँ! अहाँक कृपासँ हमरालोकनि बाँचि सकलहुँ ओ पुनः पूर्ववत् बलसँ सम्पन्न भए सकलहुँ। जेना पिता दशरथ ओ पितामह अजक संग भेलासँ हमर मन प्रसन्न भए सकैत छल, तहिना अहाँकेँ पाबि हमर मन प्रसन्न भए गेल। अहाँ बड़ रूपवान छी, दिव्य पुष्पक माला ओ दिव्य अङ्गरागसँ विभूषित छी। अहाँ दूटा स्वच्छ वस्त्र पहिरने छी तथा दिव्य आभूषण अहाँक शोभा बढ़ाए रहल अछि। हमरा अहाँक परिचय बुझबाक बड़ उत्कण्ठा अछि, तेँ कहू जे अहाँ के थिकहुँ ?"

महातेजस्वी महाबली पक्षिराज विनतानन्दन गरुड़जी श्रीरामक वचन सूनि बड़ प्रसन्न भेलाह, मनहि मन गौरवसँ भरि उठलाह। ओ श्रीरामकेँ उत्तर देलथिन्ह—"काकुत्स्थ!

हम अहाँक मित्र गरुड़ छी। अहाँ दूहूक सहायताक हेतु एखन हम एतए आएल छी। महापराक्रमी असुर, महाबली दानव, देवता तथा गन्धर्व सेहो यदि इन्द्रकेँ आगाँ कए अबितथि तइओ अहाँलोकनिकेँ एहि भयङ्कर सर्पाकार बाणक बन्धनसँ छोड़एबामे समर्थ नहि भए सकितथि। श्रीराम! समराङ्गणमे शत्रुसबहिक संहार करबामे कुशल अपन भाइ लक्ष्मणक सङ्ग अहाँ बड़ सौभाग्यशाली छी जे अनायासे एहि नागपाशसँ मुक्त भए सकलहुँ। नारदमुनिक मुखसँ अहाँकेँ नागपाश द्वारा बान्हल जएबाक समाचार सूनि बड़ शीघ्रतासँ एतए आबि हम अहाँ दूहू गोटाकेँ एहि महाभयङ्कर बाणक बन्धनसँ छोड़ाए देलहुँ अछि। आब भविष्यमे अहाँ सावधान रहब।" ई कहि गरुड़जी श्रीरामसँ विदा लए ओतएसँ प्रस्थान कएल।

श्रीराम ओ लक्ष्मणकेँ नागपाशसँ मुक्त कए गरुड़जी ओतएसँ विदा भेलाह तँ हुनक हृदयमे खेद-जनित संशय उत्पन्न भए गेलैन्हि। ओ श्रीरामकेँ यथार्थतः नाग द्वारा बान्हल देखि ओ बूझि मनहि मन तर्क-वितर्क करए लगलाह-"जे घट-घटमे व्याप्त छथि, ब्रह्म छथि; रजोगुणसँ जे रहित छथि, माया-मोहक जनिकामे स्पर्शो नहि अछि, एहन जाहि परमेश्वरक श्रीरामक रूपमे अवतार लेबाक गप्प हम सुनने छलहुँ, ताहि राममे तँ किञ्चितो शक्ति नहि देखलहुँ! मनुष्य जनिक नामकेँ जपि-जपि भव-पाशसँ मुक्त भए जाइत

अछि, ताहि श्रीरामकें तँ एकटा तुच्छ राक्षस नागपाशमे बान्हि देलकैन्हि !" एहि प्रकारेँ गरुड़जी विचार कए-कए अपन मनकें कएक तरहें बुझएबाक चेष्टा कएल, परन्तु तइओ रहस्यक ज्ञान नहि भए सकलैन्हि, हुनक हृदयमे भ्रमक मोह पसरैत गेलैन्हि। तखन अन्तमे ओ इएह निर्णय कएल जे श्रीराम ईश्वर नहि छथि, साधारण मनुष्य छथि। एहि मोहसं व्याकुल भए ओ नारद लग गेलाह तथा अपन संशय हुनका कहि सुनओलथिन्ह। हुनक शङ्का सूनि श्रीनारदजी दयासँ द्रवीभूत भए कहलथिन्ह—"गरुड़जी ! सुनू, श्रीरामक माया बड़ बलवती होइत अछि जे ज्ञानीजनसबहिक चित्तकें अपहरण कए हुनकालोकनिक मनमे अनायास मोह उत्पन्न कए दैत अछि। हिनक जे माया हमरहु कएक बेर भ्रमित कए देने छल, सएह अहूँमे पसरि गेल अछि। तें हमरा कहलासँ से नहि मेटाएत। खगराज ! अहाँ ब्रह्माजी लग जाउ, ओ जे आज्ञा देथि से करू।" ई कथा कहि देवर्षि नारद श्रीरघुनाथजीक गुणगान करैत हुनक मायाक महिमाक बारं-बार वर्णन करए लगलाह।

नारदजीक विचारानुसार गरुड़जी ब्रह्माजी लग गेलाह ओ हुनकहु अपन संशय कहि सुनाओल। गरुड़जीक शङ्का सूनि ब्रह्माजी सबसँ पहिने अपन माथकेँ झुकाए श्रीरामकेँ प्रणाम कएल, पश्चात् मनहि मन हुनक मायाक प्रभावक महत्त्व पर विचार करैत सुन्दर वाणीमे हुनका कहल-

थिन्ह—"वैनतेय! अहाँ सीधे शंकरजी लग चल जाउ, ओएह अहाँक सन्देहक निवारण कए सकैत छथि।" गरुड़जी ब्रह्माजीक सम्मति पाबि लगले अत्यन्त तीव्र वेगसँ महादेव शंकरजी लग पहुँचि हुनक चरण पर अपन माथ टेकि देल तथा अपन सन्देहक विषयमे कहल। तखन शंकरजी कहल-थिन्ह—गरुड़! हम तँ कुवेरजीक ओहि ठाम जाए रहल छी। एहि सन्देहक निवारण शीघ्रतामे सम्भव नहि थिक। एहि प्रकारक संशयक तखनहिँ नाश भए सकैत अछि, जखन किछु काल धरि सत्सङ्ग कएल जाए। अतः अहाँकेँ हम ओतए पठबैत छी जतए नित्य भगवान्‌क कथा होइत अछि। ओहि कथाकेँ ओतए जाए सुनू, अहाँक सब सन्देह दूर भए जाएत तथा श्रीरामक चरणमे अत्यन्त स्नेह जागत। एतएसँ उत्तर दिसि एकटा सुन्दर नील-पर्वत छैक। ओही ठाम सुशील काकभुशुंडीजी रहैत छथि। ओ श्रीरामक परम भक्त, ज्ञानी तथा सर्वगुण-सम्पन्न छथि एवं वयस सेहो बड़ वेशी छैन्हि। ओ निरन्तर श्रीरामक कथा कहैत छथि, जकरा सुनबाक हेतु नाना प्रकारक सुन्दर-सुन्दर श्रेष्ठ पक्षीसब आदरक सङ्ग हुनका घेरने रहैत छैन्हि। अहाँ ओतहि जाउ ओ हुनकहिसँ भगवान श्रीरामक गुणमय चरित्र-कथाक श्रवण करू, अहाँक सबटा संशय-सन्ताप नष्ट भए जाएत।" देवाधिदेव महा-देवक सार्थक वचन सूनि गरुड़जी अत्यन्त हर्षित भए हुनक

प्रणाम कए महात्मा काकभुशुण्डीक ओहि ठाम सत्सङ्गक हेतु विदा भेलाह ।

उत्तर दिशामे सुमेरु-पर्वतसँ बहुत दूर पर एकटा अत्यन्त सुन्दर नील-पर्वत छलैक, जाहि पर चारि गोट सुन्दर ओ आलोकित होइत स्वर्णमय शिखर छल । ओहि चारू शिखर पर एक-एकटा बर, पीपर, पाकरि ओ आमक पैघ-पैघ गाछ छलैक । ओहि पर्वत पर एकटा सरोवर छल जे मणिमय सीढ़ीसँ युक्त छल । सरोवरमे शीतल, निर्मल ओ मधुर जल भरल छल, जाहि मध्य रङ्ग-विरङ्गक कमल फुलाएल छल, हंस-गण कलरव करैत रहैत छल तथा भमरासब गुनगुनाइत रहैत छल ! ओही ठाम महात्मा काकभुशुण्डीजी रहैत भग-वान्क भजन करैत छलाह । पीपरक गाछक नीचाँ ओ अपन इष्ट बालक-रूप श्रीरामक ध्यान करैत छलाह, पाक-रिक नीचाँ जप-यज्ञ करैत छलाह, आमक छायामे मानसी-पूजा करथि तथा बरक नीचाँमे भगवान्क कथा सुनबैत छलाह । ओतए अनेक पक्षी आबि श्रीरामक कथाकेँ सूनि तकरा आनन्दपूर्वक गबैत छल ।

गरुड़जी ओतहि पहुँचलाह तँ नील-पर्वतक दर्शन मात्रसँ मन प्रसन्न भए गेलैन्हि, हुनक सबटा माया, मोह ओ चिन्ताक नाश भए गेलैन्हि । पोखरिमे स्नान ओ जलपान कए ओ बरक गाछक तर गेलाह, जतए बूढ़-बूढ़ पक्षीसभ श्रीरामक मधुर चरित्र सुनबाक हेतु एकत्र छल । काकभुशुण्डीजी

कथा आरम्भ करिबहिँ पर छलाह ता गरुड़जी सेहो ओतए पहुँचि गेलाह। पक्षिराजकेँ आएल देखि पक्षिसमाज-सहित काकभुशुण्डजी बड़ हर्षित भेलाह। ओलोकनि गरुड़जीक बड़ आदर-सत्कार करैत कुशल-समाचार पूछि बैसबाक हेतु सुन्दर आसन देल। हुनक आदरपूर्वक पूजा कए काक-भुशुण्डीजी मधुर वचनमे पुछलथिन्ह—"स्वामी खगराज! अपनेक दर्शनसँ हम धन्य भए गेलहुँ। प्रभो! अपनेक आग-मन कोन अभिप्रायसँ भेल अछि से कहल जाओ, आज्ञा देल जाओ।" पक्षिराज गरुड़जी काकभुशुण्डीजीक प्रश्न सूनि अत्यन्त आदरपूर्वक उत्तर देलथिन्ह—"अहाँक जीवन कृतार्थ अछि जे अहाँक प्रशंसा स्वयं महादेवजी कएल अछि। तात! हमर एतए आगमनक अभिप्राय सुनू; जाहि कार्यक हेतु एतए हम आएल छी से अहाँक दर्शन मात्रसँ पूर्ण भए गेल; हमर मोह, संशय ओ नाना प्रकारक भ्रम दूर भए गेल। हे ज्ञानीलोकनिमे श्रेष्ठ काकभुशुण्डीजी! आब अहाँ हमरा अत्यन्त पवित्र, सुखद तथा दुःखसमूहकेँ नाश कएनिहार श्रीरामक कथा आदरपूर्वक सुनाबी।" गरुड़जीक नम्र, सरल, सुन्दर एवं अत्यन्त प्रेमसँ युक्त सुखद वचनकेँ सूनि काकभुशुण्डीजीक मन उत्साहसँ भरि गेल एवं ओ सबसँ पहिने श्रीरामक चरित्र, तत्पश्चात् नारदक अपार मोह, पुनः रावणक अवतारक वर्णन कए श्रीरामक अवतारक कथा कहल।

काकभुशुण्डीजी सबसँ पहिने गरुड़जीकेँ श्रीरामचन्द्रजीक बाललीलासबहिक अनेक रीतिएँ वर्णन कएल. तत्पश्चात श्रीरामक विश्वामित्रक संग जाएब, विवाह होएब, पुनः मिथि-लासँ घुरला उत्तर अभिषेकक प्रबन्ध तथा कैकेयी द्वारा राजा दशरथसँ दुइ वरदान माँगि हुनकर वनवास-गमनक कथा कहल। राम-चरित्रक आगाँ वर्णन करैत श्रीरामक वन-गमन, गुहक प्रेम तथा सुरसरि गंगानदीकेँ पार कए प्रयाग होइत वाल्मीकि प्रभृति ऋषिमुनिसँ भेँट करैत हुनक चित्रकूटमे वास करबाक सब वृत्तान्त खग-कुल-केतु काकभुशुण्डीजी खगराज गरुड़जीकेँ कहि सुनओलथिन्ह। पुरवासीसबहुक सङ्ग भरतजीक चित्रकूटमे आबि श्रीरामजीकेँ राज्य-ग्रहण करबाक आग्रह तथा हुनक स्वर्ण-पादुका लए अयोध्या घुरि जएबाक कथा तँ ओ विलक्षण रीतिएँ भक्तिपूर्वक कहल। पुनः ओ श्रीरामक दण्डकारण्य जाएब, विराधक वध, अत्रि-अगस्त्यसँ सत्सङ्ग, जटायुक सङ्ग मित्रता तथा पञ्चवटीमे वास करबाक वृत्तान्तक वर्णन कएल। तदुत्तर शूर्पणखाकेँ नाक-कान काटब, खरदूषण प्रभृति राक्षसक वध एवं रावणक द्वारा सीताक अपहरणक कथा कहल। आगाँक कथा कहैत ओ सीताक हेतु रामक विरह, सुग्रीवक हेतु वालिक वध, हनु-मानजी द्वारा सीताक अन्वेषण, सेतु बान्हि समुद्रकेँ पार करब तथा मेघनाद, कुम्भकरण प्रभृतिक सङ्ग राक्षसराज रावणक वध, विभीषणक राज्यारोहण एवं विभीषण द्वारा प्रदत्त

पुष्पक विमान पर चढ़ि श्रीरामक अयोध्या घुरबाक आदि सम्पूर्ण रामायणक कथा वायस-तिलक काकभुशुण्डीजी गरुड़जीकेँ कहलथिन्ह ।

सम्पूर्ण राम-कथा सूनि पक्षिराज अत्यन्त उत्साहित भए काकभुशुण्डीजीकेँ कहलथिन्ह—"श्रीरघुनाथजीक संम्पूर्ण चरित्र सूनि हमर सन्देह मेटाए गेल । काकशिरोमणि ! ई अहाँक दयासँ भेल । युद्धमे इन्द्रजीत द्वारा नागपाशसँ श्रीरामकेँ बान्हल देखि हमरा बड़ संशय भए गेल छल जे श्रीराम तँ चिदानन्द स्वरूप छथि, फेर ओ कोना नागपाशसँ पीड़ित भेलाह । हुनक मानववत् चरित्र देखि हमरा बड़ पैघ सन्देह भए गेल छल, अत्यधिक मोहमे पड़ि गेल छलहुँ । आब हम बुझैत छी जे प्रभु श्रीराम हमरा भ्रमित कए हमरा पर अत्यधिक कृपा कएल । जे रौदक व्याकुलता जनैत अछि, सएह तँ गाछक छाया कतेक शीतल होइत अछि, से बूझि पबैत अछि । यदि हमरा अत्यन्त मोह नहि होइत तँ अहाँक सत्सङ्ग कोना होइत ? श्रीरामक कृपासँ अहाँक दर्शनक सौभाग्य भेल ओ अहाँक कृपासँ हमर सब सन्देहक निवारण भए गेल ।"

पक्षिराज गरुड़जीक विनम्र ओ अनुरागसँ ओत-प्रोत वचन सूनि काकभुशुण्डीजीक शरीर आनन्देँ रोमाञ्चित भए उठल, आँखिमे आनन्दाश्रु भरि अएलैन्हि तथा ओ बड़ प्रसन्न भेलाह । तखन काकभुशुण्डीजी हुनका कहलथिन्ह—"नाथ ! अपने सब प्रकारेँ हमर पूज्य थिकहुँ, कारण, अपने श्रीरघु-

नाथजीक कृपापात्र छी। अपनेकें ने तँ संशय अछि, ने मोह अछि आ ने माया अछि! अपने तँ हमरा पर कृपा कएल अछि। पक्षिराज! मोहक बहाना बनाए श्रीरामजी अपनेकें एतए पठाए हमरा पैघत्व प्रदान कएलैन्हि अछि। हे पक्षीलोकनिक स्वामी! नारदजी, ब्रह्माजी, शिवजी ओ सनकादि सन मुनिश्रेष्ठ एवं आत्मतत्वक ज्ञातालोकनि सेहो जखन मोहान्ध भए गेलाह, तँ अपने यदि मोहमे पड़लहुँ तँ एहिमे आश्चर्य कोन? संसारमे एहन के अछि जे काम ओ क्रोध द्वारा नचाओल नहि जाइत अछि? एहन के अछि जे तृष्णासँ एहि जगमे बताह नहि बनल अछि? ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, पण्डित एहन के छथि जनिक लोभसँ दुर्दशा नहि भेल होइन्हि, लक्ष्मीक मदसँ के नहि टेढ़ भेलाह, पद-प्रभुतासँ के नहि बहिर भेलाह अछि तथा के नहि मृगनयनीक नेत्र-कटाक्ष रूपी बाणसँ आहत भेलाह अछि?" एहि प्रकारेँ मायामोहक विस्तृत वर्णन करैत काकभुशुण्डीजी बजलाह—"जे माया सम्पूर्ण संसारकें नचबैत रहैत अछि ओ तइओ अलक्ष्य रहैत अछि, से श्रीरामजीक भ्रुकुटीक इसारा पबितहिँ अपन समाजक सङ्ग स्वयं नाचए लगैत अछि। सएह सच्चिदानन्द-घन अज, विज्ञान, रूप ओ बलक धाम श्रीराम छथि। ओएह प्रभु व्यापक ओ व्याप्य, अखण्ड, अनन्त, सम्पूर्ण, निर्गुण, निन्दा, दोष ओ ममतासँ रहित, समर्थ, घट-घटमे निवासी

निर्मल ओ अविनाशी छथि। हुनका लग मोहक वास नहि अछि ओहिना जेना सूर्यमे अन्हार नहि अछि। श्रीराम भक्तसबहिक हेतु शरीर धारण कए मनुष्य जकाँ व्यवहार करैत छथि। जेना कोनो नट नाना प्रकारक भेष धारण कए ताही अनुरूप व्यवहार करैत अछि, मुदा स्वयं तँ से नहि भए जाइछ ? उरगारि ! तहिना श्रीरामचन्द्रजी नरनाट्य कएल जे हुनक भक्तलोकनिकेँ सुख प्रदान करैत अछि, मुदा आसुरी प्रकृतिक मनुष्यकेँ मोहित कए दैत अछि। गरुड़जी ! जेना दिग्भ्रमितकेँ सूर्य पश्चिममे उगल बूझि पड़ैत छैक, नाओ पर चढ़ल लोककेँ संसार चलैत लगैत छैक तथा मोहाभिभूत मनुष्य अपनाकेँ अचल-स्थिर बुझैत अछि, तहिना परब्रह्म श्रीरामकेँ मनुष्य मानब भ्रम थिक। जे काम, क्रोध, मद ओ लोभमे लीन तथा घर-गृहस्थीमे आसक्त छथि, से श्रीरघुनाथजीक वास्तविक स्वरूपकेँ कोना बूझि सकैत छथि ? हे गरुड़जी ! श्रीरामक प्रभुत्वक विषयमे सुनू, हमरहु कोना मोह भेल, से कथा हम कहैत छी। श्रीरामक अहाँ कृपापात्र छी, भगवान्‌क गुणक प्रति अहाँकेँ बड़ प्रेम अछि। हमरहु से अछि, तेँ अहाँसँ हम किछु नुकाएब नहि।"

एतबा कहि परमज्ञानी काकभुशुण्डीजी श्रीरामक स्वभावक वर्णन करैत कहए लगलथिन्ह—"श्रीरामजी अपन भक्तमे अभिमान नहि रहए दैत छथि, कारण, अभिमानहिसँ नाना

प्रकार दुःख ओ शोक मेटैत छैक, इएह बारंबार जन्म-मरणक मूल-कारण थिक। हुनक भक्त अभिमानक कारणेँ भव-क्लेशमे नहि पड़ैन्हि, तेँ ओ दयासागर श्रीराम तकरा ओहिना दूर करैत छथि जेना बच्चाकेँ घाओ भए गेला पर ओकर माए हृदयकेँ कठोर कए ओकरा चिरबाए दैत छैक। यद्यपि बच्चाकेँ पहिने कष्ट होइत छैक, अधीर भए-भए कनैत अछि, तथापि रोगकेँ छोड़एबाक हेतु माए ओकर कानब दिसि ध्यान नहि दैत छैक। एहिना भक्तवत्सल भगवान् श्रीराम अपन भक्तसबहिक अभिमानकेँ मेटबैत छथि ओ भक्त अपन भ्रमकेँ छोड़ि भगवान्‌क भजन करैत अछि।

"हे खगेश! आब हम अपन मूर्खता तथा श्रीरामक कृपाक कथा कहैत छी, से सुनू। जखन-जखन श्रीराम मनुष्य-देह धारण कए पृथिवी पर अपन भक्तगणक मनोरंजनार्थ लीला करैत छथि, तखन-तखन हम अयोध्या जाए हुनक बाल-चरितकेँ देखि आनन्दित होइत छी। हुनक जन्म-महोत्सव देखैत छी ओ पाँच वर्ष धरि ओतहि रहैत छी। बालक-रूपमे श्रीराम हमर इष्ट-देवता छथि, जाहि बालक-रूपी श्रीरामक शरीरमे असंख्य कामदेवक समान कान्ति रहैत छैन्हि। हे साँपसबहिक शत्रु श्रीगरुड़जी! छोट कौआक शरीर धारण कए भगवान्‌क सङ्ग-सङ्ग रहैत हुनक बालचरित देखि अपन नेत्रकेँ हम सुफल करैत छी। बालकक अवस्थामे ओ जतए-जतए जाइत छथि, ततए-ततए हमहूँ हुनका सङ्ग

उड़ल-उड़ल जाइत छी, आङ्गनमे फेकल हुनक ऐँठिकेँ खाइत छी। एक बेर ओ अद्भुत बाल-चरित कए हमरा पर बड़ दया कएल।" श्रीरामक ओहि मनोहर बाल-रूपक स्मरण भेलासँ अलौकिक आनन्दक कारणेँ काकभुशुण्डीजीक आँखि मुना गेलैन्हि, शरीर रोमाञ्चित भए उठलैन्हि तथा वाणी अवरुद्ध भए गेलैन्हि। तेँ क्षण भरिक हेतु ओ चुप भए गेलाह।

किछु काल चुप रहि जखन काकभुशुण्डीजी सावधान भेलाह तँ पक्षिराज गरुड़जीकेँ फेर कहए लगलथिन्ह—"पक्षिराज! अपन माए-बापकेँ सुख देबाक हेतु श्रीराम अपन तीनू भाइ भरत, लक्ष्मण ओ शत्रुघ्नक सङ्ग बालकौतुक करैत महाराज दशरथक आङ्गनमे खेलाइत विचरण करैत छलाह। श्रीरामक कोमल श्याम-वर्णक शरीर मरकत-मणिक समान छलैन्हि, अङ्ग-अङ्गमे अगणित कामदेवक कान्ति भरल छलैन्हि तथा दूहू चरण कोमल अरुण कमलक सदृश लगैत छलैन्हि। तरबामे वज्र आदि चारि गोट चिह्न चित्रित छलैन्हि। पाएरमे काड़ा ओ डाँरमे हरकस शोभित रहैन्हि जाहिसँ मधुर शब्द बहार होइत छल। तरहत्थी हुनक छल लाल दपदप, नह ओ हाथक अँगुरी अपन सुन्दरतासँ मनकेँ हरि लैत छल। बाल-सिंहक कान्ह जकाँ हुनक कान्ह छलैन्हि ओ गर्दनि शंखक समान त्रिरेखासँ युक्त। चिबुक बड़ सुन्दर छलैन्हि तथा मुखक शोभाक तँ वर्णन नहि हो। ठोढ़

लाल ओ दूटा दाँत उज्जर-उज्जर। चन्द्रमाक किरण जकाँ मन्द-मन्द हँसथि तँ आगाँक दूनू दाँत स्पष्ट भए हुनक अद्भुत बाल्यरूपकेँ प्रकट करैत छल। बाजथि ओ तोतराकेँ, एक एक शब्द बड़ो बड़ो कालेँ। हुनक गाल ओ नाक बड़ मनोहर छलैन्हि, नील कमल सन आँखि छलैन्हि, ललाट पर गोरोचनक तिलक लागल छलैन्हि, टेढ़ भऔँह, कान सम ओ सुन्दर तथा केश औँठिआ छलैन्हि। अत्यधित पातर पीताम्बर पहिरने तथा गरामे बघनखा धारण कएने श्रीराम अद्भुत रीतिएँ शोभायमान भए रहल छलाह। गरुड़जी! हम दुबकिकेँ गाछ पर बैसल-बैसल श्रीरामक अलौकिक बाल्य-सुन्दरताकेँ जी भरि दर्शन करए लगलहुँ। तखनहिँ सूर्यवशी-चक्रवर्ती श्री दशरथजी अपन पूजा सम्पन्न कए ओतए उपस्थित भेलाह तँ चारू पुत्रकेँ आङ्गनमे खेलाइत देखि हुनक हर्षक सीमा नहि रहल। ओ चारू भाइकेँ आलिङ्गन करैत बारंबार चुम्बन लेल तथा हर्ष-गद्गद् स्वरमे कहए लगलथिन्ह—"हे वत्स! अहीँक वंशमे सगर, अंशुमान, दिलीप, अम्बरीष, मान्यधाता, रघु ओ अज सन-सन महाधनुर्धर वीर उत्पन्न भेल छथि। हम अजक सन्तान छी ओ अहाँ चारू भाइ हमर बेटा थिकहुँ। तेँ अहूँ लोकनि कुल-क्रमागत महान् धनुर्धर विद्यामे निष्णात बनू।' ई कहि ओ खेलाइते-खेलाइते श्रीरामकेँ भरत, लक्ष्मण ओ शत्रुघ्नक सङ्ग बाणक सन्धान करब सिखबए लगलथिन्ह। ताबत महाराज दशरथक बड़ो

महारानी कौसल्या सुमीत्रा ओ कैकेयीक सङ्ग ओतए पहुँचि अपन बेटासभक सङ्ग खेलाए लगलीह। श्रीराम अपन भाइ सबहिक सङ्ग छोट-छोट धनुष-बाण हाथमे लए ठुमुकि-ठुमुकि चलए लगलाह। तत्पश्चात् महाराज् दशरथ अपन राजकाजक हेतु बहार चल गेलाह, महारानी सेहो तीनू भाइकें मालपूआ दए अपन-अपन रनिवास चल जाइत गेलीह।

"श्रीराम दशरथक आङ्गनमे कुदैत-चलैत बाल-क्रीड़ा करैत अपनहि छाया देखि नाचए लगैत छलाह। एहन बालक श्रीराम जखन किलकारी मारि हमरा दिसि ताकथि तँ हमरा बड़ प्रिय लगैत छल। हे पक्षिराज गरुड़! हमरा सङ्ग ओ नाना प्रकारक बालक्रीड़ा करथि, जकरा कहितहुँ हमरा बड़ लाज लगैत अछि। जखन किलकारी दैत ओ हमरा पकड़बाक हेतु खेहारथि तँ हम भागि जाइ। पक्षी-स्वभावक कारणेँ हमरा भगैत देखि ओ हमरा मालपूआ देखाए-देखाए लोभाबथि। जखन हम पूआक लोभेँ हुनक निकट जाइ तँ प्रभु हँसए लागथि। हे हरिभक्त वैनतेय! काक-स्वभावसँ वशीभूत भए ओहि दिन हुनक हाथमे मालपूआ देखि हमरा रहल नहि गेल। श्रीरामकेँ असावधान देखि हम ऊपर तकलहुँ, नीचाँ तकलहुँ, दहिना-बामा ताकि एकहि बेर बीच आङ्गनमे आबि श्रीरामक मालपूआबला हाथ पर झपटलहुँ, हुनक हाथकेँ नोछरैत मालपूआ लए उड़ि पड़ाए गेलहुँ। ओ जोर जोरसँ कानए लगलाह तँ हुनक

पाएर पकड़ि चुप करबाक निमित्त हुनका लग जाए लगलहुँ तँ हमर भयसँ ओ भागए लगलाह, पाछाँ फिरि देखथि जे हम हुनक पाछाँ पाछाँ अबैत तँ ने छिऐन्हि ।

"एहि प्रकारक साधारण मनुष्यक बच्चा जकाँ हुनक चरित्र देखि हमरा मोह भए गेल जे चित्तानन्द प्रभुक ई कोन चरित्र भेल ? गरुड़जी ! मनमे एतबहि संशय उत्पन्न भेलासँ श्रीरघुनाथजीक प्रेरणासँ हमरा माया ग्रसित कए लेलक । मुदा हुनक ई माया हमरा कष्टप्रद नहि भेल आओर ने ओहिसँ हम संसारक जालमे फँसबे कएलहुँ । एकर दोसरे कारण अछि, हरिवाहन वैनतेय ! से सावधान भए सूनू । श्रीराम हमरा भ्रमक कारणेँ चकित भेल देखि हँसए लग-लाह । ओहि कौतुकक भेद केओ नहि बुझलक, भाइसब ओ माए-बाप सेहो नहि बुझलथिन्ह । जनिक श्याम शरीर ओ लाल लाल तरहत्थी छलैन्हि, से प्रभु हमरा पकड़बाक हेतु हाथ ओ ठेहुनसँ चलैत दौड़लाह । हम भागए लगलहुँ तँ हमरा पकड़बाक हेतु अपन बाँहि पसारि देलैन्हि । मुदा हम कतबहु आकाशमे दूर उड़लहुँ, श्रीरामक भुजा ओ हम-रामे दुइए अँगुरीक बीच छल । जतेक दूर धरि हमरा चढ़-बाक सामर्थ्य छल, हम ततेक दूर धरि ऊड़िकेँ गेलहुँ, तथापि ओतहु श्रीरामक भुजाकेँ देखि हम व्याकुल भए उठलहुँ । तखन हम भयभीत भए आँखि मूनि लेल, फेर आँखि खोल-लहुँ तँ लगले अयोध्या पहुँचि गेलहुँ । हमरा देखि भगवान्

श्रीराम हँसए लगलाह। हुनकर हँसितहिँ हम हुनक मुँहमे चल गेलहुँ। हे पक्षिराज गरुड़ ! सूनू, हुनक पेटमे हम बहुतो ब्रह्माण्डक समूह देखल, एकसँ एक सुन्दर ओ विलक्षण अनेक लोकक दर्शन कएल।

"हम श्रीरामक पेटमे करोड़ो ब्रह्मा ओ शिव, अगणित तारा, सूर्य ओ चन्द्रमा, अगणित लोकपाल ओ यमराज, अगणित काल, अगणित विशाल पर्वत ओ विस्तृत पृथिवी, अगणित समुद्र, नदी, पोखरि ओ वन, असंख्य ओ अनेक प्रकारक सृष्टिक विस्तार देखल; देवता, मुनि, सिद्ध, नाग, नर, किन्नर एवं जड़-चेतन-सहित चारू प्रकारक जीवकेँ देखल। एहनो कतेक वस्तुकेँ देखलहुँ जे नहि तँ पहिने कहिओ देखनहिँ छलहुँ आने जकर विषयमे सुननहिँ रही, तखन तकर वर्णन कोना कए सकैत छी ? एक एक ब्रह्माण्डमे हम एक-एक सए वर्ष रहलहुँ। एहि प्रकारसँ हम अनेक ब्रह्माण्डक दर्शन करैत घुमैत रहलहुँ। लोक-लोकमे भिन्न-भिन्न प्रकारक ब्रह्मा ओ भिन्न-भिन्न प्रकारक विष्णु, शिव, मनु, दिक्पाल मनुष्य, गन्धर्व, भूत, बेताल राक्षस, पशु, पक्षी, साँप, अनेक जातिक देवता एवं दैत्य तथा अनेक जातिक आनो आनो जीवकेँ देखलहुँ। अनेक पृथिवी, नदी, समुद्र, पोखरि, पर्वत एवं अन्यान्य भौतिक सृष्टि ओतए आने आने तरहक छल। प्रत्येक ब्रह्माण्डमे अपनहु रूपकेँ देखैत अनेक अनुपम वस्तु देखल। प्रत्येक लोकमे पृथक् पृथक अयोध्या, पृथक् पृथक् सरयू नदी

ओ पृथक् पृथक् नर-नारी छल। तात! सूनू, ओतए श्री दशरथजी, कौसल्याजी एवं भरतजी आदि भाइ अनेक रूपक छलाह। प्रत्येक ब्रह्माण्डमे हम रामावतार ओ हुनक बाल्य-क्रीड़ा देखैत फिरैत रहलहुँ। गरुड़जी! हम भिन्न-भिन्न ओ विचित्र वस्तु सबकेँ देखैत अगणित लोकमे घुमलहुँ, मुदा श्रीरामजीकेँ अन्य रूपमे नहि देखल। मोहरूपी पवनसँ प्रेरित हम भुवन-भुवनमे ओएह बाल्य स्वभाव, ओएह शोभा एवं ओहने दयालु रघुवीरक दर्शन कएल। एहि प्रकारेँ अनेक ब्रह्माण्डमे बौआइत मानू एक सए कल्प बीति गेल तँ अपन आश्रम फिरि किछु समय व्यतीत कएल। अयोध्यामे अपन प्रभु श्रीरामक जन्मक विषयमे सुनल तँ ओतए दौड़-लहुँ, ओतए पहुँचि हुनक जन्म-महोत्सव देखलहुँ एवं ओएह सब कएलहुँ जकर वर्णन हम कए चुकलहुँ अछि।"

श्रीरामजीक पेटमे हम बहुतो जगतकेँ देखल जे देखिबहि योग्य छल, जकर वर्णन नहि कएल जाए सकैछ। हम बारंबार विचार करी जे हमर बुद्धि मोह रूपी पाँकमे फँसल अछि, मोहक मलिन आवरणसँ व्याप्त अछि। दुइए घड़ीमे हम सब किछु देखि लेल, मनमे विशेष मोह भेलासँ हम थाकि गेलहुँ। हमरा विकल देखि दयालु श्रीराम बड़ जोरसँ हँसलाह। गरुड़जी! सूनू, हुनक हँसितहिँ हम हुनक मुँहसँ बहार आबि गेलहुँ, तँ फेर ओ ओहिना हमरा सङ्ग बाल्य कौतुक करए लगलाह। हम अपन मनकेँ कएक तरहेँ बुझाबी,

लइओ हमरा शान्ति नहि भेटए। हुनक प्रभुता-जनित बाल-चरितकें देखि हम अपन सुधि-बुधि बिसरि गेलहुँ त हुनक शरणापन्न होइत हम हुनक चरण पर खसलहुँ। मुँहसँ बोल नहि फुटैत छल, तथापि कहुना जोरसँ प्रार्थना कएल—'आर्त्तजनरक्षक श्रीराम! हमर रक्षा करू, हमर रक्षा करू; हमरा अपन शरणमे लए लिअ।' प्रभु हमर प्रेमक व्याकुलता देखि अपन मायाक प्रबलता रोकि अपन कर-कमल हमर माथ पर राखि हमर सब शोककें हरि लेलैन्हि, सेवक-गणक सुखदाता दयालु श्रीराम हमरा विमोहसँ रहित कए देलैन्हि। अतः हुनक प्रभुत्वक विषयमे विचारि-विचारि हमर मनमे जेहन असीमित आनन्द भेल, से एखनहु धरि ओहिना अछि। तखन हम प्रेमाश्रुपूर्ण नेत्र ओ रोमाञ्चित शरीरसँ युक्त भए हुनक अनेक प्रकारें प्रार्थना कएल। हमर प्रेम-पूर्ण वाणी सुनि तथा हमरा अपन दीनभक्त बूझि श्रीराम सुखद, गम्भीर एवं कोमल वचन कहल—'काकभुशुण्डीजी! हम बड़ प्रसन्न भेलहु, हमरासँ वर माँगू। हम आइ अणिमादि आठहु प्रकारक सिद्धि तथा ऋद्धि एवं सुखक राशि मोक्ष, ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान आओर जे कोनहु वस्तु संसारमे मुनिलोकनिक हेतु सेहो दुर्लभ अछि, से अहाँकें देब। जे इच्छा हो, से माँगि लिअ।'

"प्रभु श्रीरामक वचन सूनि हम मनहि मन बिचारए लगलहुँ—'प्रभु तँ हमरा सब किछु देब तँ कहलैन्हि, मुदा

भक्ति देबाक विषयमे तँ नहि कहलैन्हि। भक्तिक बिना तँ सब गुण ओ सुख स्वादहीन होइत अछि जेना नोनक बिना व्यंजन-पदार्थ! बिना भक्तिक सुख कोन काजक?' ई विचारि गरुड़जी! हम श्रीरामकें कहलिऐन्हि—'प्रभो! यदि अहाँ प्रसन्न भए हमरा वरदान दैत छी, हमरा पर दया ओ स्नेह करैत छी तं हे स्वामी! हमरा जे पसिन्द अछि, से वर मँगैत छी। अहाँ उदार छी ओ सबहिक मनक बात सेहो जनैत छी। हे भक्तगणक हेतु कल्पवृक्ष! हे शरणागत-वत्सल कृपालु! हे समग्र सुखक निवास-स्थल प्रभु! हमरा पर दया-कए अपना प्रति ओएह शुद्ध भक्ति दिअ, जकर विषयमे वेद ओ पुराण वर्णन करैत नहि अघाइत अछि, जकरा योगीश्वर मुनिलोकनि तकैत रहैत छथि तथा जे भक्ति अहींक कृपासँ कदाचित् केओ-केओ जन प्राप्त कए सकलाह अछि।' हमर प्रार्थना सूनि रघुकुलशिरोमणि श्रीराम 'तथास्तु' कहि हमरा कहलैन्हि—'काक! सूनू, अहाँ तँ स्वभावहिसँ चतुर छी, तें एहन वरदान माँगि लेब अहींक योग्य भेल। सब सुखक खानि भक्ति अहाँ माँगि लेल अछि, अतः संसारमे अहाँसँ वेशी भाग्यवान् केओ नहि अछि। जाहि भक्तिकें प्राप्त करबाक निमित्त योगी-यतीलोकनि योगानलमे अपन शरीरकें जरबैत रहैत छथि तइओ प्राप्त नहि कए पबैत छथि, सएह अहाँ माँगल। अहाँक चतुरता देखि हम अहाँ पर मुग्ध भए गेलहुँ अछि। हे काक! आब अहाँकें

हमर कृपासँ भक्ति, ज्ञान, योग, चरित्र प्रभृतिक रहस्य सहजहिँ बुझल भए जाएत, मायासँ उत्पन्न कष्ट अहाँके पीड़ित नहि करत। हमरा भक्तजन सदैव प्रिय रहलाह अछि से बूझि हमर चरण पर अहाँ अटल प्रेम करैत रहब। हे काक! आब हमर वाणी सुनू, सूनि मनमे धारण करू एवं सब किछु छोड़ि हमर भजन करू। हम अपन मायासँ संसारमे अनेक स्थावर-जंगम जीव बनओने छी ओ से सब हमर बड़ प्रिय अछि। मनुष्य हमरा सबस अधिक प्रिय अछि, मनुष्यहुमे ब्राह्मण, ब्राह्मणहुमे वेदज्ञ ओ वेदज्ञहुमे वेदक अनुसार कर्म कएनिहार हमरा वेशी प्रिय अछि। ताहुसँ अधिक प्रिय अछि वैरागी। वैरागीसँ अधिक प्रिय अछि ज्ञानी ओ विज्ञानी। मुदा सबसँ अधिक प्रिय छथि हमरा अपन सेवक, जनिक गति हमरहीटा छिऐन्हि। अहाँकेँ पुनः कहैत छी, सेवक सन हमरा आन केओ प्रिय नहि अछि। भक्ति-युक्त नीचसँ नीच व्यक्ति हमरा प्राणहुसँ अधिक प्रिय छथि, इएह हमर स्वभाव थिक। पवित्र, सुशील ओ सद्बुद्धि-सम्पन्न सेवक ककरा प्रिय नहि लगैत छैक? श्रुति-पुराणहुमे इएह नीति वर्णित अछि। एकहिटा पिताकेँ कएटा पुत्र होइत छैन्हि ओ सभक स्वभाव भिन्न-भिन्न प्रकारक रहैत छैन्हि। यद्यपि पिता सब पुत्रकेँ समाने प्रेम करैत छथि, मुदा ओ पुत्र हुनका प्राणक समान प्रिय होइत छथिन्ह जे मन, वचन ओ कर्मसँ हुनक भक्त

होइत छथि। तहिना सम्पूर्ण सृष्टिसँ हमरा समान प्रेम अछि, मुदा ओ व्यक्ति हमरा विशेष प्रिय छथि जे तन-मन-वचनसँ मद-मायाकेँ त्यागि हमर भजन करैत छथि। तेँ खग! हमर सत्य-कथा सूनि हमर भजन करैत रहू। हमर निरन्तर स्मरण ओ भजन करैत रहब तँ अहाँकेँ कहिओ काल ग्रस्त नहि करत।' गरुड़जी! प्रभु श्रीरामक वचनामृतक पान कए हम तृप्त भए गेलहुँ। हमर शरीर रोमाञ्चित भए गेल ओ हृदयमे एहन आनन्द भेल जकर अनुभूति मात्र कएल जाए सकैत अछि, तकर वर्णन करब सम्भव नहि अछि।

"श्रीराम हमरा बुझाए-सुझाए पुनः अपन शिशु-लीलामे लीन भए गेलाह। अपन नेत्रमे नोर भरि ओ मुहकेँ उदास कए अपन माए दिसि तकलैन्हि। हुनक माए अपन बेटाकेँ भूख लागल बूझि हुनका दिसि दौड़लीह ओ भरि पाँजकेँ पकड़ि छातीसँ सटाए लेलैन्हि, अपन कोरामे बैसाए मधुर मधुर वचन कहि कहि सन्तुष्ट करैत दूध पिआबए लगलीह, हुनक सुन्दर चरितक गुण-गान करए लगलीह। जे स्वयं लोककेँ सुख दैत छथि ओ जे स्वयं कल्याण-रूप छथि से त्रिपुरारि महादेवजी जाहि सुखक हेतु अमङ्गल-वेष धारण कएल, ताहि सुखमे अयोध्याक नर-नारी दिन-राति तल्लीन रहैत छथि। ओहि सुखक लवलेश मात्र जे जन स्वप्नहुमे पाबि लेलैन्हि, गरुड़जी! से जन ब्रह्म-सुखहुकेँ तुच्छ बुझए लगैत छथि।

"हम किछु दिन ओतहि अयोध्यहिमे रहलहुँ, श्रीरामक सरस बाल्य-लीलाकेँ देखैत श्रीरामक कृपासँ भक्तिक वरदान पाओल। तदुत्तर हुनक चरणक वन्दना कए आज्ञा लए अपन आश्रममे चल अएलहुँ। तहिआसँ हमरा पर माया कहिओ व्याप्त नहि भेल। गरुड़जी! हम कोना श्रीरामजी द्वारा नचाओल गेलहुँ, से सुना देलहुँ। आब हम अपन व्यक्तिगत अनुभव कहैत छी जे बिना हरिभजनक सांसारिक कष्ट दूर नहि होइत छैक। जाबत धरि श्रीरामक कृपा नहि नहि होइत अछि, ताबत धरि हुनक प्रभुत्व नहि जानल जाए सकैछ; जावत धरि हुनक प्रभुत्व नहि बुझबामे अबैत अछि, ताबत धरि विश्वास नहि होइत अछि ओ बिना विश्वासक प्रेम नहि होइत छैक। बिना गुरु ओ वैराग्यक जेना ज्ञान होएब सम्भव नहि, तहिना भगवान्क भक्तिक बिना सुख प्राप्त नहि भए सकैत अछि। सन्तोषसँ कामनाक नाश होइत अछि ओ से भेलहिँसँ लोककेँ सुख भेटि सकैछ। एहन जे कामना, से राम-भजनहिटासँ मेटाए सकैत अछि। जाहि प्रकारेँ पृथिवी-तत्वमे गन्ध-गुण रहैत अछि, तहिना श्रद्धा धर्मक निवास-स्थल थिक। विश्वासक बिना भक्ति नहि भए सकैछ आओर बिना भक्तिक श्रीरामक दया प्राप्त नहि कएल जाए सकैत अछि। जाबत हुनक कृपा नहि होइत अछि, ताबत धरि लोक माया-मोहमे फँसले रहैत अछि।

तें सब तर्क ओ संशयकें त्यागि करुणाकर श्रीरामक भजन करू।"

एतबा कहि भक्त-शिरोमणी काकभुशुण्डीजी पक्षिराज गरुड़जीकें श्रीरामक अमित महिमाक विषयमे कहए लगल-थिन्ह—"खगेश ! श्रीरघुनाथजीक महिमा, नाम, रूप ओ गुणक गाथा अमित अछि, ओ अपनहु अनन्त छथि, जकर थाह हमरालोकनिक के कहए, बड़का-बड़का बुद्धिमान ऋषिमुनि, शेषनाग, वेद अथवा स्वयं शिवजी नहि पाबि सकलाह। श्रीराम अनन्त कामदेव सन सुन्दर ओ करोड़ो दुर्गाक समान अपन असंख्य शत्रुसबहि नाश कएनिहार छथि; असंख्य इन्द्र जकाँ भोगविलास करैत छथि ओ अगणित आकाश सन हुनक विस्तार छैन्हि करोड़ो सूर्य जकाँ प्रकाशवान्, अगणित पवनक समान बलवान, अगणित चन्द्रमा सन कान्तिवान्। भव-भय-शमनकर्त्ता ओ छथि, तहिना असंख्य काल जकाँ दुस्तर, दुर्गम ओ दुरन्त तथा असंख्य अग्निक समान दुराधर्ष ओ छथि। श्रीराम असंख्य पाताल सन अथाह ओ असंख्य यमराज सन कराल छथि। हुनक नाम अनन्त तीर्थसन पवित्र अछि, जे समस्त पापकें नाश कए दैत अछि। ओ हिमालय पर्वत सन अचल ओ समुद्र सन गहीर छथि। लोकक इच्छा पुरएबामे ओ असंख्य कल्पवृक्षक सदृश छथि। ओ अनेक सरस्वती सन चतुर, अनेक ब्रह्मा सन सृष्टि-रचनामे निपुण तथा अगणित विष्णु जकाँ लोक-पालनमे समर्थ छथि। तहिना अनेक रुद्र सन

संहारकर्त्ता, अनेक कुबेर सन धनवान तथा अगणित माया जकाँ मायावी सेहो छथि। ब्रह्माण्डसबहिक बोझ उठएबामे ओ असंख्य शेषनाग जकाँ छथि। अतः कतेक वर्णन करू, श्रीरामक उपमा नहि हो, ओ अपन उपमा स्वयं अपनहिटा छथि। जेना सूर्यकेँ असंख्य भकजोगनीक सङ्ग उपमा देलहुसँ लघुते सूचित होइत अछि, तहिना अपन अपन बुद्धिक अनुसार बड़का बड़का मुनिलोकनि जे हुनक वर्णन करैत छथि, से हुनक लघुता-सूचके होइत अछि, तथापि श्रीराम अपन प्रेमपूर्ण वर्णनकेँ प्रेमपूर्वक सुनैत छथि तथा ओहीसँ प्रसन्न भए जाइत छथि। श्रीराम अमित गुणक समुद्र छथि, तखन ओकर थाह के पाबि सकैछ, के कहि सकैछ जे हुनकामे कतेक गुण कतेक मात्रामे छैन्हि ? गरुड़जी ! ई सब हम सन्तलोकनिसँ सुनलहुँ ओ तकरहि हम अहाँकेँ सुनाओल अछि। श्रीराम सदैव भावक वशोभूत रहैत छथि, करुणा-स्थल छथि; एहन सीतापति श्रीरामक भजन ममता, मद ओ मानकेँ त्यागि करब उचित थिक।"

काकभुशुण्डीजीक भगवान् श्रीरामजीक प्रसङ्ग सारगर्भित ओ मनोरम वचन सुनि पक्षिराज गरुड़जी पुलकित भए अपन पाँखिकेँ फुला लेलैन्हि, नेत्र सजल भए गेलैन्हि तथा अत्यन्त हर्षित भए श्रीरामजीक महिमाकेँ अपन हृदयमे धारण कए लेलैन्हि। अनादि ब्रह्मकेँ मनुष्यबूझि लेने छलाह, ताहि

हेतु बारबार पछताइत ओ श्रीकाकभुशुण्डीजीक चरण पर खसि पड़लाह ओ हुनकहि श्रीराम मानि प्रेम-विभोर भए गेलाह। तदुत्तर ओ कृतज्ञता व्यक्त करैत कहलथिन्ह—"हे भक्त-शिरोमणि ! केओ बिनु गुरुक भवसागरकेँ पार नहि कए सकैछ, भनहि ओ ब्रह्मा अथवा महादेव सन किएक ने भए जाए। तात! हमरा सन्देह रूपी साँप काटि लेने छल, तेँ कुतर्कक विष हमरामे व्याप्त भए गेल छल। अहाँक रूपमे भक्तजनक सुखदाता श्रीरघुनाथजीक गारुड़ी-मन्त्र हमर ओहि विषकेँ नाश कए नवजीवन प्रदान कएल अछि। अहाँक दयासँ हमर मोहक नाश भेल ओ हम उपमा-रहित राम-चरितक रहस्यकेँ बूझि सकलहुँ।" एहिना अनेक प्रकारेँ श्रीकाकभुशुण्डीजीक प्रशंसा करैत हाथ जोड़ि ओ माथ झुकाए गरुड़जी विनयपूर्वक कोमल वाणीमे बजलाह—"प्रभो! अज्ञानताक कारणेँ अहाँसँ पुछैत छी; कृपासागर! हमरा अपन सेवक बूझि हमर जिज्ञासाक निवारण करू। अहाँ सर्वज्ञ, तत्वज्ञाता, अविद्याक अन्हारसँ मुक्त, बुद्धिमान, सुशील एवं निश्छल आचरणक थिकहुँ, तँ फेर ई कौआक देह किएक पाओल? स्वामी! रामचरित-मानस अहाँ कोना पाओल? हे नाथ! हम शिवजीसँ सुनलहुँ जे अहाँक महाप्रलय भेलहुँ पर नाश नहि होएत। संसारक सकल जीव-जन्तु ओ स्वयं संसार कालक द्वारा अवश्य नहि अछि, तखन अहाँ कोना कालाधीन नहि छी? ई ज्ञानक प्रभावेँ सम्भव भेल अछि

अथवा योग-बलक कारणेँ ? अहाँक आश्रममे अबितहिँ हमर सबटा मोह नष्ट भए गेल, तकर की कारण थिक ?"

गरुड़जीक जिज्ञासा सूनि काकभुशुण्डीजी बड़ प्रसन्न भेलाह तथा अनुरागपूर्वक हुनक जिज्ञासाक समाधान करैत कहए लगलाह—"साँपसबहिक शत्रु गरुड़जी ! अहाँक बुद्धि धन्य अछि जे एहन प्रिय प्रश्न पूछल। अहाँक प्रश्न सूनि हमरा अपन पूर्व जन्म मन पड़ि गेल। तात ! हम अपन कथा कहैत छी, मनोयोगपूर्वक सूनू। हम पूर्वजन्ममे मोहक वशीभूत भए अपन जीवनकेँ नष्ट करैत रहलहुँ। हम श्रीरामक विमुख रही, तेँ कहिओ सुखक नीन नहि सुतलहुँ। हम अनेक जन्म लेल, अनेक प्रकारक योग, जप, तप, यज्ञ, दान आदि कएल। पक्षिराज ! एहन कोनो योनि नहि अछि, जाहिमे बारंबार जन्म नहि लेलहुँ। हम सब कर्म कए देखलहुँ, मुदा हमरा सुख ओ शान्ति नहि भेटल। शिवजीक कृपासँ हमरा अपन पूर्व-जन्म ओहिना स्मरण अछि। आब हम अपन पहिल जन्मक विषयमे कहैत छी, खगेश गरुड़जी ! जकरा सूनि प्रभुक चरणक प्रति अनुराग बढ़त ओ सब माया-जनित क्लेश मेटा जाएत। एक कल्पमे कलियुग नामक युग भेल, जाहिमे सबकेओ अधर्म-रत ओ वेद-विरोधी छल। ओही कलि-युगमे हम अयोध्यामे शूद्र भए जन्म लेलहुँ। मन, वचन ओ कर्मसँ हम शिवजीक भक्त, मुदा आन-आन देवतालोकनिक विरोधी छलहुँ। अभिमानी ओ धनक मदसँ मत्त हम बड़

तीक्ष्ण बुद्धिसँ युक्त छलहुँ। श्रीरामजीक राजधानीमे रहितहुँ हम हुनक महिमासँ अपरिचित रही। आब हम ओहि अवधक प्रभावकें 'बुझलहुँ जे कोनहु जन्ममे जे केओ अवधमे निवास करैत अछि, से रामक भक्त अवश्य होइत अछि। गरुड़जी! ओ कलिकाल बड़ भयानक छल, स्त्री - पुरुष पापमे लीन रहैत छलाह, धर्मक नाश ओ सद्ग्रन्थक लोप भए गेल छल। ओहि युगमे धन आदिक लोभयँ धर्म कएल जाए लागल, पाखण्डकें पुण्य बुझल जाए लागल।'' तदुत्तर काकभुशुण्डीजी कलियुगक गुणक वर्णन करैत कहलैन्हि—"कलियुगमे एतेक दोष रहितहुँ गुणो बड़ पैघ छैक, कारण, एहि युगमे भगवानक गुणगान मात्रसँ मनुष्य भव-सागरक थाह पाबि जाइत अछि। एहि युगमे रामगुणगान मात्र अवलम्ब होइत अछि, योग, यज्ञ अथवा ज्ञान नहि। सब किछु छोड़ि जे श्रीरामक भजन करैत प्रेमपूर्वक हुनक गुणक गीत गबैत अछि, से सांसारिक क्लेशसँ सहसा त्राण पाबि जाइत अछि। एहने कलियुगमे हम कएक वर्ष धरि अयोध्यामे वास कएल। गरुड़जी! एक बेर ओतए बड़ पैघ अकाल पड़ल तँ अयोध्यासँ उज्जैन चल गेलहुँ, ततए कालक्रमेँ धन-सम्पत्ति अरजि श्री शिवजीक भक्ति कएल करी। उज्जैनमे परमार्थक-रहस्यक ज्ञाता सज्जन-स्वभावक एकटा ब्राह्मणक सेवा करैत रही, मुदा से कपटपूर्वक। ओ ब्राह्मण

महादेवक परम भक्त छलाह, मुदा भगवान् श्रीरामक निन्दक नहि छलाह। हे स्वामी ! ओ हमर उपरी नम्रता देखि हमरा श्रीशिवजीक मन्त्र दए कतेक कल्याणकारी उपदेश देल। हम शिवजीक मन्दिरमे जा कए ओहि मन्त्रक जप करए लगलहुँ, मुदा ताहिसँ अपनाकेँ बड़ पैघ शिवोपासक बूझि आओर अधिक अहङ्कारी भए गेलहुँ। हम हरि-भक्त ओ ब्राह्मणकेँ देखि द्वेषसँ जरए लागी तथा भगवान् विष्णुक बड़ पैघ द्रोही भए गेलहुँ। हमर गुरुदेव ब्राह्मण हमरा क्रोधी ओ दम्भी भेल जाइत देखि एक दिन हमरा बजाकए बुझबए लगलाह—'पुत्र ! लोक शिवजीक भक्ति एहि हेतुएँ करैत अछि जे श्रीरामसँ अविरल भक्ति हो। शिवजी ओ ब्रह्माजी सेहो श्रीरामक भजन करैत छथि, साधारण मनुष्यकेँ के कहए ? तथापि अहाँ हुनकासँ द्रोह कए सुख चाहैत छी ?' जखन गुरुजी शिवजीकेँ भगवान श्रीरामक भक्त कहल तँ हमरा बड़ तामस भेल। तखन अभिमानी ओ कुटिल स्वभावक हम गुरुजीसँ सेहो द्रोह करए लगलहुँ, मुदा गुरुजी एहि हेतु हमरा पर क्रोध नहि कए बारंम्बार उत्तम उत्तम ज्ञानक उपदेश दैत रहलाह। नीच पुरुष जकर आदर पबैत अछि, तकरहि अनादर करए लगैत अछि। धुआँ अग्निसँ उत्पन्न होइत अछि, मुदा ओएह धुआँ मेघक रूपमे परिणत भए ओहि अग्निकेँ मिझाए दैत अछि, तेहने हमर आचरण भेल। तेँ अधमक सङ्ग नहि करबाक चाही।

"एक दिन हम मन्दिरमे श्रीशिवजीक नामक जप करैत रही, तखनहिं गुरुजी ओतए पहुँचलाह। हम अभिमानक वशीभूत भए उठिकें हुनक प्रणाम नहि कएल। गुरुजी दयालु छलाह, तें हमर धृष्टताक हेतु किञ्चितो तामस नहि कएल। मुदा गुरुक अपमान करब बड़ पैघ पाप थिक। अतः महादेवजीकें से सह्य नहि भेलैन्हि। मन्दिरमे आकाशवाणी भेल—'रे मूर्ख! रे अभिमानी! तोहर गुरुजी ज्ञानसँ परिपूर्ण दयालु चित्तक छथुन्ह, तें ओ क्रोध नहि कएलथुन्ह। मुदा हम तोरा विरुद्ध नीति पर चलबाक कारणेँ शाप देबौक। तोहर बुद्धिमे पाप व्याप्त भए गेलौक अछि, तें तों अजगर साँप भए जो ओ बैसल रह।' गुरुजी शिवजीकें शाप दैत सूनि हाहाकार करए लगलाह, हमरा कँपैत देखि अत्यन्त दुःखी भेलाह ओ हाथ जोड़ि शिवजीक वन्दना आरम्भ कएल। हुनक स्तुतिसँ प्रसन्न भए शिवजी आकाशवाणी करैत वरदान मँगबाक हेतु कहलथिन्ह, तँ गुरुजी हुनकासँ वर मँगैत बजलाह—'प्रभो! यदि अहाँ हमरा पर प्रसन्न छी तँ हमरा अपन भक्ति दिअ तथा हे भगवन्! अहाँक मायाक वशीभूत भए जीव जड़ भए निरन्तर भ्रममे पड़ल बौआइत रहैत अछि, एहन दीन जन पर तामस नहि करू। हे दयालु शङ्करजी! आब एकरा पर दया कए एकर शाप जाहिसँ शीघ्र कटि जाइक, से करू।' परोपकारसँ युक्त गुरुजीक प्रार्थनाकेँ सूनि शिवजी 'एवमस्तु' कहैत

कहलाह—'यद्यपि ई बड़ पैघ पाप कएल अछि ओ ताहि हेतु तामस कए एकरा शाप देल अछि, तथापि अहाँक साधु-ताकेँ देखैत एकरा पर कृपा करबैक। हमर शाप तँ व्यर्थ नहि जाएत, एकरा एक हजार योनिमे जन्म लेबहिँ पड़तैक, मुदा मरबामे ओ जन्म लेबामे जे दुस्सह कष्ट होइत छैक, से एकरा नहि होएतैक' तखन शिवजी हमरा कहलैन्हि—'शूद्र! सुन, तोहर जन्म अयोध्यामे भेलहु, हमरहु सेवामे मन लगओलैँह। अतः अयोध्याक प्रभाव ओ हमर दयासँ तोरामे राम भक्ति उत्पन्न होएतौक। आब हमर सत्य-वचन सून, ब्राह्मणक सेवा करब भगवान्केँ प्रसन्न करब थिक। तेँ आबसँ तोँ कहिओ ब्राह्मणक अपमान नहि करबेँ, सन्तकेँ भगवान जकाँ बुझबेँ। इन्द्रक वज्र, हमर विशाल शूल, यमराजक काल-दण्ड तथा विष्णुक भयानक चक्रहुसँ जे नहि मरैत अछि, से ब्राह्मणसँ द्रोह कए भस्म भएजाइत अछि। ई विषय बूझि आचरण करबेँ तँ तोरा हेतु संसारमे कोनहु वस्तु दुर्लभ नहि होएतौक। तोरा एकटा आओर आशीर्वाद दैत छिऔक—तोहर गतिकेँ केओ रोकि नहि सकतौक।'

''श्रीशिवजीक वचन सूनि हर्षित भेल गुरुजी हमरा आश्वासन दए अपन घर चल गेलाह। कालक प्रेरणासँ हम विन्ध्याचलमे जाए साँप भए गेलहुँ। किछु समय बितला पर बिना कष्टेँ साँपक शरीरकेँ त्यागि देल, ओहिना जेना केओ पुरान वस्त्र छाड़ि नव वस्त्र पहिरैत अछि। गरुड़जी!

पहिना हम कतेक शरीर धारण कएल, मुदा हमर ज्ञान नहि गेल। हम जाहि कोनहु शरीरकेँ प्राप्त कएल, ताहि शरीरमे राम-भजन करैत छलहुँ, मुदा हमरा ई पश्चात्ताप सदैव होइत रहैत छल जे हम गुरुजीक अपमान कएल। अन्तिम देह हम धारण कएल एकटा ब्राह्मणक। ब्राह्मणक बालक रूपमे हम बच्चासबहिक सङ्ग मिलि श्रीरघुनाथजीक लीला कएल करी। पैघ भेलहुँ तँ पिताजी हमरा पढ़बए लगलाह, मुदा हमरा पढ़ब नीक नहि लगैत छल। हमर मनसँ समस्त सांसारिक वासना चल गेल छल, एकहिटा वस्तु नीक लगैत छल श्रीरामजीक चरणमे लीन रहब। गरुड़जी! अहीँ कहू, एहन के होएत जे कामधेनुकेँ छोड़ि गदहीकेँ चराओत? श्रीरामक चरणमे प्रेम-मग्न रहलाहसँ हमरा किछु नहि सोहाइत छल। पिताजी हमरा पढ़ा-पढ़ाकेँ हारि गेलाह।

"जखन माए-बाप मरि गेलाह तं हम श्रीरामक भजन करबाक निमित्त वनमे चल गेलहुँ। हम पैघ-पैघ मुनिक आश्रममे जाए हुनकालोकनिसँ श्रीरामक गुण ओ कथाक प्रसङ्ग जिज्ञासा करी ओ से सुनि आनन्दित होइ। महादेव-जीक कृपासँ हम जतए जाए चाही ततए चल जाइ, हमर कतहु रोक नहि छल। तेँ श्रीरामक गुणानुवाद सुनबाक हेतु जतए इच्छा होअए, ततए चल जाइ। हमरामे सन्तान, धन-सम्पत्ति ओ यशक किछिओ इच्छा नहि छल, हृदयमे एकहिटा

लालसा छल जे श्रीरामक चरण-कमलक दर्शन कए अपन जन्मकेँ सफल करी। मुनिलोकनि कहथि जे भगवान् तँ सर्वत्र स्थित छथि, मुदा मे निर्गुण-भावना हमरा नहि सोहाइत छल, हमर हृदयमे सगुण-ब्रह्मक प्रति भक्ति दिनानुदिन बढ़ले जाइत छल। श्रीगुरुजीक स्मरण होइतहि श्रीरामक चरणक प्रति प्रीति आओर अधिक प्रबल भेल जाइत छल ओ हुनक यश-गान गबैत बौआइत रहैत छलहुँ।

"एक दिन सुमेरु-पर्वतक शिखर पर गाछक छाया तर लोमशमुनिकेँ बैसल देखि हुनक चरण पर शिर नवाए अत्यन्त दीन वचनसे निवेदन कएल—'कृपानिधान! अपने सर्वज्ञ ओ सुजान थिकहुँ। भगवन्! हमरा सगुण-ब्रह्मक उपासनाक उपदेश दिअ।' तखन ओ मुनिवर श्रीरामक गुणक कथा कहि हमरा ब्रह्मज्ञानक अधिकारी बूझि ब्रह्मक उपदेश देबए लगलाह—'ब्रह्म अन्तर्यामी रूपमे रहि प्रेरणा दैत रहैत छथि, ओ कला, चेष्टा, नाम ओ रूपधँ रहित अनुभव-गम्य छथि; मन ओ इन्द्रियसँ अतीत छथि; निर्मल ओ विनाश-रहित छथि, विकाररहित, सीमातीत ओ सुखक राशि छथि।' एहिना विविध रीतिएँ ओ हमरा बुझओलैन्हि, मुदा हुनक निर्गुण-मत हमरा नीक नहि लागल। तखन पुनः हम हुनक चरण पर माथ टेकि हुनकासँ निवेदन कएल—'मुनिवर! हमरा सगुण-उपासनाक विषयमे कहल जाओ। रामभक्तिक पानि जे हमर मन माछ जकाँ लीन अछि, तखन

ओहिसँ कोना विलग भए सकैत अछि? मुनीश्वर! हमरा एहन उपदेश दिअ जाहिसँ हम श्रीरामकेँ अपन आँखिएँ देखि सकी। पहिने श्रीरामकेँ भरिआँखि देखिकए तखन निर्गुण-ब्रह्मक उपदेश सुनब।' मुदा हमर निवेदन सूनि मुनिवर सगुण-मतक खण्डन कए निर्गुण-मतक निरूपण करए लगलाह तँ हम हठपूर्वक सगुण-मतक महत्वक विषयमे कहए लगिऐन्हि। एहिसँ लोमशमुनिमे क्रोध उत्पन्न भए गेलैन्हि, ओ क्रोधित भए-भए ज्ञानक निरूपण करथि ओ हम श्रीरामक भक्तिमे विभोर भए-भए बारंबार सगुण-पक्षकेँ स्थापित करैत जाइ। तखन मुनिवर अत्यन्त कुपित भए बजलाह—'मूढ़! हम तोरा उत्तम शिक्षा दैत छिऔक, से तोँ नहि मानैत छेँ, हमरासँ विवाद करैत छेँ, तोँ सत्य-वचन पर विश्वास नहि कए कौआ जकाँ सबसँ डेराइत छेँ। शठ! जो, तोँ चाण्डाल पक्षी भए जो।' हम तपस्वीक शापकेँ स्वीकारि लेल; ओहिसँ हमरासं ने तँ दीनता आएल आ ने भय भेल। मुनिक शाप देतहिँ हम कौआ भए गेलहुँ। हुनक वन्दना कए हम श्रीरामक स्मरण करैत ओतएसँ ऊड़ि विदा भए गेलहुँ। गरुड़जी! लोमशजी हमरा शाप दए देलैन्हि, ताहिमे हुनक कोनहु दोष नहि छल। श्रीराम मुनिवरक बुद्धिकेँ दूषित कए हमर परीक्षा लए रहल छलाह।"

एतबा कहि काकभुशुण्डीजी गरुड़जीकेँ रामचरितमानसकेँ प्राप्त करबाक विषयमे कहए लगलथिन्ह—"खगेश गरुड़जी!

भगवान् श्रीराम हमरा मन, वचन ओ कर्मसँ अपन भक्त बूझि लोमशजीक बुद्धिकेँ घुराए देलथिन्ह। तखन ओ हमरामे राम-चरितक प्रति अटल विश्वास देखि पछताइत आदरपूर्वक बजा कए हमरा अनेक प्रकारेँ सन्तुष्ट कएल तथा राम-मन्त्रक दीक्षा देल। ओएह कृपासागर मुनि हमरा बालक-रूपमे श्रीरामक भक्ति करबाक शिक्षा देल जे हमरा बड़ नीक लागल, जकरा विषयमे गरुड़जी ! हम पहिनहिँ कहि चुकल छी।

"मुनिवर लोमशजी किछु समय हमरा अपनहिँ ओहिठाम राखि राम चरित-मानसक कथा सुनाओल। तदुत्तर हमरा सुन्दर वचनमे कहलैन्हि—"तात ! हम ई कथा शिवजीसँ सुनने छलहुँ। अहाँकेँ श्रीरामक परम भक्त जानि सबटा कथा कहि देलहुँ।' एतबा कहि अपन कर-कमलसँ हमरा माथकेँ छुबैत अशीर्वाद देलैन्हि—'आब हमर आशीर्वादसँ अहाँक हृदयमे सदैव एक रङ्ग राम-भक्तिक वास रहत एवं जाहि आश्रममे भगवानक नाम लैत अहाँ रहब, तकर एक योजन धरि अविद्या-माया नहि व्याप्त होएत। काल, कर्म, गुण ओ स्वभाव-जनित दुःख अहाँकेँ नहि होएत तथा अनेको प्रकारक गुप्त अथवा प्रकट राम-विषयक रहस्य अहाँ बिन परिश्रमहिँ बूझि जाएब। श्रीरामक चरणमे अहाँक अनुराग सदैव नित नूतन बनल रहत। अहाँ जे इच्छा करब, से भगवान्क कृपासँ दुर्लभ नहि होएत।' ई धीर-मतिक

गरुड़जी ! एहि प्रकारें मुनिवरक आशीर्वाद देतहिँ आकाशवाणी भेल—'हे ज्ञानी मुनि ! ई हमर कर्म, मन ओ वचनसँ परम भक्त थिक।' आकाशवाणी सूनि हमरा बड़ हर्ष भेल, हम श्रीरामक प्रेममे मग्न भए गेलहुँ। तदुत्तर मुनिवर लोमशजीकेँ बारंबार प्रणाम कए तथा हुनकासँ आज्ञा लए हम एहि आश्रममे चल अएलहुँ। हे पक्षिराज ! एतए रहैत-रहैत हमरा सताइस कल्प बीति गेल अछि। एतए हम सदैव श्रीरामक गुणगान करैत रहैत छी, जकरा सज्जन पक्षी-सब आदरपूर्वक सुनैत छथि। जखन-जखन भगवान् भक्त-लोकनिक मनोरञ्जनार्थ अवधपुरीमे मनुष्यक रूपमे जन्म लैत छथि, तखन-तखन हम अयोध्यामे रहैत भगवान् श्रीरामक शिशु-लीलाकेँ देखैत छी। हे खगेश ! हम अहाँकेँ सबटा कहि देलहुँ जे किएक हम काक-शरीर पाओल। श्रीरामक भक्तिक महिमा अपरम्पार अछि। हमरा एहि शरीरसँ स्नेह अछि, कारण, इएह शरीर पाबि हमरा श्रीरामक चरणमे स्नेह भेल। हम हठ करैत भक्त-पक्षमे दृढ़ रहलहुँ जाहिसँ महर्षि हमरा शाप दए देलैन्हि, मुदा एहीसँ हमरा एहन वर प्राप्त भेल जे मुनिलोकनिक हेतु सेहो दुर्लभ अछि। भक्तिक प्रताप एहीसँ बुझल जाए सकैत अछि। अतः जे एहन भक्तिकेँ छोड़ि ज्ञान प्राप्त करबाक हेतु परिश्रम करैत अछि, से ओहने भेल जेना केओ दूधक हेतु कामधेनुकेँ त्यागि आककेँ तकैत बौआइत रहए।"

पक्षिराज गरुड़जी काकभुशुण्डीजीसँ एहि प्रकारेँ ओ कथा सुनल जे कोना ओ श्रीरामक शरणापन्न भए मुनि दुर्लभ वर प्राप्त कएल। तत्पश्चात् ओ भक्तशिरोमणि हुनकहिसँ भक्तिक महिमा सूनि बड़ प्रसन्न होइत बजलाह—"प्रभो! अहाँक दयासँ हमर सब शङ्का, शोक, मोह ओ भ्रम मेटाए गेल। अहाँक मुँहे श्रीरामक गुणगान सूनि हमरा बड़ शान्ति भेटल। मुदा वेद-पुराणमे कहल गेल अछि जे ज्ञान दुर्लभ थिक। लोमशजी सेहो पहिने सएह कहलैन्हि, मुदा तकर आदर अहाँ नहि कएल। हे कृपानिधान! हमरा कहल जाओ जे ज्ञान ओ भक्तिमे कतेक अन्तर अछि?"

उरगारि श्रीगरुड़जीक प्रश्न सूनि सुजान काकभुशुण्डी जी कहलथिन्ह—"ज्ञान ओ भक्तिमे कोनो विशेष अन्तर नहि अछि, दूहूसँ संसार-जनित दुःखक नाश होइत अछि। मुदा हे पक्षिराज! मुनिलोकनि दूहू बीचक किछु अन्तरक वर्णन करैत छथि, से सूनू। ज्ञान, विज्ञान, योग ओ वैराग्य पुलिङ्ग थिक। जे पुरुष वैरागी ओ धीर बुद्धिक अछि, से स्त्रीकेँ त्यागि सकैत अछि, विषयसबहिक वशीभूत कामी नहि। माया ओ भक्ति दूहू स्त्रीलिंग थिक, तेँ माया ओ भक्ति एक दोसरासँ मोहित नहि होइत अछि। रघुवीर श्रीरामकेँ भक्ति प्रिया थिकैन्हि, वेचारी माया तँ नर्तकी थिक। श्रीराम भक्तिसँ प्रसन्न रहैत छथि, तेँ माया भक्तिसँ भयभीत रहैत अछि। एही कारणेँ बुद्धिमान मुनिगण

भक्तिक याचना करैत छथि। ज्ञान ओ भक्तिमे आओर
भेद अछि, सेहो सूनू। जीव ईश्वरक अंश थिक, चेतन,
निर्मल ओ स्वाभाविक सुखक राशि थिक, एकर नाश नहि
होइत छैक। एहन जे जीव अछि, से यदि मायाक वशीभूत
भेल तँ ओ तोता ओ बानर जकाँ बान्हल भए जाइत अछि।
तखन ओ जीव अपन स्वभावकेँ बिसरि संसारी भए जाइत
अछि। वेद-पुराण मायाक बन्धनकेँ छोड़एबाक अनेक
उपायक चर्चा कएने छथि, मुदा वस्तुतः ओहिसँ बन्धन
सोझराइत नहि अछि, प्रत्युत ओ आओर अधिक ओझराइत
जाइत अछि। ई बन्धन तखनहिँ छुटैत अछि, जखन हृदयमे
भगवानक प्रति वास्तविक श्रद्धा उत्पन्न होइत अछि।" तदुत्तर
काकभुशुण्डीजी ज्ञान द्वारा सांसारिक दुःखक नाशक वर्णन
करैत कहलथिन्ह—"गरुड़जी! ज्ञान-मार्ग तरुआरिक धारक
समान थिक, जाहि परसँ लोक कखनहुँ खसि सकैत अछि।
यदि बिना कोनहु विघ्न-बाधाक ई मार्ग पार कएल भए गेल तँ
निश्चय मोक्ष प्राप्त होइत अछि। एकर विपरीत श्रीरामक
भजन करब बड़ सुलभ अछि, एहिसँ इच्छा नहि रहितहुँ लोककेँ
मुक्ति सहजहिँ प्राप्त भए जाइत छैक। एही कारणेँ बुधियार
भगवान्क भक्त मुक्तिक अनादर कए भक्तिक इच्छा करैत
छथि। पक्षिराज! सेवक-सेव्य भावक बिना संसाररूपी
समुद्रकेँ पार नहि कएल जाए सकैत अछि, ई सिद्धान्त निश्चय
कए श्रीरामक चरण-कमलक भजन कर्तव्य थिक। राम-

भक्ति सुन्दर चिन्तामणि थिक, जे जकर मनमे बसि गेल, तकर हृदय निरन्तर प्रकाशित रहैत अछि। एहि प्रकाशकें ने घी चाही ने तेल, एकरा मोहरूपी बसातो नहि मिझाए सकैत अछि। जकर हृदयमे श्रीरामक भक्तिरूपी चिन्तामणिक वास भए गेल, तकरा सपनहुमे किञ्चितो क्लेश नहि होइत छैक। संसारसे ओएह व्यक्ति चतुर छथि जे एहि मणिकें प्राप्त करबाक यत्न करैत छथि। मुदा ई मणि भगवान्क कृपाक बिना नहि भेटि सकैत अछि। श्रीरामक कृपा प्राप्त करब बड़ सोझ अछि, तथापि भाग्यहीन मनुष्य से नहि करैत अछि। वेद-पुराणरूपी पर्वतमे नाना प्रकारक रामकथा रूपी खान भरल अछि। सज्जन व्यक्ति ओहि खानक भेद जनैत छथि। ओ ज्ञान ओ वैराग्य रूपी नेत्रसँ देखि अपन बुद्धिरूपी कोदारिसँ ओहि खानकें खुनि भक्तिरूपी मणि प्राप्त कए लैत छथि। प्रभो! हमरा तं एतेक दूर धरि विश्वास अछि जे श्रीरामसँ बढ़िकें हुनक भक्त होइत छथि। यदि श्रीराम समुद्र छथि तँ सज्जन मेघ छथि, यदि श्रीराम चाननक गाछ छथि तं हुनक धीरबुद्धि भक्त पवन छथि जे हुनक सुगन्धिकें चारू कात पसारैत रहैत छथि। सज्जनक संगतिक बिना राम-भक्ति नहि पाओल जाए सकैत अछि। हे खगेश! यदि विचारिकें देखब तँ स्पष्ट भए जाएत जे वेद क्षीरसागर, ज्ञान मन्दराचल ओ सन्तलोकनि देवता थिकाह जे समुद्रकें मथि श्रीरामक कथारूपी अमृत बहार करैत छथि जाहिमे

भक्तिक मधुरता रहैत अछि। जे वैराग्यरूपी ढालिसँ अपन रक्षा करैत ज्ञान-रूपी तरुआरिसँ मद-लोभ-मोह-रूपी शत्रु-सभकेँ मारि विजय प्राप्त करैत अछि, सएह हरिभक्त थिक।"

काकभुशुण्डीजीसँ ज्ञान ओ भक्तिक प्रसङ्ग सारगर्भित वचन सूनि पक्षिराज प्रेमपूर्वक बजलाह—"दयासागर! हमरा अपन सेवक बूझि, सात गोट प्रश्न जे हम करैत छी, तकर उत्तर देल जाओ। हे नाथ! सबसँ पहिने कहल जाओ जे सबसँ दुर्लभ शरीर कोन थिक? तदुत्तर कहल जाओ जे सबसँ पैघ दुःख ओ सुख की थिक? सन्त-असन्तक मर्म अहाँ जनैत छी, तनिक स्वभावक वर्णन कएल जाओ। कोन पुण्य सबसँ अधिक महत्वपूर्ण अछि ओ कोन पाप सबसँ विकराल अछि? मानस-रोग की थिक, सेहो हमर बुझा कए कहल जाओ।"

गरुड़जीक प्रश्न सूनि सब मर्मक ज्ञाता काकभुशुण्डीजी उत्तर दैत कहए लगलथिन्ह—"तात! हम सब प्रश्नक उत्तर कहैत छी, अहाँ आदर ओ प्रेमसँ सूनू! मनुष्यक शरीरक समान दोसर कोनहु शरीर नहि होइत छैक, कारण, एहि शरीर धारण कए जीव नरक, स्वर्ग अथवा मोक्ष प्राप्त करैत अछि। जे मनुष्यक शरीर धारण कए भगवान श्रीरामक भजन नहि करैत अछि, विषयमे आसक्त भेल से मन्द नहि, मन्दतर अछि।

संसारमे दरिद्रक दुःखक समान दोसर दुःख नहि होइत

अछि, सन्तक समागमक समान दोसर सुख नहि अछि। हे पक्षिराज गरुड़! सन्त स्वभावहिसँ परोपकारी होइत छथि तथा दोसरक हितक हेतु कष्ट धरि सहैत छथि; मुदा दुर्जन दोसराकें कष्ट देबाक हेतु कष्ट सहैत छथि। संत भोजपत्रक गाछ जकाँ दोसराकें नीक करबाक हेतु पैघसँ पैघ कष्ट सहि लैत छथि, मुदा दुर्जन सोन जकाँ दोसराकें बन्हैत अछि तथा अपन छाल खिचबाए विपत्तिमे पड़ि मरि जाइत अछि। गरुड़जी! खल अपन लाभ नहि होइतहुँ साँप ओ मूस जकाँ दोसराक सम्पत्तिकें नष्ट करैत ओहिना मरैत अछि जेना मेघसँ वर्फक पाथर खसि खेतीकें चूर-चूर कए अपनहुँ गलि जाइत अछि।

"अहिंसा सबसँ पैघ धर्म ओ परनिन्दा सबसँ पैघ पाप थिक। महादेव ओ गुरुक जे निन्दा करैत अछि से बेङ भए जन्म लैत अछि आओर ब्राह्मणक जे निन्दा करैछ, से अनेक नरकक भोग करैत कौआ भए जन्मैत अछि। संतक निन्दक उल्लू होइत अछि, जकरा मोह रूपी राति नीक लगैत छैक, ओकर ज्ञान रूपी सूर्य सदैव डूबले रहैत छथिन्ह। मूर्ख व्यक्ति सभक निन्दा करैत छथि ओ रतिचर होइत छथि।

"तात गरुड़जी! आब मानस-रोगक विषयमे सूनू, जाहिसँ सब केओ दुःख उठबैत अछि। मोह सब व्याधिक मूल थिक ओ जाहिसँ लोक बड़ पीड़ित होइत अछि। काम वात थिक, लोभ कफ थिक एवं क्रोध पित्त थिक जे नित्य छातीकें

सबटा सन्देह मेटाए गेल। अहाँ हमरा सदैव अपन सेवक बुझैत रहब।" पक्षिराज एहि प्रकारेँ बारंबार काकभुशुण्डीजीकेँ विनय-वचन कहए लगलाह।

तदुत्तर गरुड़जी काकभुशुण्डीजीक चरणकेँ अपन माथसँ स्पर्श कए तथा बेर-बेर वन्दना कए श्रीरामकेँ अपन हृदयमे धारण कएने वैकुण्ठ चल गेलाह।

जाहि प्रकारेँ काकभुशुण्डीजी श्रीरामक शरणापन्न भए दुर्लभ वर प्राप्त कएल ओ जाहि प्रकारेँ गरुड़जी हुनक शरणापन्न भए श्रीरामचरित्रक सार-तत्वकेँ बुझल, ताही प्रकारेँ आचरण कए लोक सांसारिक माया-जालकेँ काटि सकैत अछि। एहि संसारमे भगवान्‌क शरणापन्न बिन भेने यदि केओ सुख चाहैत छथि, तँ से मृगतृष्णा मात्र थिक।

